उपयोगी साहित्य-माला ३
फलित
सूत्र
सार रूप में फलित ज्योतिष

उपयोगी साहित्य माला–3

फलित सूत्र

(NATAL ASTROLOGY)

Based on : How & Why

लेखक

ज्योतिर्विद् जगन्नाथ भसीन

(भूतपूर्व प्रधान, स्वामी रामतीर्थ मिशन, दिल्ली)

1. 'व्यवसाय का चुनाव और आपकी आर्थिक स्थिति', 2. 'ज्योतिष और रोग,' 3. 'चुने हुए ज्योतिष योग', 4. 'उत्तर कालामृत', 5. 'दशाफल रहस्य', 6. 'चन्द्रकला नाड़ी,' 7. 'अनिष्टग्रह', 8. 'गोचर विचार', 9. 'ज्योतिष शब्दकोष' (अंग्रेजी), 10. प्रश्नमार्ग आदि के प्रणेता

रंजन पब्लिकेशन्स

16, अंसारी रोड़, दरियागंज

नयी दिल्ली–110002

दो शब्द

'फलित सूत्र' नाम की इस पुस्तक में जातक के सम्बन्ध में फलित ज्योतिष की बातों का विवेचन यद्यपि सूत्ररूप में अर्थात् संक्षेप में किया गया है तथापि इस बात का ध्यान रखा गया है कि जहां तक सम्भव हो विषय-प्रतिपादन में कैसे और क्यों (How and Why) अर्थात् कारण-कार्य भाव की अवहेलना न होने पाए। प्रत्येक विषय का हेतु तथा विज्ञान (Logic and Science) के अनुसार ही प्रतिपादन किया है। अतः कोई ग्रह किसी परिस्थिति में जो फल देता है उसको हमने महर्षि पराशर द्वारा निर्दिष्ट मौलिक नियमों के, ग्रहों के मौलिक स्वरूप के एवं काल पुरुष आदि ज्योतिषशास्त्र सम्मत सिद्धान्तों के आधार पर ही दर्शाने का प्रयास किया है।

मौलिक तथा वैज्ञानिक पद्धति का अनुसरण करते हुए हमने ग्रहों के स्वरूप का राशियों के स्वरूप तथा नक्षत्रों के स्वरूप से समन्वय करने का प्रयत्न किया है। इस प्रकार विषय पर एक व्यापक दृष्टिकोण तथा प्रकाश पड़ना सम्भव हो गया है।

बारह भावों तथा अन्य **वैयक्तिक ज्योतिष** (Natal Astrology) से सम्बद्ध प्रायः सभी मुख्य विषयों का विवरण इस पुस्तक में दे दिया है जिसकी सहायता से प्रत्येक पाठक जीवन में आने वाली सभी समस्याओं पर आलोक प्राप्त कर सकते हैं।

प्रत्येक लग्न के प्रत्येक भाव में आने वाली प्रत्येक राशि तथा उसके स्वामी आदि के सम्बन्ध में संक्षिप्त विवरण भी दिया गया है जिसके आधार पर व्यक्ति अपनी कुण्डली के बारह भावों के फल का अनुमान सहज ही में कर सकें।

व्यक्ति की समस्याओं पर प्रकाश डालते हुए हमने इस बात का पूरा ध्यान रखा है कि वे आज जिस आधुनिक रूप में हमारे सामने आती हैं उनका उसी रूप में निर्देश किया जाए; आज विदेश यात्रा, प्रेम-विवाह, तलाक, लाटरी, परिवार नियोजन आदि नये रोचक विषय जीवन में प्रविष्ट होचुके हैं ।सर्व-साधारण की उत्सुकता के ऐसे विषयों का यथास्थान उल्लेख करके पुस्तक को सर्वोपयोगी बनाने का प्रयत्न किया है ।

जो पाठक ज्योतिष में और गंभीर अध्ययन करना चाहें उन्हें हमारी अन्य प्रकाशित पुस्तकों का अध्ययन उपयोगी रहेगा ।

भाषा की सरलता तथा शैली की रोचकता का पूरा ध्यान रखते हुए ज्योतिषशास्त्र को समझने तथा समझकर उसके महत्त्व की छाप मन पर बैठाने में हमारी यह रचना सफल सिद्ध हो, इस आशा से पाठकों की सेवा में समर्पित है ।

-जगन्नाथ भसीन

विषय-सूची

Scanned by CamScanner

1. सर्व साधारण के लिए विषय प्रवेश

1. जन्म समय पर आकाश में ग्रहों इत्यादि की जो स्थिति होती है जन्म कुण्डली उस स्थिति का एक नक्शा है। जो भी कोई इस संसार में उत्पन्न होता है वह जिस समय उत्पन्न होता है उस समय की प्रकृति के गुण-दोषों को लेकर ही उत्पन्न होता है, क्योंकि कोई वस्तु प्रकृति के गुण-दोषों से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकती (यद्ब्रह्माण्डे तत्पिण्डे)।

2. उत्तर भारत में जन्म कुण्डली का जो स्वरूप है वह श्रीमती इन्दिरा गांधी की कुण्डली संख्या 1 से स्पष्ट है।

कु० सं० 1

3. प्रत्येक कुण्डली के संबंध में ज्योतिषियों में यह प्रथा (Convention) प्रचलित है कि ऊपर के तीन कोष्ठों के मध्य में जो कोष्ठ है उसे लग्न कहते हैं। इस पद्धति में राशियां बदलती रहती हैं, परन्तु लग्न को इसमें स्थिर रखा जाता है। जैसे श्रीमती इन्दिरा गांधी की जन्म कुण्डली में लग्न के खाने में 4 का अंक पड़ा है। इसका अर्थ यह हुआ कि उनके जन्म समय पूर्वीय क्षितिज (Eastern Horizon) पर चार नम्बर की राशि अर्थात् कर्क उदय हो रही थी। राशियां बारह हैं।

उनके नाम आगे दिए गए हैं। परन्तु प्रथा यह है कि लग्न के खाने में राशि का नाम न लिखकर उस राशि के लिए नियत अंक दे दिया जाता है।

लग्न की राशि के अंक को लग्न स्थान में लिखकर उसके आगे घड़ी की सुई की चाल के विरुद्ध क्रम से बाकी के अंक लिख दिए जाते हैं और पंचांग से देखकर जिस-जिस राशि में जो-जो ग्रह पड़ा होता है, उसको उस राशि में कुण्डली में लिख देते हैं। इस प्रकार कुण्डली बन जाती है। राशियां निम्नलिखित हैं––

4. नाम राशि	राशि को प्रदर्शित करने वाला अंक	राशि का स्वामी ग्रह
मेष	1	मंगल
वृषभ	2	शुक्र
मिथुन	3	बुध
कर्क	4	चन्द्र
सिंह	5	सूर्य
कन्या	6	बुध
तुला	7	शुक्र
वृश्चिक	8	मंगल
धनु	9	गुरु
मकर	10	शनि
कुम्भ	11	शनि
मीन	12	गुरु

5. ग्रह–– हमारे पूर्वजों को परीक्षण तथा अनुसंधान द्वारा ग्रहों के स्वरूप का ज्ञान था। संसार की कोई भी वस्तु हो–– चाहे वह शरीर से सम्बन्ध रखती हो, भौतिक पदार्थों से, बुद्धि से या राज्य से––उसका प्रतिनिधित्व कोई न कोई ग्रह करता है। जैसे–– पिता, आंख, हड्डी, आत्मा, राज्य, हृदय आदि का विचार कुण्डली में सूर्य की स्थिति आदि देखकर किया जाता

है, सूर्य इन सबका प्रतिनिधि है । माता, रक्त, मन, कामनाएं, शीघ्रगति, फेफड़े आदि का विचार चन्द्र की स्थिति आदि से किया जाता है । चन्द्र इन सबका प्रतिनिधि अथवा कारक है । छोटा भाई, साहस, रक्षा विभाग, चोरी, अत्याचार, पाप, चोट, मांस आदि का मंगल से; मंगल इन सब वस्तुओं का कारक है । त्वचा, सांस की नली, बुद्धि, विचार, अन्तड़ियां, विद्या, लिखना–पढ़ना आदि का विचार बुध द्वारा किया जाता है; बुध इन वस्तुओं का कारक अथवा प्रतिनिधि है । ज्ञान, पेट, पांव, राज्य–कृपा, धन, बेटे, बड़े भाई, पति आदि का विचार गुरु से; स्त्री, व्यभिचार, मुख, मूत्रेन्द्रिय, वीर्य, विलास, राग, रंग आदि का शुक्र से, नसों (Nerves) के रोग, दीर्घकाल, नौकरी, श्रम, टांगों आदि का विचार शनि द्वारा किया जाता है । राहु के गुण–दोष (कारकत्व)शनि की भांति और केतु के गुण–दोष (कारकत्व) मंगल की भांति हैं । क्योंकि राहु तथा केतु छाया-ग्रह हैं, वे अपनी स्वतंत्र सत्ता नहीं रखते ।

6. ऊपर पैरा नम्बर 4 में राशियां और उनके स्वामी दिए गए हैं । जब हम कहते हैं कि अमुक राशि का अमुक स्वामी है; जैसे–– मेष राशि का स्वामी मंगल है तो इसका तात्पर्य केवल इतना ही होता है कि मेष राशि में जो गुण विद्यमान हैं उनको मंगल के गुणों जैसा, समझना चाहिए । इसी प्रकार 'शुक्र वृषभ राशि का स्वामी है,' इस वाक्य का अर्थ है कि वृषभ राशि के गुण–दोष बिल्कुल शुक्र जैसे हैं । निष्कर्ष यह निकला कि प्रत्येक राशि (Sign) के अपने स्वतन्त्र गुण–दोष हैं और ज्योतिष की परिभाषा में उन गुणों तथा दोषों की अभिव्यक्ति हम यह कहकर करते हैं कि अमुक राशि का अमुक स्वामी है (जो उस राशि के गुण–दोषों का प्रतीक है) ।

7. जिस प्रकार राशियां एक दूरी का मापदण्ड हैं उसी प्रकार नक्षत्र भी दूरी के मापदण्ड हैं । राशि में 30 अंश होते हैं, क्योंकि एक राशि कुल चक्र अर्थात् 360 अंशों का बारहवां भाग है । इसी प्रकार एक नक्षत्र में 13 अंश 20 कला होती हैं, क्योंकि एक नक्षत्र, चक्र अर्थात् 360 अंशों का सत्ताईसवां भाग होता है । नक्षत्रों की संख्या 27 होना इसमें कारण है । अब जिस प्रकार राशियों के अपने गुण–दोष होते हैं जिनको ग्रह अपने गुण–दोषों द्वारा जतलाते

हैं इसी प्रकार प्रत्येक नक्षत्र का भी स्वामी एक ग्रह होता है जो उस नक्षत्र के गुण-दोषों का प्रतीक होता है। नक्षत्र और उनके स्वामी इस प्रकार हैं–

नक्षत्र	रा. अं. क.	से	रा. अं. क.	तक	स्वामी ग्रह
अश्विनी	0-00-00	से	13-20-00	,,	केतु
भरणी	0-13-20	से	26-40-00	,,	शुक्र
कृतिका	0-26-40	से	1-10-00	,,	सूर्य
रोहिणी	1-10-0	से	1-23-20	,,	चन्द्र
मृगशिरा	1-23-20	से	2-06-40	,,	मंगल
आर्द्रा	2-06-40	से	2-20-00	,,	राहु
पुनर्वसु	2-20-00	से	3-03-20	,,	गुरु
पुष्य	3-03-20	से	3-16-40	,,	शनि
आश्लेषा	3-16-40	से	4-00-00	,,	बुध
मघा	4-00-00	से	4-13-20	,,	केतु
पू. फा.	4-13-20	से	4-26-40	,,	शुक्र
उ. फा.	4-26-40	से	5-10-00	,,	सूर्य
हस्त	5-10-0	से	5-23-20	,,	चन्द्र
चित्रा	5-23-20	से	6-06-40	,,	मंगल
स्वाती	6-06-40	सें	6-20-00	,,	राहु
विशाखा	6-20-0	से	7-03-20	,,	गुरु
अनुराधा	7-03-20	से	7-16-40	,,	शनि
ज्येष्ठा	7-16-40	से	8-00-00	,,	बुध
मूल	8-00-00	से	8-13-20	,,	केतु
पूर्वाषाढ़ा	8-13-20	से	8-26-40	,,	शुक्र

उत्तराषाढ़ा	8-26-40	से	9-10-00	,,	सूर्य
श्रवण	9-10-00	से	9-23-20	,,	चन्द्र
धनिष्ठा	9-23-20	से	10-06-40	,,	मंगल
शतभिषा	10-06-40	से	10-20-00	,,	राहु
पू. भाद्रपद	10-20-00	से	11-03-20	,,	गुरु
उ. भाद्रपद	11-03-20	से	11-16-40	,,	शनि
रेवती	11-16-40	से	12-00-00	,,	बुध

8. पैरा दो में श्रीमती इन्दिरा गांधी की कुण्डली संख्या 1 दी है। आइए, अभ्यास रूप से इस कुण्डली में राशियों के स्वामियों तथा उनकी स्थिति के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करें। लग्न अथवा प्रथम भाव में 4 अंक पड़ा है। इसका अर्थ यह है कि लग्न में 4 नम्बर की राशि अर्थात् कर्क राशि पड़ी है। कर्क राशि का स्वामी चन्द्र है (देखिए पैरा 4), जो लग्न से सातवें स्थान में मकर राशि का होकर स्थित है। गणना करने का प्रकार यह है कि जिस भाव से जिस भाव तक गिनना हो उन दोनों को गणना में सम्मिलित करना चाहिए। दूसरे भाव में सिंह राशि है और उसमें मंगल पड़ा है। दूसरे भाव का स्वामी सिंह राशि का स्वामी सूर्य है, जो पंचम भाव में बुध के साथ पड़ा है। तीसरे भाव का स्वामी, कन्या राशि का स्वामी बुध है, जो कि पंचम भाव में ही सूर्य के साथ पड़ा है। चतुर्थ भाव का स्वामी शुक्र है, क्योंकि इस भाव में तुला राशि है और वह शुक्र छठे भाव में, धनु राशि में राहु के साथ पड़ा है। पंचम भाव में वृश्चिक राशि है। इस भाव का स्वामी इसीलिए मंगल हुआ जो द्वितीय भाव में सिंह राशि का होकर स्थित है। छठे भाव में धनु राशि है। अतः इस भाव का स्वामी गुरु है जो कि एकादश भाव में वृषभ राशि का होकर पड़ा है। सप्तम स्थान का स्वामी शनि है, क्योंकि यहां मकर राशि पड़ी हुई है। सप्तमेश शनि लग्न में कर्क राशि का होकर पड़ा है, अष्टम स्थान में कुम्भ राशि है। अतः इस स्थान का स्वामी पुनः शनि होता है जो प्रथम स्थान में कर्क राशि का होकर पड़ा है। नवम स्थान का स्वामी

गुरु एकादश स्थान में वृषभ राशि का होकर पड़ा है । दशम भाव का स्वामी मंगल द्वितीय स्थान में सिंह राशि का होकर पड़ा है । एकादश भाव का स्वामी शुक्र छठे भाव में धनु राशि के राहु के साथ है । द्वादश भाव का स्वामी बुध पंचम भाव में सूर्य के साथ वृश्चिक राशि में है ।

9. **ग्रहों की दृष्टि**––प्रत्येक ग्रह जिस स्थान अर्थात् भाव में स्थित होता है वहां से सप्तम स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखता है, अर्थात् उस स्थान पर अपना पूर्ण प्रभाव डालता है । यह नियम सब ग्रहों के लिए एक समान है । इस दृष्टि के अतिरिक्त कुछ ग्रहों की विशेष दृष्टि भी है । अर्थात् मंगल की दृष्टि अथवा प्रभाव जहां मंगल स्थित हो वहां से चतुर्थ तथा अष्टम भाव पर भी पड़ता है । गुरु की दृष्टि अथवा प्रभाव जिस भाव में गुरु स्थित हो वहां से पंचम तथा नवम भी पड़ता है । इसी प्रकार शनि की दृष्टि अथवा प्रभाव, जिस स्थान में शनि स्थित हो वहां से तृतीय तथा दशम भाव पर भी पड़ता है । राहु तथा केतु की दृष्टि उनके स्थानों से पंचम तथा नवम स्थानों पर पड़ती है (सुतमदननवान्त्ये पूर्णदृष्टिं तमस्य, युगलदशमगेहे चार्धदृष्टिं वदन्ति––पराशर) ।

10. जैसा ग्रह का स्वभाव है वैसा ही उसकी दृष्टि का प्रभाव पड़ता है । शनि, मंगल, सूर्य तथा राहु नैसर्गिक रूप से पापी माने जाते हैं । जिस भाव पर अथवा जिस ग्रह पर इनकी दृष्टि पड़ती है उस भाव अथवा ग्रह आदि से प्रदर्शित वस्तु अथवा व्यक्ति की जीवन आदि की हानि होती है । शुक्र तथा गुरु नैसर्गिक शुभ ग्रह माने गए हैं । इनकी दृष्टि जिस भाव, ग्रह आदि पर पड़ती है उसके जीवन आदि की वृद्धि होती है । चन्द्र कभी शुभ कभी पापी होता है, जितना यह सूर्य के समीप होता है उतना ही निर्बल होता जाता है । सूर्य के 6 तिथि इधर अर्थात् शुक्ल पक्ष में और 6 तिथि उधर अर्थात् कृष्ण पक्ष में, चन्द्र निर्बल, पापी तथा अशुभ हो जाता है । बुध पापी ग्रहों के साथ पापी और शुभ ग्रहों के साथ शुभ माना जाता है । राहु तथा केतु की स्वतन्त्र दृष्टि अशुभ फलदायक है, जब ये छाया ग्रह शुभ ग्रहों के प्रभाव में हों तो उनकी दृष्टि में अधिक अशुभता नहीं होती ।

11. दृष्टि अभ्यास--ग्रहों की दृष्टि का अभ्यास भी पैरा २ में दी गई श्रीमती इन्दिरा गांधी की कुण्डली संख्या 1 से कीजिए। यहां सूर्य पंचम भाव में स्थित होकर अपने भाव से सप्तम अर्थात् एकादश भाव, वृषभ राशि तथा गुरु ग्रह सब को पूर्ण सप्तम दृष्टि से देखता है। सूर्य चूंकि क्रूर ग्रह है, अतः इस की बड़े भाई के स्थान (एकादश) पर तथा बड़े भाई के कारक गुरु पर दृष्टि बड़े भाई के जीवन के लिए हानिकारक है। अतः इनका बड़ा भाई नहीं रहा। चन्द्र सप्तम भाव में स्थित होकर अपने से सप्तम अर्थात् लग्न भाव को, कर्क राशि को तथा शनि ग्रह को पूर्ण दृष्टि से प्रभावित कर रहा है। 'यो या भावः स्वामियुक्तो दृष्टो वा तस्य तस्यास्ति वृद्धिः' के नियमानुसार लग्न प्रदर्शित आयु, मान, धन, स्वास्थ्य राज आदि की वृद्धि कर रहा है। मंगल द्वितीय भाव में स्थित है। वहां से पंचम भाव को तथा उसमें स्थित वृश्चिक राशि को तथा सूर्य एवं बुध को चतुर्थ पूर्ण दृष्टि से देखता है। यहां भी उपर्युक्त नियम 'यो यो भावः स्वामियुक्तो दृष्टो वा तस्य तस्यास्ति वृद्धिः' लागू होता है, क्योंकि यहां भी मंगल अपनी राशि वृश्चिक को देखता है, फलस्वरूप पंचम भाव से प्रदर्शित मन्त्रणा शक्ति, बुद्धि, शक्ति आदि शुभ गुणों की वृद्धि कर रहा है। वही मंगल अपनी सप्तम दृष्टि से अष्टम स्थान को और अष्टम दृष्टि से नवम स्थान को देख रहा है। गुरु एकादश भाव में बैठकर तृतीय भाव को तथा उसमें स्थित कन्या राशि को देखता है। गुरु अपनी सप्तम दृष्टि से पंचम भाव तथा उसमें स्थित वृश्चिक राशि को तथा सूर्य तथा बुध ग्रहों को देखता है। इसी प्रकार गुरु अपनी नवम दृष्टि से सप्तम भाव को तथा वहां स्थित मकर राशि तथा चन्द्र ग्रह को देखता है। बुध पंचम भाव में स्थित होकर एकादश भाव को तथा उसमें स्थित वृषभ राशि तथा गुरु को पूर्ण दृष्टि से देखता है। शुक्र छठे भाव में स्थित होकर द्वादश भाव को तथा उसमें स्थित मिथुन राशि को तथा केतु ग्रह को अपनी पूर्ण सप्तम दृष्टि से देखता है। शनि लग्न में स्थित होकर तृतीय स्थान को तथा वहां पड़ी कन्या राशि को पूर्ण तृतीय दृष्टि से देखता है। पुनः शनि सप्तम भाव को तथा वहां स्थित मकर राशि तथा चन्द्र ग्रह को पूर्ण सप्तम

दृष्टि से देखता है। पुनः शनि दशम भाव को तथा वहां स्थित मेष राशि को अपनी पूर्ण दशम दृष्टि से देखता है।

राहु छठे भाव में स्थित होकर द्वादश भाव तथा उसमें स्थित मिथुन राशि को पूर्ण दृष्टि से देखता है। पुनः राहु दशम भाव को तथा वहां स्थित मेष राशि को पूर्ण पंचम दृष्टि से देखता है। पुनश्च राहु द्वितीय भाव को तथा उसमें स्थित सिंह राशि तथा मंगल ग्रह को अपनी पूर्ण नवम दृष्टि से देखता है। केतु की दृष्टि भी राहु की दृष्टि की भांति अपने पांचवें, सातवें तथा नवम भाव पर अर्थात् कुण्डली के चतुर्थ, छठे तथा आठवें स्थान पर क्रमशः समझ लेना।

12 ग्रहों की उच्च तथा नीच राशियां––ग्रह जब अपनी उच्च राशि में होता है तो न केवल बलवान् हो जाता है, बल्कि गौरव तथा शुभता का सूचक होता है। जिस राशि में ग्रह उच्च होता है उससे सप्तम राशि में नीच कहलाता है। नीच ग्रह न केवल निर्बल ; बल्कि नीच व्यवहार करने वाला, आडम्बरयुक्त होता है।

ग्रहों की उच्च तथा नीच राशियां नीचे तालिका में दी हैं––

नाम ग्रह	राशि जिसमें ग्रह उच्च होता है	राशि जिसमें ग्रह नीच होता है
सूर्य	1	7
चन्द्र	2	8
मंगल	10	4
बुध	6	12
गुरु	4	10
शुक्र	12	6
शनि	7	1

13. कुण्डली के भावों का विवेचन––ग्रहों, राशियों तथा नक्षत्रों का थोड़ा परिचय आपने प्राप्त किया कि किस प्रकार इसमें से प्रत्येक ज्योतिष का अंग किसी न किसी वस्तु का प्रतीक है। जैसे––आकाश में राशि-पथ के 12 भाग मेष, वृषभ, मिथुन आदि हैं, उसी प्रकार पृथ्वी के 12 भाग लग्न

से आरम्भ कर दिए गए हैं । कुण्डली के बारह भावों से भी यही वस्तुएं देखी जाती हैं । कौन से भाव से किस वस्तु सम्बन्धी धातु आदि ज्ञान होता है वह इस प्रकार है--

प्रथम भाव से--जन्म के समय की बातें, वर्ण (Caste) रंग-रूप,कद, जन्म-स्थान, शरीर, शरीर के विशेष अंग, धन, यश, मान, आयु, सिर, निज (Self). आजीविका आदि का विचार करना चाहिए ।

द्वितीय भाव से--मुख, धन, विद्या, कुटुम्ब, मृत्यु, राजकुमार, माता का बड़ा भाई, शासन, कुमार अवस्था, वाणी, आंख आदि का विचार करना चाहिए ।

तीसरे भाव से--कान, कंधे, सांस की नली, छोटे भाई, साहस, रक्षा विभाग, निज (Self), छोटी यात्रा, बाहु, यौवन अवस्था, मित्र, वायु-यात्रा, आयु, वीरता आदि सब बातों का विचार तृतीय भाव से करना चाहिए ।

चतुर्थ भाव से--माता, मन, जायदाद, वाहन, भूमि, सुख-दुःख, उन्नति, फेफड़े, छाती, रक्त, जनता, स्वभावं, निवास-स्थान, जलीय वस्तुएं आदि बातों का विचार चतुर्थ भाव से करना चाहिए ।

पंचम भाव से--पुत्र, मन्त्रणा शक्ति, प्रिया (Lady Love) खेल-विनोद के स्थान (सिनेमा-क्लब आदि), स्त्री का बड़ा भाई, पेट, बड़े भाई की स्त्री, बड़ी बहन का पति, लाटरी, भाग्य, गर्भ, वाणी, बुद्धि आदि का विचार पंचम भाव से करना चाहिए ।

छठे भाव से--शत्रु, रोग, रुकावट, चोट, चोरी व्यसन, म्लेच्छ, मां का छोटा भाई, अन्तड़ियां, परत्व (Foreignness) मामा, हिंसा आदि वस्तुओं का विचार छठे भाव से करना चाहिए ।

सातवें भाव से--स्त्री, गुप्तेन्द्रिय, वीर्य, नपुंसकता, व्यापार व्यसन, भागीदार, मार्ग, काम-चेष्टा, विवाह, मृत्यु, राज्य आदि बातों का विचार सप्तम स्थान से करना चाहिए ।

अष्टम भाव से——मृत्यु, अपमान, जान जोखों के कार्य, विदेश, समुद्र, अण्डकोष, नाश, आयु, माता की बड़ी बहन का पति, माता के बड़े भाई की पत्नी आदि बातों का विचार अष्टम भाव से करना चाहिए।

नवम भाव से——भाग्य, दैवी सहायता, अचानक शुभाशुभ घटनाएं, धर्म, तप, रुचि, विद्या, पिता, स्त्री का छोटा भाई, नितम्ब, छोटे भाई की स्त्री, छोटी बहिन का पति, राज्य-कृपा, राज्य के बड़े अधिकारी, अपने देश में लम्बी यात्रा आदि बातों का विचार नवम भाव से करना चाहिए।

दशम भाव से——राज्य, शुभाशुभ कर्म, गवर्नमेंट, ऊंचाई, आसमान, पदवी, यश, घुटने, सांस, छोटे भाई--बहन की आयु आदि बातों का विचार दशम भाव से करना चाहिए।

एकादश भाव से——बड़ा भाई, पुत्रवधू, पुत्री का पति, माता की आयु, बाहु, निज (Self), चोट, बीमारी, टांग, प्राप्ति, आमदनी, अन्यत्व (Foreignness), चाचा आदि का विचार एकादश भाव से करना चाहिए।

द्वादश भाव से——पांव, व्यय, पृथकता, भोग-विलास, मां की छोटी बहिन का पति, मां के छोटे भाई की स्त्री, रक्षा विभाग, धर्म, मन्दिर, मोक्ष, आंख, जलीय वस्तुएं, कारागार, हानि आदि का विचार द्वादश भाव से करना चाहिए।

दृष्टि का गुर

सुहृदयस्त्रिकोणभवनाद् ग्रहस्य सुतभे व्ययेथ धनभवने
स्वजने निधने धर्मे स्वोच्चे च भवन्ति नो शेषा।

अर्थात् प्रत्येक ग्रह अपने मूल त्रिकोण से 5, 12, 2, 4, 8, 9 के स्वामी को तथा अपने उच्च स्थान के स्वामी को मित्र बनाता है, अन्यथा नहीं।

मूल त्रिकोण राशियां ये हैं—मंगल की मेष, चन्द्र की वृषभ, सूर्य की सिंह, बुध की कन्या, शुक्र की तुला, गुरु की धनु और शनि की कुम्भ।

उदाहरण—जैसे मंगल की मूल त्रिकोण राशि मेष है। मिथुन इससे तृतीय तथा कन्या इससे षष्ठ स्थान में पड़ती है। न मिथुन का न कन्या का यहां उल्लेख है। अतः मंगल बुध को शत्रु समझता है, इत्यादि।

ग्रह मैत्री आदि चक्र

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु
जिनको मित्र	गुरु	सूर्य	चन्द्र	राहु	सूर्य	बुध	शुक्र	शनि	शनि
समझता है	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	मंगल	शनि	बुध	शुक्र	शुक्र
	चन्द्र		सूर्य	सूर्य	चन्द्र	राहु	राहु	बुध	बुध
जिनको शत्रु	राहु	राहु	बुध	चन्द्र	बुध	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य
समझता है	शुक्र	केतु	राहु		शुक्र	चन्द्र	मंगल	मंगल	मंगल
	शनि						चन्द्र	चन्द्र	चन्द्र
जिनको		शनि							
सम		शुक्र	शनि	गुरु	राहु	गुरु			
समझता	बुध						गुरु	गुरु	गुरु
है		गुरु	शुक्र	मंगल	शनि	मंगल			
		मंगल		शनि					

2. ग्रह परिचय

इस अध्याय में सूर्यादि ग्रहों के स्वरूप के सम्बन्ध में तथा उस स्वरूप के कुण्डली में प्रयोग के सम्बन्ध में कुछ शब्द लिखे जा रहे हैं ।

सूर्य——सूर्य गर्मी देता है, यह सबका अनुभव है । अतः सूर्य को आग माना गया है । जब मंगल, केतु आदि अन्य अग्निद्योतक ग्रहों के साथ मिलकर सूर्य लग्न, लग्नेश, चन्द्र लग्न, चन्द्र लग्नेश आदि व्यवसाय द्योतक अंगों पर प्रभाव डालता है तो मनुष्य अग्नि से सम्बद्ध भट्ठी, बिजली का सामान, रेडियो आदि के काम करता है ।

2. सूर्य प्रकाश देता है, यह प्रत्यक्ष ही है । अतः 'यत्पिण्डे तद्ब्रह्माण्डे' के सिद्धान्तानुसार आंख का प्रतिनिधि है । जब सूर्य द्वितीय, षष्ठ अथवा द्वादश भाव में शत्रु राशि में स्थित होकर युति अथवा दृष्टि द्वारा मंगल, शनि आदि के पाप प्रभाव में होता है तो चक्षुहीन कर देता है । सूर्य यदि शत्रु राशि का होकर तथा अशुभ युक्त अथवा दृष्ट होकर अष्टम स्थान में पड़ जाए तो पिता की आंखों का नाश करता है, क्योंकि वह योग न केवल त्रिक स्थान में बना, अपितु पिता के भाव (नवम) से द्वादश स्थान में भी बना ।

3. सूर्य ग्रहों का राजा है । अतः संसार में राज्य—गवर्नमेंट, नवाब, बड़े जमींदार आदि महान् सत्तारूढ़ व्यक्तियों आदि का प्रतिनिधित्व करता है । यह राजा सूर्य यदि राज्य स्थान (दशम द्वितीय) अथवा राज्य-कृपादर्शक स्थान (नवम) का स्वामी होकर बहुत बलशाली हो तो मनुष्य को राज्य अथवा अधिकार की प्राप्ति होती है ।

4. सूर्य चूंकि आकार आदि में भी महान् है, अतः यदि द्वितीयेश होकर बलवान् हो तो बहुत धन देता है; तृतीयेश होकर बलवान् हो तो बहुत प्रतिष्ठित मित्र देता है; चतुर्थेश होकर बलवान् हो तो बड़ा, खुला,रोशनीवाला मकान देता है तथा छाती को खुला तथा बड़ा बनाता है; पंचमेश होकर बलवान् हो तो उसका पुत्र संसार में बहुत उन्नति पाता है तथा साहसी होता है। षष्ठेश हो तो उससे शत्रु महान् होते हैं, उसकी मां के छोटे भाई ऊंची पदवी पाते हैं; सप्तमेश होकर बलवान् हो तो मनुष्य किसी बड़े घराने से विवाह करता है। अष्टमेश होकर और बलवान हो तो बहुत आयु देता है; नवमेश हो और बलवान् हो तो राज्य अथवा महान् अधिकार देता है और सात्विक, धर्मशील बनाता है; दशमेश होकर बलवान हो तो शुभ कर्मों को करने वाला तथा महान कार्यों का कर्त्ता बनाता है; यदि लाभेश होकर बली हो तो राज्य देता है; द्वादशेश होकर बलवान् हो तो जहां प्रभाव डालता है उससे मनुष्य को पृथक् कर देता है ; जैसे सप्तम सप्तमेश से सम्बन्ध करे तो स्त्री को छोड़ दे। यदि पंचम तथा गुरु से सम्बन्ध करे तो पुत्र को छोड़ दे, आदि। यदि लग्नेश होकर बलवान् हो तो राज्य देता है तथा सुख देता है।

5. सूर्य चूंकि प्रकाश देता है, इसलिए इस ग्रह का द्वितीयेश पंचमेश होकर बलवान् होना ऊंची विद्या देता है; परन्तु बुद्धिकारक बुध भी बलवान् होना चाहिए।

6. सूर्य अपने प्रकाश से सब वस्तुओं को पालता है। अतः इसे पिता कहते हैं (पाति इति पिता)। अतः पिता का विचार नवम भाव, उसके स्वामी तथा सूर्य को लेकर करना चाहिए। यदि तीनों बलवान् हों तो पिता दीर्घायु, धनी, सुखी, स्वस्थ, उच्च पदवी से युक्त होता है तथा मनुष्य को पैतृक सम्पत्ति की प्राप्ति भी होती है।

7. सूर्य आधार रूप है, अतः हड्डी का कारक है, अतः जब लग्नाधिपति होकर निर्बल हो तो हड्डी में चोट आदि से मनुष्य कष्ट पाता है।

सूर्य पांच नम्बर राशि का स्वामी है । पांच नम्बर का अंग पेट है । यदि सिंह राशि, सूर्य, पंचम भाव, पंचमेश सब शनि तथा राहु से पीड़ित हों तो पेट में दीर्घ रोग होता है ।

सूर्य जगत् की आत्मा है, जैसा कि वेद-वाक्य है––सूर्यः आत्मा जगतस्थुषश्च' । अतः जब भी किसी गूढ़ आन्तरिक, आधारभूत तथ्य का परीक्षण-निरीक्षण होगा, उसका विचार सूर्य से किया जायेगा । जैसे वर्णमाला में हम जानते हैं कि व्यंजनों (क, ख, आदि) का उच्चारण बिना स्वरों की सहायता के नहीं हो सकता, यहां स्वर वर्णमाला के 'आत्मा', 'अधिष्ठान' आधाररूप होने से सूर्य द्वारा उल्लिखित होते हैं । स्वर हैं–अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ ।

चन्द्र––देखने में आंखों को ठण्डक देता है । अतः लक्षण शास्त्रानुसार (Symbologically) एक जलीय ग्रह है । जब दूसरे जलीय ग्रह शुक्र, चतुर्थेश, अष्टमेश आदि से मिलकर लग्न, लग्नेश, चन्द्रलग्न, चन्द्रलग्नेश आदि पर प्रभाव डालता है तो मनुष्य जलीय व्यवसाय, जैसे–– जल सेना की नौकरी, सोडा वाटर फैक्टरी, वाटर सप्लाई विभाग, नहर के महकमा आदि कार्य करने वाला होता है ।

2. यह ग्रह सबका मित्र है । अतः जब लग्नाधिपति होकर बलवान् हो और चतुर्थ भाव (जनता) तथा चतुर्थेश से शुभ सम्बन्ध (युति अथवा दृष्टि द्वारा) स्थापित करता हो तो मनुष्य को सर्वप्रिय तथा जनकार्यों (Polictics) में रत बना देता है ।

3. यह ग्रह चूंकि किसी का शत्रु नहीं है और सूर्य की पत्नी है, अतः सबकी मां है । अतः चतुर्थ भाव, चतुर्थेश तथा चन्द्र के बलाबल से माता की आयु का निर्णय करना चाहिए ।

4. चन्द्र के सम्बन्ध में वेद में आया है–'चन्द्रमा मनसो जातः' अर्थात् चन्द्र विराट् पुरुष के मन से उत्पन्न हुआ है । अतः मन की स्थिति को लग्न चतुर्थ भाव के साथ-साथ चन्द्र की अवस्था से भी देखना चाहिए । यदि चन्द्र

पर तथा दूसरे 'मन' द्योतक अंगों पर शनि का युति अथवा दृष्टि से प्रभाव पड़ता हो तो मनुष्य उदासीन मन वाला, विरक्तचित्त, संन्यासप्रिय होता है।

5. यदि चन्द्र स्वयं चतुर्थेश हो जाए तो स्पष्ट है कि वह मन का बढ़िया प्रतिनिधित्व करेगा। ऐसे चन्द्र पर तथा चतुर्थ भाव पर यदि राहु का युति अथवा दृष्टि द्वारा प्रभाव हो और चन्द्र अष्टम आदि त्रिक स्थान में हो तो मनुष्य के मन में भय की विशेष सृष्टि होती है। ऐसा व्यक्ति मिरगी, हिस्टीरिया, बेहोशी आदि भयदायक रोगों से पीड़ित तथा चिन्तातुर रहता है।

6. काल पुरुष में चन्द्र चतुर्थ राशि का स्वामी है। अतः मनुष्य के चतुर्थ भाग (फेफड़ों) का प्रतिनिधि है। यदि चतुर्थेश होकर शनि मंगल के प्रभाव में हो और चतुर्थ भाव पर भी पाप प्रभाव हो तो मनुष्य को फेफड़ों आदि का रोग, खांसी, निमोनिया तथा प्लूर्सी आदि से कष्ट होता है।

7. चन्द्र तरल है, शीघ्रगामी है, जीवनप्रद है। अतः रक्त है। जब चन्द्र लग्नेश होकर पाप युति अथवा पाप दृष्टि में हो तो मनुष्य को रक्तविकार होता है।

8. सूर्य की भांति चन्द्र भी प्रकाशमय है, यद्यपि थोड़ा। अतः यह भी आंख है। चन्द्र भी जब षष्ठ आदि त्रिक भावों में क्षीण शत्रु राशि में स्थित होकर पाप प्रभाव में हो तो आंख की हानि को देता है।

9. चन्द्र शिशु है। यदि लग्नाधिपति होकर अथवा लग्नाधिपति के सहित, क्षीण बली होता हुआ पाप दृष्टि में हो तो मनुष्य की मृत्यु बहुत अल्पायु में कर देता है।

10. चूंकि चन्द्रमा मन है, अतः चतुर्थेश होकर जिस भाव में स्थित होगा मनुष्य के मन का विशेष झुकाव अथवा प्रवृति उस भाव से प्रदर्शित वस्तुओं में होगी। जैसे यदि कन्या राशि का चन्द्र छठे हो तो पुरुषार्थ प्रिय, व्यायामप्रिय होगा। यदि राहु भी साथ हो तो म्लेच्छप्रिय होगा आदि।

11. य, र, ल, व, ष, स, ह— ये अक्षर यद्यपि स्वरों की अपेक्षा अधिक बाह्यरूपरखतेहैं; जैसे मन आत्मा की अपेक्षा अधिक बाह्य रूप रखता है, अतः ये अन्तःस्थ चन्द्र द्वारा प्रतिनिधित्व पाते हैं।

मंगल——सूर्य नारंगी रंग का और चन्द्र श्वेत है तो मंगल लाल रंग वाला है। 'अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां' के वेद के आदेश के अनुसार यह महान् रजोगुण का ग्रह है। इसमें बहुत क्रियाशक्ति है (प्रकाशक्रिया स्थिति-शीलं भूतेन्द्रियात्मकं भोगापवर्गार्थं दृश्यम्——योगसूत्र)। जब यह ग्रह लग्नेश होकर बलवान् होता है तो मनुष्य को बहुत पुरुषार्थी, क्रियाशील, व्यवस्थापक, साहसी, अग्रणी बनाता है।

2. लाल तथा राजसी होने से मंगल एक शक्तिशाली ग्रह है। अतः शरीर में पट्ठों का प्रतिनिधित्व मंगल करता है। जब शुभ ग्रह से युक्त या दृष्ट न हो तो पट्ठों के सूखे का रोग देता है।

3. मंगल छोटे भाई का कारक है। जब तृतीय भाव में शत्रु राशि में स्थित हो और तृतीयेश तथा मंगल पर पाप प्रभाव हो तो अनुज से वंचित करता है।

4. मंगल की दृष्टि जब दो ग्रहों पर पड़ रही हो तो किसी आपत्ति की ओर इशारा होता है। उदाहरणार्थ, यदि बुध और शुक्र इकट्ठे हों और लग्न वृषभ हो तो यदि मंगल की दृष्टि बुध, शुक्र पर पड़ेगी तो शीघ्र ही स्त्री की मृत्यु हो जाएगी, क्योंकि बुध सप्तम (स्त्री) का अष्टमेश होगा, शीघ्र फलकारी वह है ही तथा उस पर और स्त्रीकारक शुक्र पर क्रूर मंगल की दृष्टि स्त्री की आयु का नाश करेगी।

5. मंगल जब मेष लग्न का स्वामी होकर बलवान् हो तो बहुत आयु देता है क्योंकि तब वह लग्नेश भी और अष्टमेश भी दोनों आयु-द्योतक भावों का स्वामी बन जाता है। इसी प्रकार कन्या लग्न वालों का बलवान् मंगल भी बहुत आयु देता है, क्योंकि तब मंगल अष्टमाधिपति तथा तृतीयाधिपति (अष्टम से अष्टम भाव का स्वामी) होता है। अतः आयु का द्योतक बन जाता है।

6. कुम्भ लग्न वालों के शनि तथा मंगल यदि किसी भाव तथा भावाधिपति पर अथवा कारक पर प्रभाव डालें तो व्यक्ति उस भाव सम्बन्धी बातों का जान-बूझकर नाश करता है; जैसे यदि एकादश भाव तथा इसके स्वामी गुरु पर इन दोनों की दृष्टि हो तो बड़े भाई का शत्रु और उसकी जान तक लेने वाला होता है। इसी प्रकार यदि पंचम भाव तथा उसके स्वामी अथवा कारक पर इन दोनों की दृष्टि हो तो सन्तान निरोध के सिद्धांतानुकूल चलने वाला होता है। यदि द्वितीय तथा द्वितीयेश पर इन दोनों का प्रभाव हो तो जान-बूझकर धन नष्ट करने वाला होता है। यदि सप्तमेश तथा शुक्र पर दोनों का प्रभाव हो तो स्त्री का शत्रु होता है, इत्यादि।

7. मंगल चतुर्थ स्थान में दिक् बल से शून्य अतः निर्बल होता है, अतः यदि मेष लग्न वालों को चतुर्थ स्थान में पड़ जाए और शुभदृष्ट न हो तो अल्पायु कर देता है। परन्तु नीच राशि का मंगल लग्न में अच्छा माना गया है, क्योंकि कर्क लग्न वालों के लिए यह ग्रह योगकारक होता हुआ अपनी एक राशि मेष से चतुर्थ (शुभ स्थान) तथा दूसरी राशि वृश्चिक से नवम पुनः शुभ स्थान में पड़ता है।

8. उच्च राशि का मंगल सप्तम स्थान में काहल योग बनाता है जो एक उत्तम राजयोग है। कारण, मंगल राजयोग कारक भी बन जाता है, केन्द्र में भी स्थित होता है, उच्च भी होता है तथा निज राशि मेष को भी देखता है।

9. मिथुन लग्न वालों का मंगल बड़ा क्रूर होता है। यदि इसका प्रभाव लग्न तथा चन्द्र पर हो जाए और शुभ प्रभाव में मंगल न हो तो मनुष्य बहुत हिंसाप्रिय, क्रूर कर्मों का करने वाला होता है।

10. मंगल की पंचम भाव अथवा पंचमेश पर दृष्टि विद्या पढ़ने की शक्ति को बढ़ाती है, कम नहीं करती, क्योंकि मंगल एक ऊहापोह (Logic) प्रिय ग्रह है।

11. मंगल की दृष्टि यदि मिथुन राशि तथा बुध दोनों पर पड़ रही हो तो जिस सम्बन्धी के अष्टम स्थान में मिथुन राशि पड़ती हो उसको जीवन में भय कहना चाहिए, यदि मिथुन तथा बुध पर शुभ प्रभाव न हो, कारण कि मंगल एक तो बुध का परम शत्रु है, दूसरे बुध पाप प्रभाव में अनिष्ट फल को अपेक्षाकृत शीघ्रतर देता है: जैसे मीन लग्न हो और बुध और सूर्य एक स्थान में हों और उन पर तथा चतुर्थ स्थान पर केवल मंगल की दृष्टि हो तो पिता की मृत्यु शीघ्र हो जाएगी। क्योंकि चतुर्थ स्थान पिता की आयु का स्थान है और सूर्य पिता का कारक और दोनों मंगल के क्रूर प्रभाव में होंगे।

12. मंगल यदि लग्नाधिपति होकर बलवान् हो तो और बातों के अतिरिक्त उदार भी होता है। फलदीपिकाकार मंगल के विषय में कहता है। "रक्ताम्बरो रक्ततनुर्महीजः चण्डोऽत्युदारः तरुणोऽतिमज्जः।"

13. मंगल को दशम भाव में दिक् बल मिलता है।

14. कवर्ग (क, ख, ग, घ, ङ), का प्रतिनिधित्व मंगल करता है–अर्थात् जहां नाम निर्णय का प्रश्न हो और मंगल नाम का द्योतक हो तो वह इन अक्षरों द्वारा नाम को जतलाता है।

बुध––बुध का दूसरा नाम विष्णु भी है। यह ग्रह जब नवमेश होता है और लग्न से सम्बन्धित होता है तो मनुष्य को बहुत परोपकारी तथा यज्ञीय जीवन व्यतीत करने वाला बनाता है। जैसे, तुला लग्न में स्थित बुध।

2. बुध जब सप्तमाधिपति हो तो शीघ्र विवाह करा देता है, यदि पाप युति अथवा दृष्टि में न हो, क्योंकि बुध कुमार है और कुमार अवस्था जीवन में शीघ्र आने वाली अवस्था है।

3. बुध जब द्वितीयाधिपति हो तथा शनि तथा राहु के प्रभाव में हो और द्वितीय भाव पर भी ऐसा ही पृथकताजनक प्रभाव शनि, सूर्य, राहु आदि का पड़ता हो तो मनुष्य कुमार अवस्था में कुटुम्ब से पृथक् हो जाता है।

या तो वह किसी अन्य नगर में होस्टल आदि में रहकर अध्ययन करता है या घर से भागने की आदत डाल लेता है।

4. बुध त्वचा है। यदि लग्नाधिपति होकर बुध पाप प्रभाव में हो तो त्वचा में रोग देता है। इसी प्रकार यदि लग्न में हो अथवा सूर्य के साथ हो अथवा चन्द्र के साथ हो और उस पर शनि अथवा राहु की दृष्टि पड़ती हो तो मनुष्य को फुलबहरी आदि चर्म रोग होते हैं।

5. कन्या लग्न का स्वामी बुध, सूर्य या शनि से प्रभावित हुआ तो हर्निया आदि अन्तड़ियों के रोग देता है। मिथुन लग्न का स्वामी बुध इस प्रकार पीड़ित होकर सांस की नली तथा बाहु आदि तृतीय स्थानस्थ अंगों को कष्ट देता है।

6. बुध, शनि, राहु, लम्बे आकार के हैं। जब लग्न, लग्नेश, चन्द्र लग्न, चन्द्रलग्नेश आदि जन्म द्योतक अंगों पर प्रभाव डालते हों तो मनुष्य को लम्बे कद (Stature) वाला कर देते हैं।

7. वृषभ लग्न वालों का बुध यदि बलवान् हो तो उनमें वक्तृता शक्ति (Oratory) विशेष होती है, क्योंकि एक तो बुध वाणी का कारक है, दूसरे यह जिन दो स्थानों का स्वामी बनता है, वे दोनों ही वाणी के द्योतक हो जाते हैं।

8. मिथुन लग्न वालों का बुध यदि मंगल आदि से पीड़ित हो तो सिर में चोट आने का भय रहता है। यदि इस लग्न वालों का चन्द्र तथा शुक्र भी पाप प्रभाव में हो तो दिमाग की बीमारी हो जाने तथा बहुत पाप प्रभाव में होने पर पागल तक हो जाने का डर रहता है।

9. द्वितीयाधिपति तथा **बुध बलवान्** होकर यदि लग्नों से सम्बन्ध करे तो मनुष्य ज्योतिष का ज्ञाता होता है, क्योंकि बुध ज्योतिष का कारक है तथा द्वितीयाधिपति ज्योतिष विद्या है।

10. बुध एक नपुंसक ग्रह है। जब यह एक दूसरे नपुंसक ग्रह शनि से मिलकर सप्तम भाव, सप्तम भाव के स्वामी तथा शुक्र इन सब पर अपना

प्रभाव डालता है और उन तीनों वीर्य द्योतक अंगों पर इन दो के अतिरिक्त और कोई प्रभाव नहीं होता है तो मनुष्य नपुंसक होता है ।

11. बुध को लग्न में स्थित होने से दिक् बल मिलता है ।

12. बुध ट, ठ, ड, ढ, ण—टवर्ग को दर्शाता है । इस तथ्य का प्रयोग व्यक्तियों तथा वस्तुओं के नाम निकालने में होता है ।

बृहस्पति—सबसे शुभ ग्रह है । जिन भावादि को देखता है उनकी खूब वृद्धि करता है । यह मूल्य का प्रतिनिधि है (देखो कुण्डली संख्या 2) ।

2. गुरु से यदि शुक्र द्वादश स्थान में स्थित हो तो मनुष्य विशेष धनवान तथा समृद्ध होता है, क्योंकि गुरु एक धनकारक ग्रह है, शुक्र के इससे द्वादश स्थान में आ जाने पर इसे बल मिलता है, जिससे धन की खूब वृद्धि होती है ।
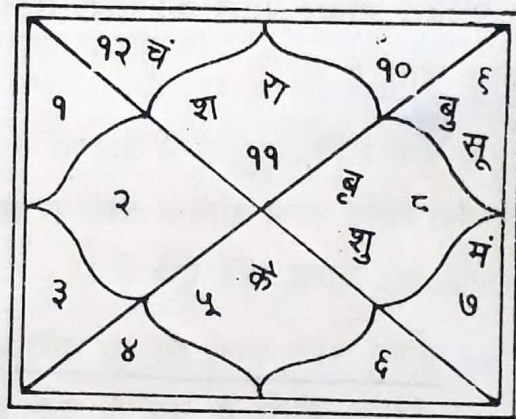
कु० सं० 2

3. मिथुन तथा कन्या लग्न वालों के लिए गुरु दो केन्द्रों का स्वामी बन जाता है और केन्द्राधिपत्य दोष वाला हो जाता है । ऐसे मनुष्य का निर्बल गुरु अपनी दशाभुक्ति में रोग कष्ट देता है ।

4. मेष लग्न वालों का गुरु यदि पाप ग्रहों से पीड़ित हो और द्वादश स्थान भी पाप प्रभाव में हो तो मनुष्य को पांव में चोट लगने अथवा रोग होने का डर होता है, क्योंकि बारह नम्बर के अंग को हानि पहुंचाने का योग बनता है ।

5. कुम्भ लग्न वालों का गुरु यदि बलवान् हो तो एक वरदान सिद्ध होता है । ऐसा बली गुरु जिस भाव भावेश को देखेगा उसे विशेष रूप से प्रफुल्लित

करेगा, क्योंकि गुरु एक तो धन अथवा मूल्य का कारक है, पुनः दो धन स्थानों--द्वितीय तथा एकादश का स्वामी बन जाता है।

6. गुरु कद में लम्बा है। बुध, शनि, राहु की भांति इसकी दृष्टि भी शरीर आदि वस्तुओं को दीर्घ कद (Stature) का बनाती है।

7. स्त्रियों के लिए गुरु विशेष महत्त्व रखता है, क्योंकि प्रत्येक स्त्री की कुण्डली में गुरु उसका पति होता है। (वैदुष्यं विजितेन्द्रियं धनसुखं सम्मानमीढ्याद्दयाम–फलदीपिका)। अतः यदि गुरु स्वयं सप्तमाधिपति हो जाए और बलवान् हो तो पति का बहुत सुख तथा उसका प्यार स्त्री को मिलता है। इसके विरुद्ध यदि सप्तमेश गुरु स्त्री की कुण्डली में सूर्य, शनि, राहु आदि पृथकताजनक (Separative) ग्रहों के प्रभाव में हो और इन्हीं ग्रहों में से दो का प्रभाव सप्तम भाव पर भी पड़ता हो तो स्त्री पति द्वारा त्याग दी जाती है, अर्थात् तलाक आदि की नौबत आ जाती है।

8. मीन लग्न वालों का बलवान् गुरु उनको राज्य से प्रतिष्ठा प्राप्त करवाता है, क्योंकि राज्य-कृपा कारक गुरु स्वयं लग्न तथा दशम मानप्रद भावों का स्वामी बन जाता है।

9. वृश्चिक लग्न वालों का बलवान् गुरु भी उनमें भाषण शक्ति प्रदान करता है, क्योंकि गुरु दो भाषण के भावों का स्वामी बन जाता है तथा स्वयं वाक्पति है ही।

10. तुला लग्न वालों का नवम स्थान में स्थित गुरु खूब गुरुभक्ति देता है तथा गुरु के साथ सहवास देता है, क्योंकि गुरु मित्र (तृतीय) स्थान का स्वामी बन जाता है।

11. तुला राशि का गुरु अर्थात् शत्रु राशि में स्थित द्वादश (अनिष्ट) स्थान में स्थित हुआ भी पुत्रदायक हो जाता है, यदि वक्री हो। अन्यथा नहीं, क्योंकि वक्रत्व से गुरु पुत्र (बल) पाता है।

12. लग्न में स्थित होने से गुरु को दिक् बल मिलता है।

13. गुरु त, थ, द, ध, न––तवर्ग का प्रतिनिधि है और वस्तुओं अथवा व्यक्तियों के नाम का निश्चय करने में इन अक्षरों द्वारा नाम के प्रथम अक्षर आदि को निर्धारित करता है।

शुक्र–बिलासप्रिय ग्रह है। जब एक विलास भाव का स्वामी होकर दूसरे विलास भाव में स्थित होता है तो मनुष्य को विलासी तथा लम्पट बनाता है। जैसे सप्तम भाव में वृषभ का अथवा द्वादश भाव में तुला राशि का।

2. शुक्र स्त्री का कारक है। यदि सप्तम स्थान में शत्रु राशि का होकर स्थित हो तथा पाप दृष्टि में हो और सप्तमेश पर भी पाप दृष्टि अथवा युति हो तो स्त्री की आयु अल्प हो जाती है।

3. शुक्र मुख का कारक है। जब मुख स्थान का स्वामी होकर शुभ प्रभाव में हो तो मनुष्य को सुन्दर बनाता है।

4. शुक्र का सम्बन्ध विलास की सामग्री से है। यदि शुक्र, लग्न, लग्नेश, चन्द्र लग्नेश आदि पर अपना प्रभाव डाल रहा हो तो मनुष्य सुसंस्कृत होता है और विलास सामग्री (Fancy goods) द्वारा आजीविका उत्पन्न करता है।

5. शुक्र सत्यप्रिय ग्रह है। यदि लग्नाधिपति होकर नवमाधिपति बुध शुभ ग्रहों के प्रभाव में हो तो मनुष्य सत्यवक्ता होता है।

6. वृषभ लग्न का स्वामी शुक्र पाप प्रभाव से पीड़ित हो तो गले में कष्ट देता है। तुला लग्न का स्वामी शुक्र पाप प्रभाव में हो तो गुप्त अंगों में कष्ट होता है। तुला लग्न वालों का शुक्र तथा गुरु दोनों यदि किसी भाव आदि को सम्यक् प्रकार से प्रभावित करें तो उसका विशेष हित करते हैं, जैसे शनि तथा चतुर्थ भाव से सम्बन्ध हो तो जनता की भलाई विशेष रूप से करते हैं। अष्टम भाव तथा अष्टमेश पर दोनों का प्रभाव हो तो दूसरों को प्राणदान देने वाला होता है।

7. शुक्र यदि द्वादश स्थान में शनि तथा राहु के प्रभाव में हो तो बहुत पढ़ने वाला अर्थात् आंखों का बहुत प्रयोग करने वाला तथा वीर्य को व्यर्थ

खोने वाला होता है । हेतु स्पष्ट है कि शुक्र वीर्य है: शनि तथा राहु आदि ग्रह पृथकताजनक (Separative) हैं ।

8. धनु लग्न वालों का शुक्र विशेष पापी समझना चाहिए, क्योंकि यह दो पाप स्थानों का--षष्ठ तथा छठे से छठे का स्वामी बनकर रोग, चोट, हिंसा आदि का द्योतक होता है ।

9. शुक्र जब शनि को साथ लेकर सूर्य को युति तथा दृष्टि (शनि द्वारा) से प्रभावित करे तो सूर्य बहुत निर्बल हो जाता है जिससे पिता का सुख कम हो जाता है ।

10. तुला लग्न वालों के शुक्र तथा लग्नेश एवं अष्टमेश पर जो प्रभाव हो वह मरण विधि को बतलाता है: जैसे तुला लग्न में शुक्र तथा मंगल की स्थिति अग्नि से मृत्यु जतलाती है ।

11. शुक्र की तीनों लग्नों से द्वादश में स्थिति एक महान् वरदान है, क्योंकि ऐसी स्थिति से तीनों लग्नों को बल मिलता है ।

12. शुक्र को चतुर्थ स्थान में स्थित होने से दिक् बल मिलता है ।

13. वर्णमाला में शुक्र को 'चवर्ग' अर्थात् च, छ, ज, झ, ञ का प्रतिनिधित्व प्राप्त है । इन अक्षरों से शुक्र अपने प्रभाव में आई वस्तुओं का नाम बतलाता है ।

शनि आयु का कारक है । यदि लग्नेश तथा अष्टमेश और शनि सब बलवान् हों तो मनुष्य की दीर्घ आयु होती है ।

2. शनि का रंग काला है । यदि शनि तथा राहु लग्न, लग्नेश चन्द्र लग्न, चन्द्र लग्नेश, सूर्य लग्न, सूर्य लग्नेश तथा द्वितीयेश पर प्रभाव डालें तो मनुष्य के शरीर का रंग काला होता है ।

3. शनि रोग का भी कारक है । जब षष्ठ स्थान में मकर अथवा कुम्भ राशि हो और वहां राहु स्थित हो तो शनि में रोग देने की विशेष शक्ति आ

विशेष जानकारी के लिए देखिये हमारी पुस्तक 'ज्योतिष और रोग'

जाती है । ऐसा शनि जिस भाव में स्थित होगा अथवा जिसको देखेगा उसको रोगयुक्त बना देगा ।

4. शनि काला होने से अंधेरा पसन्द करता है । अतः यह ग्रह विद्या (Education) नहीं चाहता । जब इसकी दृष्टि द्वितीय भाव, द्वितीयेश, पंचम भाव, पंचमेश अथवा बुध पर हो तो अल्पविद्या तथा विघ्नयुक्त विद्या कहनी चाहिए ।

5. शनि स्नायु है । यदि एकादश स्थान में स्थित हो तो मनुष्य की मृत्यु सन्निपात (Paralysis) आदि स्नायु रोगों से कर देता है । कारण यह है कि तब इसका प्रभाव लग्न तथा अष्टम भाव पर पड़ता है और ये दोनों भाव मरण विधि को बतलाने वाले हैं ।

6. शनि भृत्य है, अतः इसकी वाणी असंस्कृत, कर्कश होती है । अतः जिस भाव में मकर राशि पड़ जाए वह सम्बन्धी कर्कश वाणी वाला होता है । यदि शनि पर शुभ दृष्टि का अभाव हो: जैसे वृषभ लग्न हो तो पिता कर्कश वाणी वाला, कर्क लग्न हो तो स्त्री कर्कश वाणी वाली, मकर लग्न हो तो स्वयं कर्कश वाणी वाला होता है, क्योंकि प्रत्येक अवस्था में द्वितीयेश वाणी द्योतक ग्रह शनि बन जाता है ।

7. शनि यदि मकर अथवा कुम्भ लग्न का स्वामी होकर कुण्डली में पीड़ित हो तो मनुष्य को जंघाओं में कष्ट होता है, क्योंकि लग्नेश शनि दस तथा ग्यारह नम्बर के अंगों का विशेष रूप से प्रतिनिधित्व करेगा (देखिए हमारी पुस्तक 'ज्योतिष और रोग') ।

8. शनि, सूर्य, राहु, राहु-अधिष्ठित राशि का स्वामी, द्वादशेश ये सब ग्रह अपने में पृथकताजनक (Separative) प्रभाव रखते हैं । इनमें से यदि दो ग्रहों का भी प्रभाव किसी प्रतिनिधित्व रखने वाले (Representative) अंगों पर पड़ जाए तो मनुष्य को उससे पृथक कर देते हैं । जैसे लग्न लग्नेश पर प्रभाव हो तो स्वास्थ्य तथा धन का नाश (देखिए कु० सं० 3) । सप्तम भाव, सप्तमेश तथा शुक्र (अथवा स्त्रियों की कुण्डली में गुरु) पर यह प्रभाव हो तो

पति-पत्नी में वियोग हो जाता है । द्वितीय भाव तथा उसके स्वामी पर हो तो परिवार छोड़ता है, चतुर्थ भाव तथा उसके स्वामी पर हो तो घर बार तथा जन्म-भूमि छोड़नी पड़ जाती है, यदि दशम दशमेश सूर्य पर यह प्रभाव हो तो राज्य छोड़ना पड़ जाता है, इत्यादि-इत्यादि ।

कु० सं० 3
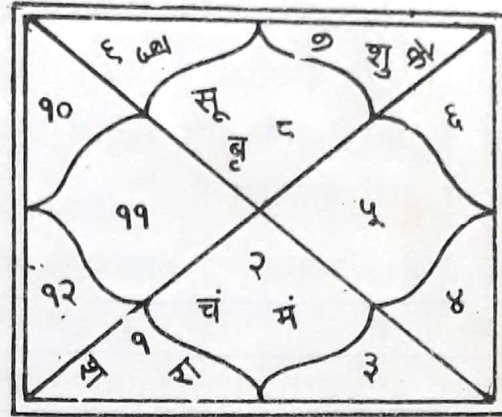
9. शनि की गति बहुत धीमी है, अतः शनि द्वारा स्वयं कार्यों में विलम्ब होता है । यही कारण है कि प्रायः जिन व्यक्तियों का सप्तमेश शनि होता है और सप्तम भाव तथा शुक्र पर शुभ दृष्टि नहीं होती वे देर से विवाह करते हैं ।

10. शनि प्रायः स्त्री ग्रह होने का फल देता है । जब शनि पंचमेश होकर अतीव बलवान हो (जैसे कि उच्च राशि तथा केन्द्र स्थिति द्वारा) तो उस व्यक्ति के यहां लड़कियों की भरमार होती है ।

11. शनि की पृथकताजनक प्रवृत्ति का एक फल यह भी है कि शनि जब चन्द्र पर दृष्टि द्वारा प्रभाव डालता है तो मन को वैराग्यमय बना देता है और सांसारिक विषयों से विरक्त कर देता है । संन्यासियों की कुण्डली में प्रायः ऐसा योग मिलता है । इतना अवश्य है कि संन्यास की प्राप्ति के लिए द्वितीय (कुटुम्ब), चतुर्थ (मकान-जायदाद), द्वादश (भोग-सामग्री) भावों तथा इनके स्वामियों का सूर्य, शनि, राहु आदि पृथकताजनक ग्रहों के प्रभाव में होना आवश्यक है, क्योंकि संन्यासी को कुटुम्ब (2) , घर (4) तथा भोग (12) छोड़ने होते हैं ।

12. शनि क्षेत्र है । जब चतुर्थाधिपति होकर बलवान् हो तो क्षेत्र जायदाद का विशेष सुख देता है: जैसे कुम्भ का शनि चतुर्थ भाव में ।

13. शनि की सप्तम स्थान में स्थिति इसे दिक् बल देती है ।

14. शनि वर्णमाला में 'पवर्ग' अर्थात् प, फ, ब, भ, म का प्रतिनिधित्व करता है, अर्थात् जब शनि वस्तुओं अथवा व्यक्तियों का नाम बतलाता है तो पवर्ग द्वारा बतलाता है ।

राहु––राहु के गुण-दोष प्रायः शनि की भांति ही हैं । शनि की भांति राहु भी काला, धीमी गति वाला, रोगप्रद, स्नायु-रोगकारक, पृथकताजनक, दीर्घाकार, अन्धकारप्रिय तथा भय उत्पादक है ।

2. राहु तथा केतु अचानक फल देने के लिए प्रसिद्ध हैं । यह अचानक फल अच्छा और बुरा दोनों प्रकार का हो सकता है: यदि राहु नवम स्थान में हो और नवमेश बलवान हो, विशेषतया बुध नवमेश होकर बलवान् हो तो अचानक भाग्य चमक उठता है और अनजाने में ही बहुत लाभ तथा पदवी आदि प्राप्त हो जाते हैं । इसी प्रकार राहु धन: पंचम लाभ स्थान में लाटरी आदि द्वारा शुभ तथा अचानक फल देता है यदि इन भावों के स्वामी बलवान हों ।

3. राहु जब शनि के साथ स्थित हो तो राहु की दृष्टि से सचेत हो जाना चाहिए । ऐसी स्थिति में राहु की दृष्टि (जो कि सदा राहु से पंचम, सप्तम तथा नवम भावों पर पूर्ण रहती है) न केवल अपना ही अपितु शनि का प्रभाव भी रखती है और विशेष पृथकता आदि अनिष्ट फल को करने वाली होती है । जैसे शनि और राहु दशम स्थान में स्थित हों तो धननाश अथवा त्याग का योग बनता है, क्योंकि राहु की द्वितीय भाव में पंचम दृष्टि में राहु तथा शनि दोनों का प्रभाव है ।

केतु के गुण-दोष प्रायः मंगल के-से हैं ।

2. केतु भी मंगल की भांति अग्नि स्वरूप है । यदि सूर्य, मंगल तथा केतु का प्रभाव कहीं एकत्र सीधा अथवा केतु की दृष्टि द्वारा पड़ रहा हो तो उस स्थान से प्रदर्शित वस्तु में आग लग जाती है: जैसे यह प्रभाव लग्न पर हो तो सिर में आग लग जाए आदि ।

3. शुभ स्वक्षेत्री ग्रह के साथ मिलकर केतु विशेष लाभ देता है, जैसे स्वक्षेत्री शुक्र तुला राशि में केतु के साथ हो तो मनुष्य बहुत धनवान् होता है। यही योग नवम में हो तो बहुत भाग्यशाली राज्यमानी होता है। हिटलर की कुण्डली में धनु राशि का गुरु केतु के साथ तृतीय स्थान में था, उसकी क्रूरता तथा बाहुशक्ति इतिहास में प्रसिद्ध है।

4. केतु भी राहु की भांति अचानक फल देता है। केतु यदि योगकारक ग्रह के साथ स्थित हो तो केतु अधिष्ठित राशि का स्वामी अपनी भुक्ति से अचानक लाटरी आदि से धन की प्राप्ति करवाता है।

5. राहु म्लेच्छ ग्रह है, षष्ठ स्थान भी म्लेच्छ स्थान है। अतः जिन वस्तुओं पर षष्ठेश तथा राहु का प्रभाव पड़ेगा वे वस्तुएं म्लेच्छ (Foreign) बन जायेंगी। यदि स्त्री की कुण्डली में षष्ठेश पर राहु अधिष्ठित राशि के स्वामी आदि म्लेच्छ (Foreign) प्रभाव हो तो स्त्री से शयन-सुख (Pleasures of the bed) म्लेछ बन जाते हैं। दूसरे शब्दों में, स्त्री की शैया का सुख अन्य स्त्रियां भोगती हैं जिसका अर्थ यह निकलता है कि उसका पति अपनी स्त्री के अतिरिक्त दूसरी स्त्रियों को भी अपनी स्त्री बनाता है।

6. राहु सर्वथा उल्टा (Retrograde) चलता है। जब किसी वक्री ग्रह की महादशा में राहु की भुक्ति आ जाए अथवा राहु की दशा में वक्री की भुक्ति आ जाए तो मनुष्य को वस्तुएं लौटाई जाती हैं, मकान-जायदाद आदि नष्ट पदार्थों की पुनः प्राप्ति होती है।

7. राहु तथा मंगल का प्रभाव यदि द्वितीय भाव तथा इसके स्वामी पर पड़े तो राहु के टेढ़ेपन के प्रभाव के कारण मुख टेढ़ा हो जाने का रोग (Facial paralysis) हो जाता है।

विशेष नियम

1. जब मनुष्य से राज्य छिन जाए, घरबार छूट जाए, स्त्री का त्याग हो जाए, भोग-विलास का त्याग हो जाए तो ऐसे त्याग अथवा पृथकता के

पीछे बहुधाकर पृथकताजनक ग्रहों का प्रभाव रहता है, जैसा कि हमने होराशतक में कहा है:

छायात्मजः पंगु दिवाकरेषु खेटद्वयो दिशति यत्र निजप्रभावम् ।
नूनं पृथकताविषयाद्धि तस्माद्दशमे यथा राज्यन्यासमाहुः । ।

अर्थात् राहु, शनि तथा सूर्य में से दो अथवा तीन ग्रह जिस भाव, ग्रह आदि पर अपना प्रभाव डालें मनुष्य उन भावादि से अवश्य पृथक हो जाता है, जैसे राहु तथा शनि का प्रभाव दशम भाव (तथा दशमेश) पर हो तो मनुष्य को राज्य से हाथ धोना पड़ता है ।

उपर्युक्त पृथकता का सिद्धान्त सर्वत्र उपयोगी है । रोग के सन्दर्भ में उक्त पृथकताजनक प्रभाव छठे भाव, उसके स्वामी, छठी राशि तथा उसके स्वामी अर्थात् काल पुरुष के छठे अंग पर पड़ता है तो काल पुरुष के छठे अंग अर्थात् अंतड़ियों से पृथकता होती है । अर्थात् वहां अन्तड़ियां अपने स्थान को छोड़ देती हैं । अंतड़ियों की इसी स्थानान्तर स्थिति (Dislocation) को ही तो हर्निया (Hernia) कहते हैं । इस प्रकार इस सिद्धान्त का प्रयोग आयुर्वेद शास्त्र में भी किया जा सकता है ।

2. राहु और केतु की भी विशेष दृष्टि होती है और इस दृष्टि का बहुत महत्त्व है, यदि इस दृष्टि की अवहेलना की जाए तो फलादेश कई एक परिस्थितियों में वस्तुस्थिति के सर्वथा प्रतिकूल निकलता है । राहु और केतु प्रत्येक अन्य ग्रह की भांति निज स्थान से सप्तम स्थान को तो पूर्ण दृष्टि से देखते ही हैं उनकी विशेष दृष्टि बृहस्पति की भांति पंचम तथा नवम स्थान पर भी पूर्ण होती है ।

3. राहु तथा केतु जिन ग्रहों के साथ स्थित हों उनका प्रभाव भी राहु-केतु की उपर्युक्त दृष्टि में रहता है क्योंकि ये ग्रह छाया ग्रह हैं और अपनी स्वतन्त्र सत्ता नहीं रखते ।

4. राहु तथा केतु अधिष्ठित राशि के स्वामी का प्रभाव जहां भी युति अथवा दृष्टि द्वारा पड़ रहा हो उस प्रभाव में राहु अथवा केतु का क्रमशः स्वभाव

रहता है, अर्थात् राहु का स्वामी शनि बन रोग, पृथकता, विलम्ब, अड़चन आदि उत्पन्न करेगा और केतु का स्वामी मंगल बन अग्निकाण्ड, चोट, चोरी, मारना आदि घटनाओं को घटित करेगा, चाहे वह ग्रह गुरु जैसा नैसर्गिक शुभग्रह ही क्यों न हो। अतः गुरु आदि शुभ ग्रह की दृष्टि पर विचार करते समय इस बात पर भी विचार कर लेना चाहिए कि कहीं ये शुभ ग्रह राहु अथवा केतु अधिष्ठित राशि के स्वामी तो नहीं हैं।

5. लग्नेश, पंचमेश नवमेश साधारणतया अग्नि के प्रतिनिधि हैं क्योंकि लग्न, पंचम तथा नवम स्थान अग्नि स्थान हैं। इसी प्रकार द्वितीयेश, षष्ठेश, दशमेश, पृथ्वी तत्व को दर्शाते हैं। तृतीयेश, सप्तमेश तथा एकादशेश वायु तत्व को दर्शाते हैं, परन्तु जब इन लग्नादि भावों में कोई ग्रह विद्यमान हो तो लग्नेश आदि उस ग्रह के तत्व के परिचायक होंगे न कि उस भाव के। जैसे, मान लीजिए द्वादश स्थान में केतु या मंगल स्थित हैं और द्वादश स्थान में मीन राशि है। यहां यद्यपि द्वादश स्थानाधिपति होने के नाते तथा एक जलीय राशि मीन का स्वामी होने के नाते गुरु को जल का प्रभाव करना चाहिए: परन्तु नहीं, गुरु अग्नि का ही प्रभाव डालेगा। इसी प्रकार अन्यत्र भी समझ लेना।

6. वास्तव में उपर्युक्त सिद्धान्त के पीछे एक अन्य मौलिक सिद्धान्त काम कर रहा है। वह मौलिक सिद्धान्त यह है कि प्रत्येक ग्रह चाहे वह नैसर्गिक पापी हो अथवा नैसर्गिक शुभ ग्रह, उस ग्रह के स्वभाव आदि का फल देगा जो ग्रह उसकी राशि में स्थित है। मान लीजिए कि धनु राशि में मंगल स्थित है। अब धनु राशि के स्वामी गुरु में बहुत हद तक मंगल का स्वभाव काम करेगा और गुरु की दृष्टि अथवा योग गुरु की दृष्टि अथवा योग न रहकर मंगल की युति अथवा दृष्टि का योग बन जाएगा। ऐसी स्थिति में फल का भिन्न हो जाना स्वाभाविक तथा अनिवार्य है।

गुरु, बुध, चन्द्र तथा शुक्र नैसर्गिक शुभ ग्रह हैं। सूर्य पापी नहीं, परन्तु क्रूर ग्रह है। मंगल, शनि, राहु तथा केतु नैसर्गिक पापी ग्रह हैं। बुध तथा चन्द्र की शुभता में तारतम्य आता रहता है। बुध तो यदि अकेला हो तो शुभ,

शुभ ग्रहों के साथ हो तो भी शुभ, परन्तु पापी ग्रहों के साथ हो तो पापी बन जाता है। चन्द्र जितना ही सूर्य के समीप हो उतना निर्बल और जितना सूर्य से दूर हो उतना ही बलवान् हो जाता है। सूर्य के 6 तिथि इस ओर शुक्ल पक्ष में तथा 6 तिथि उस ओर कृष्ण पक्ष में चन्द्र क्षीण बली माना जाता है, तब इसका प्रभाव पाप ग्रहों जैसा हो जाता है। चन्द्र के सम्बन्ध में एक और बात याद रखने की यह है कि चन्द्र सूर्य के समीप होता हुआ भी बलवान् समझा जाएगा यदि सूर्य स्वयं निर्बल हो। जैसे सूर्य तुला राशि के चतुर्थ स्थान में हो और चन्द्र वृश्चिक राशि द्वितीय तिथि का पंचम भाव में तो भी चन्द्र बलवान समझा जाएगा। क्योंकि यहां सूर्य स्वयं तुला राशि में भी निर्बल है और चतुर्थ केन्द्र में भी दिक् बल को खोकर निर्बल है।

7. जो भाव अपने स्वामी द्वारा दृष्ट हो तथा उस भाव पर शुभ दृष्टि भी हो जो कि निज भाव को देख रहा हो तो स्वामी द्वारा दृष्ट भाव की बहुत वृद्धि होती है। जैसे, तुला राशि मेंमंगल पंचम स्थान मेंपड़ा हो और गुरुद्वादशस्थानअथवासप्तम स्थान में हो तो मंगल की दृष्टि अपनी निज राशि मेष पर पड़ेगी और मेष अथवा मंगल शुभ दृष्ट भी होंगे तो ऐसी स्थिति में एकादश भाव से सम्बद्ध लाभ बहुत बढ़ जाएगा। परन्तु यह मंगल की दृष्टि लाभ भाव द्वारा प्रदर्शित बड़े भाई के जीवन
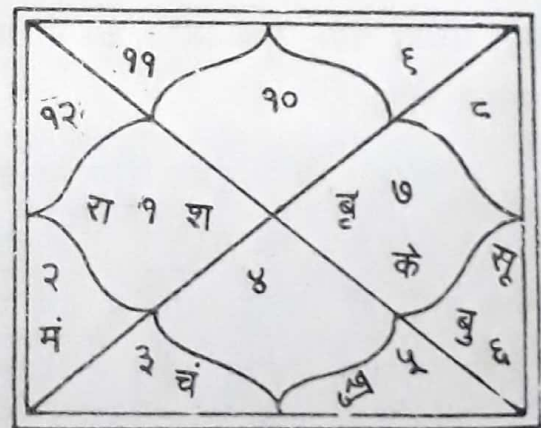
कु० सं० 4

के लिए हानिकारक ही रहेगी अर्थात् कुण्डली वाले के बड़े भाई के अल्पायु होने तथा स्वल्प संख्या में होन का अनिष्ट बना रहेगा। दूसरे शब्दों में उक्त सिद्धान्त का लाभ धन के क्षेत्र में है न कि जीवन के क्षेत्र में।

8. वक्री ग्रह विशेष बलवान् हो जाता है । उदाहरण के लिए यदि वृश्चिक लग्न हो और पुत्र भाव का स्वामी गुरु द्वादश अनिष्ट स्थान में अनिष्ट शत्रु राशि तुला में भी हो, परन्तु यदि वक्री है तो कम से कम दो पुत्र अवश्य देगा ।

9. शुक्र द्वादश स्थान में बहुत प्रसन्न रहता है क्योंकि शुक्र एक भोगात्मक ग्रह है और द्वादश स्थान भोग का स्थान है । अतः शुक्र जिसकी कुण्डली में द्वादश स्थान में होता है वह बहुधा स्त्री-सुख वाला, भोगी रहता है । इसी प्रकार शुक्र छठे स्थान में भी धन सम्बन्धी शुभ फल ही देता है । 'भावार्थ रत्नाकर' तथा उत्तरकालामृत आदि ग्रन्थकारों की भी यही सम्मति है ।

10. किसी ग्रह से अथवा भाव से कोई ग्रह दशम स्थान में स्थित हो तो समझना चाहिए कि पूर्वोक्त ग्रह पर दशमस्थ ग्रह का प्रभाव है । इसे आप केन्द्र प्रभाव भी कह सकते हैं । जैसे पंचम भाव में गुरु हो और द्वितीय भाव में शनि तो यद्यपि शनि की प्रसिद्ध दृष्टि गुरु पर नहीं पड़ रही तथापि गुरु पर शनि का उतना ही प्रभाव माना जायेगा जितना कि शनि की दृष्टि का ।

11. जब किसी शुभ भाव (लग्न, द्वितीय, चतुर्थ, पंचम, सप्तम, नवम, दशम) का स्वामी नीच राशि में पड़ा हो, परन्तु उसको नीच भंग प्राप्त हो तो नीचता के भंग का फल उस भाव के लिए जिसका कि वह नीच ग्रह स्वामी है अतीव शुभ होता है । जैसे सिंह लग्न हो और सूर्य तृतीय भाव में तुला राशि का नीच होकर नीच भंग को प्राप्त हो तो लग्न के लिए जिसका कि सूर्य स्वामी है अतीव शुभ होगा अर्थात् उच्च पदवी, राज्य, शासन, धन, स्वास्थ्य, यश, पदवी आदि विशेष रूप से प्रदान करेगा । नीच भंग राज योग निम्न प्रकार से बना माना जाता है:–

(i) जब नीचस्थ ग्रह की नीच राशि का स्वामी सूर्य अथवा चन्द्र से केन्द्र में हो;

(ii) जब वह ग्रह लग्न अथवा चन्द्र से केन्द्र में स्थित हो जो कि नीच ग्रह की उच्च राशि का स्वामी है । जैसे उपरोक्त उदाहरण में मंगल;

(iii) जब नीचस्थ ग्रह लग्न अथवा चन्द्र से केन्द्र में हो;

(iv) नीचस्थ ग्रह की नीच राशि का स्वामी तथा उसी नीच ग्रह की उच्च राशि का स्वामी दोनों एक-दूसरे के केन्द्र में हों; जैसे उपरोक्त उदाहरण में शुक्र तथा मंगल हैं;

(v) जब नीचस्थ ग्रह को उसकी नीच राशि का स्वामी देखता हो;

(vi) जब वह ग्रह लग्न अथवा चन्द्र से केन्द्र में हो जो ग्रह की नीच राशि में उच्च होता है; जैसे उपरोक्त उदाहरण में शनि है।

12. ग्रह अपना फल तो करते हैं, परन्तु वे जब ऐसी स्थिति में हों कि उनकी राशि में कोई ग्रह हो तो वे उस ग्रह का फल अवश्य करते हैं। जैसे धनु राशि में मंगल हो तो गुरु मंगल का प्रभाव डालेगा और मारण आदि कृत्य करेगा (देखिए कु० सं० 5)।

इस कुण्डली के जातक की मृत्यु अग्नि द्वारा हुई। यहां मरण विधि के द्योतक अंगों, अर्थात् लग्न, लग्नेश, अष्टम, अष्टमेश सभी पर शनि की पूर्ण दृष्टि है, अतः शनि निश्चित रूप से मरण विधि को बताने वाला ग्रह है। साधारणतया आप कह सकते हैं कि वायु विकार से मृत्यु होनी चाहिए, क्योंकि शनि की मूल त्रिकोण राशि कुम्भ द्वादश जलीय स्थान में है और इसलिए शनि पानी का द्योतक है। परन्तु नहीं, शनि को हमें आग समझना होगा, क्योंकि शनि, अग्नि द्योतक ग्रहों, सूर्य तथा मंगल से अधिष्ठित राशि का स्वामी है।
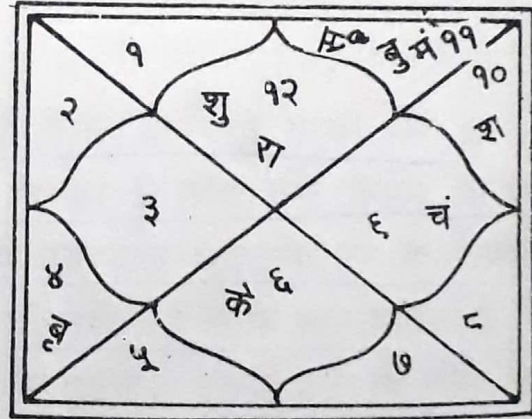
कु० सं० 5

13. यदि कोई ग्रह तीनों लग्नों से शुभ निकलता हो और बली हो तो विशेष शुभकर होता है (देखिए कु० सं० 6)।

कु० सं० 6

यह जन्म कुण्डली वाई. बी. चौहान, भूतपूर्व मन्त्री, भारत सरकार की है। लग्न कुम्भ है, चन्द्र लग्न कन्या है। इन लग्नों के स्वामी शनि तथा बुध परस्पर मित्र हैं। अतः तीनों लग्नें एक ही श्रेणी की हैं। तीनों लग्नों से शुक्र राजयोग कारक है और वह उच्च राशि में है और पूर्ण शुभ चन्द्र द्वारा दृष्ट है। पाप दृष्ट नहीं है। अतः शुक्र असाधारण रूप से बली होकर राज्य तथा सुख देता है।
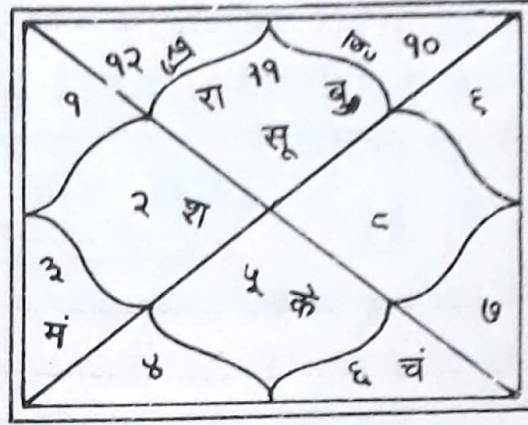
3. प्रथम भाव अथवा लग्न

रंग, रूप, कद, आकृति स्वभाव, सुख-समृद्धि, यश, मान, आजीविका

1. द्वादश भावों के विषयों का वैज्ञानिक क्रम--पहला भाव जन्म भाव कहलाता है। मनुष्य के लिए संसार में सबसे पहली घटना उसका जन्म है। जन्म से जो-जो वस्तुएं मनुष्य को प्राप्त होती हैं उन सब का विचार प्रथम भाव से होता है: जैसे—मनुष्य की जाति, रंग—रूप, कद (Stature), जन्म-स्थान, जन्म-समय की बातें आदि। मनुष्य को जन्म से शरीर मिलता है और प्रभु का विधान है कि जन्म पाकर द्वादश स्थान अर्थात् मोक्ष तक पहुंचे। इस यात्रा में उत्तरोत्तर विकास के लिए जिन-जिन वस्तुओं की मनुष्य को आवश्यकता पड़ती है, वे सब बीच वाले, दो से ग्यारह तक के स्थानों से दर्शायी हैं। कुण्डली में विकास का क्रम है। जैसे यदि मनुष्य को शरीर तो मिल गया परन्तु यदि शिशु को दूध न मिले, खाद्य पदार्थ न मिलें तो शरीर चल नहीं सकता। यही कारण है कि खाद्य सामग्री तथा अन्य धन का सम्बन्ध द्वितीय स्थान से है। फिर धन बिना परिश्रम के न उत्पन्न होता है न टिक सकता है, अतः तृतीय स्थान परिश्रम, बल, बाहु आदि का है। शरीर, धन, परिश्रम तभी सार्थक हैं जब कार्य करने की रुचि और भावना हो। अतः भावनाओं, कामनाओं (desires) अर्थात् मन का स्थान विकास क्रम में चतुर्थ रखा गया है। व्यक्ति के पास शरीर, धन, परिश्रम, इच्छा शक्ति सब कुछ हो, परन्तु यदि उसको कार्य विधि का ज्ञान अर्थात विचार शक्ति प्राप्त न हो तो जीवन

आगे नहीं चल सकता । अतः पंचम भाव में विचार-शक्ति को मन के अनन्तर स्थान दिया जाना विकास क्रम के अनुरूप ही है । फिर शरीर, धन, परिश्रम, इच्छा-शक्ति, विचार-शक्ति सब कुछ हो, परन्तु यदि मनुष्य सांसारिक विरोधी शक्तियों, अड़चनों, कठिनाइयों में से वस्तुतः न निकले तो उसको कुशलता तथा सफलता नहीं प्राप्त हो सकती, अतः षष्ठ भाव को कठिनाइयों, अड़चनों अर्थात् शत्रुता का स्थान मानना विकास योजना के अनुकूल ही है ।

परन्तु यदि मनुष्य में वीर्य-शक्ति तथा दूसरों से मिलकर चलने की शक्ति न हो तो भी वह संसार में सफल ही समझा जाएगा । अतः जीवन साथी, भागीदार, वीर्य आदि का विचार विकासोचित आधार पर ही सप्तम भाव से किया जाता है । मनुष्य के उपरोक्त सभी गुण और उसकी साधनाएं निष्फल हो जाएंगी यदि वह अपने साथ आयु लेकर न आया हो: अतः आयु का विचार अष्टम भाव से करना विकास क्रम में कहा है । हमारे शास्त्र आयु को धर्म की देन समझते हैं । अतः शुभ जीवन आध्यात्मिक उन्नति ही जीवन की गारण्टी है । अतः नवम स्थान धर्म का है । धर्म निस्वार्थ जीवन के बिना यज्ञीय परोपकारमय कर्मों के बिना टिक नहीं सकता, अतः कर्म का स्थान दसवां ठहराया गया । परन्तु यज्ञीय कर्मों को एक नैसर्गिक शुभता और निष्ठा की हद तक पहुंचाना, जहां शुभता स्वाभाविक हो जाए तथा पूर्णतया प्राप्त हो जाए, प्राप्ति स्थान का काम है, अतः एकादश को प्राप्ति स्थान कहा है और द्वादश तो परिणामस्वरूप मोक्ष अपवर्ग है ही । अतः मनुष्य के संसार में आने के उदेद्श्य को जहां धर्म बताता है (भोगापवर्गार्थ दृश्यम्-योग शास्त्र) वहां कुण्डली भी अपने विकास क्रम से इसी तथ्य को व्यक्त करती है ।

2. सूर्य लग्न तथा चन्द्र लग्न भी लग्न भाव—इस सम्बन्ध में यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि जिन भावों में सूर्य तथा चन्द्र हों उनको भी लग्न भाव ही की भांति समझना चाहिए । अर्थात् जब भावादि की गणना की जाए तो लग्न से जितने संख्या वाले भाव का विचार किया जाए, चन्द्र लग्न (तथा सूर्य लग्न) से भी उसी संख्या वाले भाव का विचार करना चाहिए । देवकेरलकार लिखते हैं—

चन्द्रलग्नं शरीरं स्यात्, लग्नं स्यात् प्राणसंज्ञकम् ।
ते उभे संपरीक्ष्यैव सर्वं नाडीफलं स्मृतम् ।।

अर्थात् चन्द्र लग्न शरीर है, लग्न प्राण है, इन दोनों का सम्यक् विचार करने के अनन्तर ही कुण्डली का फल कहना चाहिए ।

एक अन्य संदर्भ में देवकेरलकार ने इस बात को और भी अधिक स्पष्ट कर दिया है । वे कहते हैं–

त्रयाणाम् पुत्रनाथानां लग्नात् चन्द्रात् च भास्करात् ।
स्फुटयोगं गते जीवे पुत्रलाभं विनिर्दिशेत् ।।

अर्थात् जब गुरु का पूरा योग लग्न से पंचमेश, सूर्य लग्न से पंचमेश तथा चन्द्र लग्न से पंचमेश के साथ गोचर में होता हो उस समय पुत्र की प्राप्ति को कहना चाहिए । अतः तीनों लग्नों द्वारा प्रत्येक विषय का विचार करना अत्यधिक लाभदायक रहता है ।

3. प्रथम भाव और सुदर्शन पद्धति–सुदर्शन पद्धति के अनुसार समस्त भावों का विचार तीन लग्नों से किया जाता है अर्थात् (i) लग्न से, (ii) सूर्य से और (iii) चन्द्र लग्न से । जब एक ही ग्रह तीनों ही लग्नों से एक ही भाव का स्वामी हो जाता है तो स्पष्ट है कि वह उस भाव का अधिकतम प्रतिनिधित्व करेगा । इसका अर्थ यह है कि उस ग्रह पर पाप प्रभाव अधिकतम अनर्थ का उत्पादक होगा, अपेक्षाकृत उस अवस्था के जबकि वह ग्रह केवल एक ही लग्न से उस भाव का स्वामी हो । जैसे लग्न मेष हो और चन्द्रलग्न कन्या हो तो शुक्र लग्न से भी और चन्द्र लग्न से भी द्वितीय भाव का स्वामी होगा, अतः स्पष्ट है कि यदि बलवान् होकर तथा शुभयुक्त अथवा शुभ दृष्ट होकर स्थित होगा, तो मुख के सौन्दर्य को अधिक प्रकट करेगा । अतः दो अथवा तीन लग्नों द्वारा एक ही तथ्य के द्योतक ग्रहों का स्वरूप निश्चित करके कुण्डली का फल कहना चाहिए ।

4. जन्मकालीन ग्रहों से देह की रचना आदि का ज्ञान–जब जलीय ग्रहों का योग दूसरे ग्रहों की अपेक्षा लग्न से अधिक रहता है तो मनुष्य स्थूल (मोटे) शरीर वाला होता है। इस सम्बन्ध में सर्वार्थचिन्तामणिकार लिखते हैं–

लग्ने जलऋक्षे शुभखेचरेन्द्रैर्युक्ते तनु स्थौल्यमुदाहराप्ति ।
लग्नाधिपस्तोयखगो बलाढ्यः सौम्यान्वितश्चेत्तनु पुष्टिमाहुः ।।

अर्थात् यदि लग्न में जल राशि स्थित हो और शुभ ग्रहों से युक्त हो अथवा लग्नाधिपति जलीय ग्रह होता हुआ बलवान् हो तथा शुभ ग्रह युक्त हो तो मनुष्य स्थूल शरीर वाला होता है।

शरीर का कद– जन्मद्योतक लग्न आदि उपरोक्त 6 अंगों पर जब शनि, राहु, बुध, गुरु आदि दीर्घाकार ग्रहों का प्रभाव दृष्टि अथवा 'योग' द्वारा होता है तो मनुष्य का शरीर लम्बा होता है। जब मंगल, शुक्र आदि छोटे कद वाले ग्रहों का प्रभाव रहता है तो शरीर छोटे कद का होता है और मिश्रित प्रभाव से मध्यम कद प्राप्त होता है।

5. बालारिष्ट–लग्न शिशु अवस्था को जतलाता है। अतः यदि लग्नेश तथा चन्द्र आदि जन्म द्योतक ग्रह बलवान् हों तो शिशु अवस्था सुख से व्यतीत होती है और बालारिष्ट नहीं होता, अन्यथा बालारिष्ट होता है।

वराह मिहिर ने बालारिष्ट अध्याय में बृहज्जातक में कहा है–

क्षीणे हिमगौ व्ययगे पापैरुदयाष्टमगैः,
केन्द्रेषु शुभाश्च न चेतत् क्षिप्रं निधनं प्रवदेत् ।

अर्थात् जब व्यय स्थान में चन्द्र हो, लग्न तथा अष्टम स्थान में पाप ग्रह हों, केन्द्र स्थानों में कोई शुभ ग्रह न हो तो बालक शिशु अवस्था में शीघ्र ही मर जाता है। चन्द्र लग्न रूप होने से जब व्यय स्थान में होगा तो लग्न अर्थात् शरीर का नाश होगा, पाप ग्रह जब लग्न तथा अष्टम भाव में होंगे तब भी आयु की हानि होगी, क्योंकि लग्न और अष्टम दोनों भाव आयु के

भाव हैं। फिर कहा है कि केन्द्र में शुभ ग्रह न हों, स्मरण रहे कि जब केन्द्र में कोई ग्रह होता है तो उसका प्रभाव सदा लग्न पर पड़ता है। अतः केन्द्रों के शुभ ग्रहों से शून्य होने का अर्थ यह हुआ कि लग्न को इस शुभ स्थिति का बल भी नहीं मिल रहा।

6. लग्नेश में व्यापक शारीरिक अंगों की कल्पना——सूर्य यदि लग्नाधिपति हो तो हड्डी का द्योतक होता है, चन्द्र लग्नेश हो तो रक्त का, मंगल पट्ठों का, बुध त्वचा का, गुरु चर्बी का, शुक्र वीर्य का, शनि नस-नाड़ियों (Nerves) का प्रतिनिधि होता है। यदि लग्नेश सूर्य निर्बल अथवा पाप प्रभाव से पीड़ित हो तो हड्डी में कष्ट, चन्द्र लग्नेश इस प्रकार का निर्बल तथा पाप प्रभाव में हो तो रक्त विकार, मंगल ऐसा हो तो पट्ठों के रोग, सूखा (Atrophy of Muscles) आदि, बुध ऐसा हो तो त्वचा के रोग, गुरु ऐसा हो तो चर्बी के रोग, शुक्र ऐसा हो तो वीर्य के रोग, शनि ऐसा हो तो नसों (Nerves) के रोगों को देता है– (देखो कु० सं० 7)।
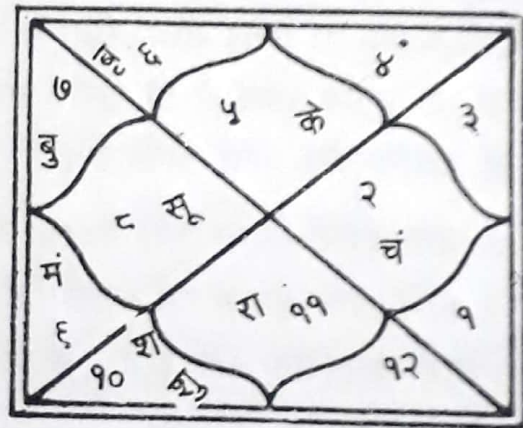
कु० सं० 7

यहां सूर्य लग्नेश है, अतः हड्डी का द्योतक है। केतु अधिष्ठित राशि का स्वामी होने से हड्डी में कष्ट की सम्भावना है। सूर्य की चतुर्थ भाव में (स्त्री भावों में) स्थिति तथा दिक् बल से शून्य होने की स्थिति सूर्य को निर्बल करती है। यह निर्बलता इसलिए भी है कि सूर्य के एक ओर केतु मंगल का तथा दूसरी ओर राहु शनि का पाप प्रभाव है, अतः समुद्री जहाज के मस्तान से इस व्यक्ति का गिरना और गिरकर हड्डियों का टूटना युक्ति युक्त है।

7. विशेष अंगों में कष्ट–लग्नेश यदि निर्बल तथा पाप युक्त अथवा पाप दृष्ट हो तो लग्न में स्थित राशि के अनुसार प्रदर्शित काल पुरुष के

अंग में रोग आदि कष्ट होता है। लग्न मेष हो तो निर्बल एवं पाप प्रभाव में आया हुआ मंगल सिर में कष्ट देता है। लग्न वृष हो तो निर्बल एवं पाप प्रभाव में आया हुआ शुक्र मुख में; लग्न मिथुन हो तो उपर्युक्त दशा वाला बुध सांस की नली में; लग्न कर्क हो तो उपर्युक्त प्रकार का चन्द्र फेफड़ों तथा छाती में; लग्न सिंह हो तो उपर्युक्त प्रकार का सूर्य दिल तथा पेट में; लग्न कन्या हो तो उपर्युक्त प्रकार का बुध अन्तड़ियों में; लग्न तुला हो तो उपर्युक्त प्रकार का शुक्र मूत्रेन्द्रिय में; लग्न वृश्चिक हो तो उपर्युक्त प्रकार का मंगल अण्डकोषों में; लग्न धनु हो तो उपर्युक्त प्रकार का गुरु नितम्बों (Hips) में; लग्न मकर हो तो उपर्युक्त प्रकार का शनि जानुओं (Knees) में; लग्न कुम्भ हो तो उक्त प्रकार का शनि टांगों के निचले भाग में; तथा लग्न मीन हो तो उपर्युक्त प्रकार का निर्बल तथा पाप प्रभाव स्थित गुरु पांवों में रोग, चोट आदि कष्ट देता है।

8. लग्न में स्थित ग्रह और रोग– लग्न में जो ग्रह आ जाता है वह निज धातु का और भी पक्का प्रतिनिधि बन जाता है और फलस्वरूप, यदि ऐसा ग्रह पापयुक्त अथवा पापदृष्ट हो तो, वह धातु व्याधिग्रस्त हो जाती है।

जैसे लग्न में पड़ा मंगल यदि पापदृष्ट हो अथवा शुभ दृष्टियोग से हीन हो तो पट्ठों में रोग देता है। बुध, जो त्वचा का प्रतिनिधि है, जब लग्न में स्थित हो (अथवा सूर्य अथवा चन्द्र के साथ स्थित हो) और पापयुक्त एवं पापदृष्ट हो तो फुलबहरी आदि चर्म रोगों को उत्पन्न करने वाला होगा (देखो कु० सं० 8)। इसी प्रकार गुरु यदि लग्न में पापयुक्त अथवा पापदृष्ट हो तो जिगर आदि के रोगों को देने वाला होता है। इसी प्रकार लग्न में
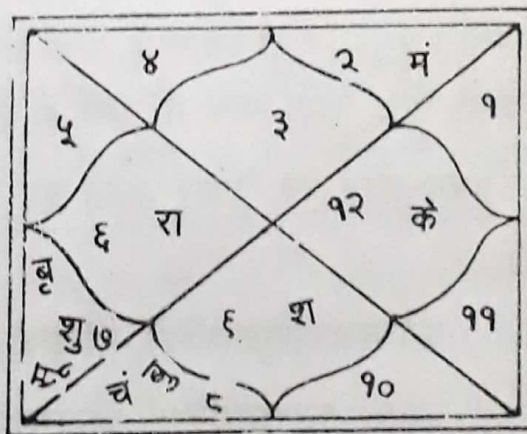
कु० सं० 8

पड़ा शुक्र पापयुक्त अथवा पापदृष्ट हो तो वीर्य के अथवा मूत्रेन्द्रिय के रोगों को उत्पन्न करने वाला होता है । शनि, यदि लग्न में पापयुक्त अथवा पापदृष्ट हो तो नसों (Nerves) के रोगों–– अधरंग, कम्पन, पोलियो आदि को उत्पन्न करता है ।

इस व्यक्ति को फुलबहरी नाम का त्वचा का रोग है । यहां इस रोग का मुख्य कारण बुध है जो पहले तो राहु अधिष्ठित राशि का स्वामी है, अतः रोग लिए हुए है, फिर वह रोग स्थान में है, फिर चन्द्र लग्न में है और केतु की दृष्टि में है । बल्कि रोगेश मंगल की दृष्टि में भी है और फिर बुध के एक तरफ शनि और दूसरी तरफ शनि अधिष्ठित राशि का स्वामी गुरु है, अतः बुध त्वचा रोग से पीड़ित है ।

9. नीच लग्नेश और रोग–लग्नेश यदि नीच हो तो प्रायः उस अंग में रोग, पीड़ा आदि कष्ट देता है जिस अंग के भाव में वह नीच होकर बैठता है । मेष लग्न का स्वामी मंगल चतुर्थ स्थान में काल पुरुष के चतुर्थ अंग से सम्बद्ध रोगो––फेफड़ों तथा छाती के रोगों को देगा । वृषभ लग्न का स्वामी शुक्र, पंचम स्थान में नीच होकर पंचम भाव से सम्बद्ध पेट में, नीच का होकर स्थित हो तो घुटनों में कष्ट देता है, परन्तु थोड़ा ही । क्योंकि दशम स्थान प्रमुख केन्द्र स्थान है, जहां ग्रह बलवान् हो जाते हैं । कर्क लग्न का स्वामी चन्द्र पंचम भाव में नीच हो तो पेट में जलीय रोग देता है ।

वृषभ लग्न पर विचार करते हुए देवकेरलकार ने पृष्ठ 13 पर कहा है कि–

ज्येष्ठभ्रातृसुताधीशे नीचांशे शुभवीक्षिते ।
ज्येष्ठभ्रातृसुतारिष्टं जलगण्डं विनिर्दिशेत् ।।

अर्थात् जब चन्द्र सप्तम भाव में नीच हो तो मनुष्य के ज्येष्ठ भ्राता के बेटे को जलगण्ड (Pleurisy) का रोग होता है । बड़े भाई का स्थन एकादश है और उसका पुत्र उसके स्थान से पंचम अर्थात् कुण्डली का तृतीय स्थान

हुआ । तृतीयाधिपति चन्द्र जब नीच होगा तो उपर्युक्त नियमानुसार पेट में कष्ट देगा ही । चन्द्र चूंकि जलीय ग्रह है तथा जलीय राशि में नीच हुआ है, अतः जलगण्ड (पेट में जल भर जाना) नाम के रोग को देता है (देखो कु० सं० 9) ।

कु० सं० 9
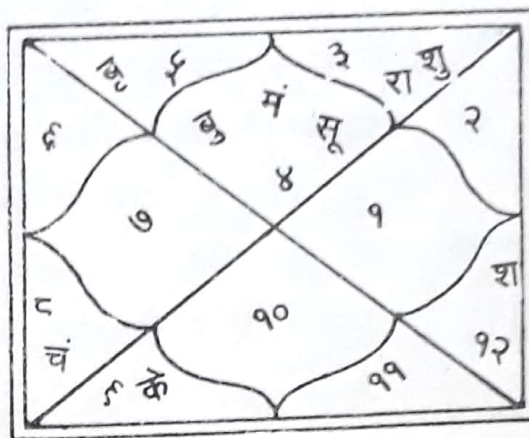
10. सिंह लग्न का स्वामी सूर्य यदि तृतीय भाव में नीच हो तो बाहु अथवा सांस की नली में कष्ट होता है, परन्तु थोड़ा । कन्या लग्न का स्वामी बुध सप्तम भाव में नीच हो तो वीर्य सम्बन्धी दोष देता है । तुला लग्न का स्वामी शुक्र यदि द्वादश भाव में नीच होकर स्थित हो तो आंखों तथा पांवों में थोड़ा कष्ट देता है । वृश्चिक लग्न का स्वामी मंगल यदि नवम भाव में नीच होकर स्थित हो तो नितम्ब (Hips) स्थान में कष्ट होता है । धनु लग्न का स्वामी गुरु यदि द्वितीय स्थान में नीच राशि का होकर स्थित हो तो मुख में कोई दोष होता है । मकर लग्न का स्वामी शनि यदि चतुर्थ स्थान में नीच राशि का होकर स्थित हो तो छाती के रोग देता है । कुम्भ लग्न का स्वामी शनि यदि तृतीय स्थान में नीच होकर पडा हो तो सांस की नली में कष्ट होता है । मीन लग्न का स्वामी गुरु यदि एकादश स्थान में नीच राशि का होकर स्थित हो तो पांव में थोड़ा कष्ट कभी-कभी होता है: अधिक नहीं, क्योंकि गुरु एकादश स्थान में बहुत बलवान् हो जाता है ।

11. लग्न तथा आयु–लग्नेश, चन्द्र, सूर्य, शनि, अष्टम तृतीय आदि भावों तथा उनके स्वामियों के बली होने से शरीर बली होता है और उससे आयु की प्राप्ति होती है, अतः उपर्युक्त ग्रहों का बलवान् होना दीर्घायु देने वाला होता है ।

लग्न भाव आयु भाव भी माना जाता है। जीवन और मृत्यु का घनिष्ठ सम्बन्ध है। अतः लग्न आयु तथा मृत्यु दोनों का द्योतक है। जिस प्रकार के ग्रह लग्न तथा लग्नेश को प्रभावित करते हैं; उसी प्रकार के रोग आदि द्वारा मनुष्य की मृत्यु होती है। जैसे यदि मंगल लग्न तथा लग्नाधिपति आदि मृत्यु द्योतक अंगों को, अपने योग अथवा दृष्टि द्वारा पीड़ित कर रहा हो तो मनुष्य की मृत्यु आग, गोली, चोट, घाव इत्यादि द्वारा होती है।

मृत्यु गोली से होगी अथवा चोट से आदि प्रश्नों का सूक्ष्म विवरण देखने के लिए देखिए हमारी पुस्तक 'ज्योतिष और रोग' तथा संलग्न कुण्डली संख्या 10।
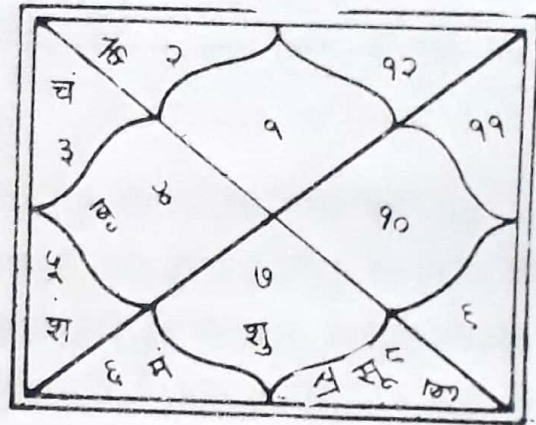
कु० सं० 10

लग्न को अग्निरूप मंगल देखता है। लग्न को देखनेवालाशुक्रकेतुअधिष्ठित राशि का स्वामी है। अष्टम भाव में बुध अग्निरूप है क्योंकि बुध मंगल अधिष्ठित राशि का स्वामी है। लग्नेश मंगल पर भी अग्निरूप केतु की पंचम दृष्टि है।

यदि गुरु, मंगल तथा सूर्य मीन राशि में सप्तम भाव में स्थित हों तो मनुष्य की मृत्यु जल में डूबकर होती है। कारण यह है कि गुरु जल केन्द्र चतुर्थ भाव का स्वामी होता है, मंगल अष्टम (जलीय) भाव का तथा सूर्य द्वादश जलीय भाव का। अर्थात् लग्न पर तीन जलीय प्रभाव पड़ते हैं।

12. लग्न और आजीविका—लग्न कुण्डली का सार तथा सर्वस्व है। यह धन भी है और उपार्जन करने वाला निज (Self) भी है। (i) लग्न पर, (ii) लग्नेश पर, (iii) सूर्य लग्न पर, (iv) सूर्य लग्नेश पर, (v) चन्द्र पर ग्रहों की स्थिति, दृष्टि, मध्यत्व आधिपत्य आदि द्वारा प्रभाव देखो। इन 6 अंगों पर पड़ने वाले ग्रहों के प्रभाव को गिनो कि सूर्य के कुल प्रभाव कितने

हैं। चन्द्र के कुल प्रभाव कितने हैं, मंगल के कुल प्रभाव कितने हैं इत्यादि। जिस ग्रह के सबसे अधिक प्रभाव हों वह ग्रह और उस ग्रह पर पड़ने वाले ग्रहों के प्रभाव के अध्ययन से उनमें सांझी (Common) बात निकालो। वह सांझी बात मनुष्य की आजीविका (Profession) को दर्शाती है: जैसे सबसे अधिक प्रभाव डालने वाला सूर्य हो और उस पर नवमाधिपति अथवा दशमाधिपति गुरु का प्रभाव हो तो मनुष्य राज्य-कार्य का कर्त्ता होगा क्योंकि सूर्य राज्यकर्त्ता है और गुरु 'राज्य-कृपा' कारक है। नवम तथा दशम भाव भी राज्य तथा राज्य-कृपा से सम्बद्ध है। अतः राज्याधिकारी होना दोनों में साझा है। विशद विवरण के लिए देखिए हमारी पुस्तक 'व्यवसाय का चुनाव'।

13. लग्नाधियोगसेधनी–चन्द्राधियोग का उल्लेख करते हुए सारावलीकार ने लिखा है–

षष्ठं द्यूनमथाष्टमं शिशिरगोः प्राप्ताः समस्ताः शुभाः,
क्रूराणां यदि गोचरे न पतिता भान्वालयाद् दूरतः।।
भूपालः प्रभवेत् सः यस्य जलधेर्येलावनन्तोद्भवैः,
सेनामत्तकरीन्द्रदानसलिलं भृंगैर्मुहुः पीयते।।

अर्थात् जिस व्यक्ति की कुण्डली में चन्द्रमा से छठे, सप्तम तथा अष्टम भावों में शुभ ग्रह स्थित हों और यदि वे ग्रह न तो अशुभ ग्रहों के प्रभाव में हों और न ही सूर्य के समीप हों तो वह व्यक्ति बलशाली राजा होता है।

इस चन्द्र अधियोग की इतनी महिमा क्यों है ? कारण यह है कि चन्द्र लग्न समान है, जब चन्द्र बलवान होता है तो लग्न बलवान् समझनी चाहिए और बलवान् लग्न राज्य देती ही है। उपर्युक्त चन्द्र से षष्ठ, सप्तम तथा अष्टम भाव में शुभ ग्रहों की स्थिति चन्द्र को कैसे बलवान् बनाती है, यह बात इस प्रकार समझिए कि चन्द्र से सप्तम स्थान में स्थित ग्रह की शुभ दृष्टि तो चन्द्र पर सीधी पड़कर चन्द्र लग्न को बलवान् करेगी ही। बाकी रही षष्ठ तथा अष्टम में शुभ ग्रहों की स्थिति की बात, इस स्थिति में एक शुभ ग्रह

तो चन्द्र के एक ओर अर्थात् द्वादश स्थान पर और दूसरा शुभ ग्रह चन्द्र के दूसरे ओर अर्थात् द्वितीय भाव पर शुभ प्रभाव डालेगा जिसके फलस्वरूपचन्द्रकोएकप्रकार का शुभता का मध्यत्व प्राप्त हो जावेगा। दूसरे शब्दों में, अधियोग द्वारा चन्द्र शुभ ग्रहों के मध्यत्व में भी आ जाऐगा और दृष्टि में भी। इस प्रकार लग्न स्वरूप चन्द्र के धनादि शुभ फल देने में कुछ भी संशय नहीं रहता। यह व्यक्ति चन्द्राधियोग के कारण जीवन भर धन से खेलता रहा। देखिए- (कु० सं० 11)।
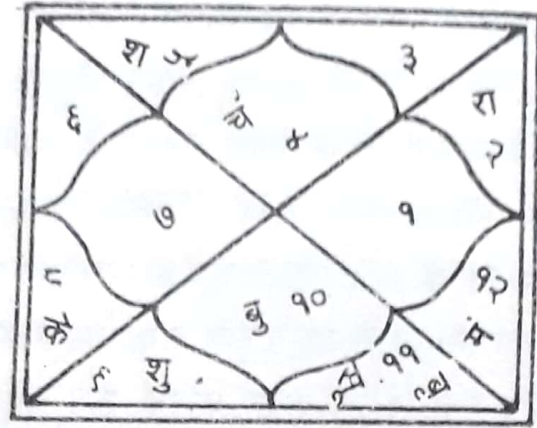
कु० सं० 11

यह नियम लग्नाधियोग पर भी लागू होगा। अर्थात् लग्न को भी शुभ दृष्टि तथा शुभ मध्यत्व मिलेगा जिसके फलस्वरूप लग्नाधियोग भी उत्तम धन का देने वाला होगा। यह तो स्पष्ट ही है कि यदि उन शुभ ग्रहों पर जो कि लग्न से अथवा चन्द्र से षष्ठ, सप्तम तथा अष्टम भाव में स्थित हैं, पाप प्रभाव होगा अथवा वे ग्रह यदि अस्त, अतिचारी आदि होकर निर्बल होंगे तो लग्न अथवा चन्द्र को लाभ न पहुंचा सकेंगे। इसी कारण उनके शुभ तथा बलवान होने की शर्त है।

लग्नाधियोग का उल्लेख भी सारावलीकार ने किया है और कहा है–

लग्नात्षष्ठमदाष्टमे यदि शुभाः पापैर्नयुक्तेक्षिताः,
मन्त्री दण्डपतिः क्षितेरधिपतिः स्त्रीणां बहुनां पतिः।
दीर्घायुर्गदवर्जितो गतभयो लग्नाधियोगे भवेत्
सच्छीलो यवनाधिराजकथितो जातः पुमान् सौख्यभाक्॥

अर्थात् जब लग्न से षष्ठ, सप्तम तथा अष्टम भाव में नैसर्गिक शुभ ग्रह स्थित हों और वे शुभ ग्रह पाप ग्रहों से युक्त दृष्ट न हों तो व्यक्ति

मन्त्री, दण्डपति अथवा राजा होता है जो कि बहुत ऐश्वर्ययुक्त, शीलवान् तथा सुखी होता है, ऐसा यवनाचार्य कहते हैं।

वैसे तो लग्नेश चूंकि मनुष्य का निज (Self) होता है, अतः जिस भाव से यह सम्बन्ध स्थापित करे मनुष्य उस भाव द्वारा प्रदर्शित वस्तुओं को प्राप्त कर लेता है। परन्तु जब लग्नेश तथा धनेश में व्यत्यय (Exchange) आदि द्वारा घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो जाए तो यह महाधन योग हो जाता है। यहां धन बाहुल्य में यह कारण है कि लग्न तथा धन स्थान दोनों 'धन' के द्योतक हैं। उसी सादृश्य (Principle of Similarity) को ध्यान में रखते हुए ही सम्भवतया सर्वार्थ चिन्तामणिकार ने कहा है—

लग्नेशे धनराशिस्थे, धनेशे लाभराशिगे।
लाभेशे वापि लग्नस्थे बहुनिध्यादिकं भवेत्॥

अर्थात् जब लग्न भाव का स्वामी धन भाव में स्थित हो, धन भाव का स्वामी लाभ अर्थात् ग्यारहवें भाव में स्थित हो अथवा लाभ भाव का स्वामी लग्न में स्थित हो तो मनुष्य को महान् निधि आदि धन की प्राप्ति होती है। कारण, धन के विषय में लग्न, द्वितीय तथा लाभ भाव का समान होना है।

14. लग्न और मान प्राप्ति— यदि लग्न, चन्द्राधिष्ठित राशि का स्वामी, सूर्य आदि लग्न द्योतक ग्रह बलवान् हों तथा शुभयुक्त अथवा शुभ दृष्ट हों और दशम तथा दशमाधिपति बलवान् हो तो मनुष्य को महान् मान तथा यश एवं कीर्ति की प्राप्ति होती है क्योंकि ये लग्नें मान तथा गौरव की द्योतक हैं।

15. राज्य शक्ति की प्राप्ति— यदि लग्नेश लग्न को, चन्द्राधिष्ठित राशि का स्वामी चन्द्र को और सूर्याधिष्ठित राशि का स्वामी सूर्य को देखे तो मनुष्य महान् नेता, शासक, राज्य की शक्ति वाला, मानी, मनस्वी तथा धनी होता है, क्योंकि अपने स्वामियों द्वारा दृष्ट लग्नें बलवान् होती हैं और लग्नों का बलवान् होना उपर्युक्त सभी सुखों को देने वाला होता है।

उपर्युक्त योग के पीछे वह सिद्धान्त कार्य कर रहा है जिसका उल्लेख ज्योतिष की इस प्रसिद्ध उक्ति में किया गया है कि "यो यो भावः स्वामियुक्तो दृष्टो वा तस्य तस्यास्ति वृद्धिः" अर्थात् जो–जो भाव अपने स्वामी द्वारा युक्त अथवा दृष्ट हो उस भाव की वृद्धि होती है। चूंकि लग्नें अपने-अपने स्वामी तथा शुभ ग्रहों द्वारा दृष्ट हैं और लग्न कुण्डली का सार सर्वस्व होती हैं, अतः ऐसे व्यक्तियों का महान् यशस्वी पदाधिकारी, राज्याधिकारी आदि विशेषणों से सुभूषित होना ज्योतिष के मौलिक सिद्धान्तों के अनुरूप ही है।

16. लग्न और मनुष्य का स्वभाव--मनुष्य के स्वभाव का विचार जहां चतुर्थ भाव, चतुर्थेश तथा चन्द्र पर पड़ने वाले शुभाशुभ प्रभाव द्वारा करना चाहिए वहां इस सन्दर्भ में लग्न का भी पर्याप्त महत्त्व है, क्योंकि लग्न जहां मनुष्य का सिर और विचार शक्ति है, वहां वह मानव का समष्टि रूप भी है। अतः जब लग्न तथा लग्नाधिपति शुभ प्रभावों में हो तो मनुष्य का स्वभाव शुद्ध सात्विक होता है और यदि अशुद्ध हों तो इसके विपरीत। सर्वार्थ चिन्तामणिकार ने कहा भी है–

लग्ने गुरौ दानवपूजितेन।
युक्ते यदा तस्य विशुद्ध चित्तम्॥

अर्थात् जब लग्न में गुरु, शुक्र से युक्त हो तो मनुष्य का मन शुद्ध होता है अर्थात वह सात्विक प्रकृति का होता है। परमहंस परिव्राजकाचार्य पूज्य स्वामी रामतीर्थ जी महाराज की कुण्डली में गुरु और शुक्र कन्या राशि में, सप्तम भाव में स्थित हैं। इस श्लोक के आशय के अनुरूप इसका फल यह होता है कि न केवल लग्नाधिपति शुभ ग्रह गुरु बनता है, अपितु लग्न तथा लग्नेश दोनों पर एक दूसरे नैसर्गिक शुभ ग्रह शुक्र का प्रभाव भी पड़ता है। इस सम्बन्ध में देवकेरलकार लिखते हैं–"लग्ने राहुयुते चन्द्रं मूर्खप्रकृतिः कोपवान्"। अर्थात् यदि लग्न में चन्द्र के साथ राहु हो तो मनुष्य मूर्ख स्वभाव वाला तथा क्रोधयुक्त होता है। राहु शनिवत् होने के कारण मूर्खता को जतलाता है। अतः जब इस अन्धकारमय ग्रह का प्रभाव लग्न तथा चन्द्र लग्न पर स्थिति

द्वारा पड़ेगा तो स्पष्ट है कि लग्न अर्थात् स्वभाव में मूर्खता तथा क्रोध आदि राहु के दुर्गुण आ जायेंगे।

लग्न और हिंसा वृत्ति— जब लग्न और लग्नाधिपति विशेष रूप से निर्बल हों और मन में हिंसा वृत्ति का योग भी बनता हो तो मनुष्य घातक होता है। उसके हाथों उस व्यक्ति की मृत्यु होती है जो उस भाव से प्रदर्शित है जिसमें कि लग्नेश की दूसरी राशि पड़ती हो। (उदाहरणार्थ देखिए कु० सं०12)।
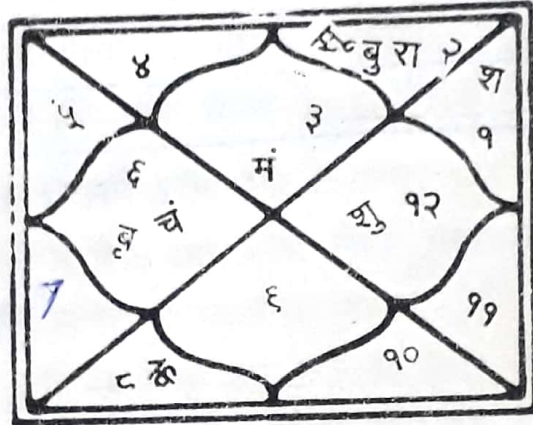
कु० सं० 12

यह कुण्डली महात्मा गांधी के घातक गोडसे की है। यहां मंगल छटे भाव का स्वामी है और छटे से छटे का भी। यही मंगल केतु अधिष्ठित राशि का स्वामी भी है। अतः बहुत क्रूरता तथा हिंसा युक्त भी है। ऐसे मंगल का लग्न में बैठना और चतुर्थ भाव तथा चन्द्र (मन) पर प्रभाव डालना मन को हिंसात्मक बना रहा है। लग्नेश बुध द्वादश भाव में राहु तथा सूर्य से पीड़ित है तथा पाप मध्यत्व में है। अतः चतुर्थ (जनता में से एक व्यक्ति——महात्मा गांधी) को निज (बुध) द्वारा हानि हुई।

परोपकारी अथवा परपीड़क—यदि लग्नेश और राशीश आदि जन्म द्योतक ग्रह, नैसर्गिक रूप से शुभ हों तथा बली भी हों तो मनुष्य परोपकारी, दानी, शुभचिंतक होता है। इसके विपरीत यदि लग्न, लग्नेश आदि पर शनि, राहु आदि का प्रभाव हो तो मनुष्य स्वार्थी, कृपण, अनिष्टकारी और परपीड़क होता है।

17. **दशम केन्द्रस्थ ग्रह और लग्न**—जब कोई ग्रह दशम स्थान में बैठता है तो उसका प्रभाव लग्न पर अवश्य पड़ता है चाहे उस ग्रह की दृष्टि

प्रचलित नियमों के अनुसार लग्न पर न भी पड़ रही हो। इसी कारण जब दशम केन्द्र में गुरु आदि शुभ ग्रह बलवान् होकर बैठे हों तो ऐसी स्थिति में लग्न को बल मिलता है जिसके फलस्वरूप मनुष्य की आयु, धन आदि की वृद्धि होती है। इसी सिद्धान्तानुसार कारकाख्य योग बड़प्पन देता है। यह बात भूतपूर्व रक्षामन्त्री श्री वी० के० मेनन की कुण्डली में है जिन्होंने कारकाख्य योग के कारण उच्च पदवी प्राप्त की।

18. लग्न से प्रेम और विरोध का विचार—लग्न तथा लग्नेश से जो ग्रह नवम, पंचम आदि शुभ भावों में स्थित होगा उसकी जातक से प्रीति रहेगी और जो ग्रह लग्न अथवा लग्नेश से षष्ठ, अष्टम अथवा द्वादश भाव में पड़ा होगा तो उस ग्रह द्वारा प्रदर्शित सम्बन्धी से जातक का वैमनस्य रहेगा। जैसे यदि किसी स्त्री की कुण्डली में वृष लग्न हो और शुक्र, सप्तम भाव, मंगल तथा गुरु से षष्ठ, अष्टम अथवा द्वादश भाव में हो तो वह स्त्री पति के बहुत विरुद्ध रहेगी। वह उसकी घातक तक हो सकती है। वर-कन्या की कुण्डलियों को मिलाते समय इन बातों का विचार कर लेना चाहिए।

19. लग्न में आग का प्रभाव—लग्न, पंचम तथा नवम भाव आग्नेय अर्थात् अग्नि द्योतक भाव हैं। यदि लग्न में कोई अग्नि द्योतक ग्रह जैसे सूर्य अथवा मंगल अथवा केतु पड़े हों तो लग्नेश अग्नि रूप माना जावेगा चाहे वह लग्नेश नैसर्गिक जलीय ग्रह चन्द्र ही क्यों न हो, ऐसा लग्नेश जिस भाव में स्थित होगा उसको अग्नि द्वारा हानि होगी, विशेषतया तब जबकि उस भाव में जाकर वह ग्रह नीचादि निर्बल अवस्था में हो। जैसे यदि लग्न में सूर्य, मंगल अथवा बुध हो और लग्न का स्वामी चन्द्र पंचम में नीच राशि का हो तो मनुष्य के पेट में आग लगती है।

20. जन्म सम्बन्धी बातें—लग्न, लग्नेश चन्द्र, चन्द्राधिष्ठित राशि के स्वामी, सूर्य तथा सूर्याधिष्ठित राशि के स्वामी पर–

(क) यदि अधिकांश मे ब्राह्मण ग्रहों, गुरु और शुक्र का प्रभाव हो तो मनुष्य ब्राह्मण कुल में उत्पन्न होता है।

(ख) यदि अधिकांश में क्षत्रिय ग्रहों, सूर्य तथा मंगल का प्रभाव हो तो मनुष्य क्षत्रिय कुल में उत्पन्न होता है ।

(ग) यदि अधिकांश में वैश्य ग्रहों, बुध तथा चन्द्र का प्रभाव हो तो मनुष्य का जन्म वैश्य कुल में होता है ।

(घ) यदि अधिकांश में शनि का प्रभाव हो तो शूद्र कुल में जन्म होता है ।

(ङ) यदि अधिकांश में राहु तथा राहु-केतु अधिष्ठित राशियों के स्वामियों का प्रभाव हो तो गैर हिन्दू जातियों में जन्म कहना चाहिए ।

पहले भाव में विविध राशियां

मेष लग्न– यदि प्रथम भाव अर्थात लग्न में मेष राशि हो तो मनुष्य बहुधा मंगल के गुणों को लिए हुए होता है । काम-काज में तेज, कुछ-कुछ क्रोधी प्रकृति का होता है । चूंकि मंगल लग्नाधिपति तथा अष्टमाधिपति दोनों बन जाता है, अतः मंगल पर जिन ग्रहों का प्रभाव हो उन ग्रहों की प्रकृति, स्वभाव तथा तत्व आदि द्वारा मनुष्य की मृत्यु होती है । मंगल का एक साथ दो आयु द्योतक घरों का स्वामी बन जाना मंगल को आयु के सम्बन्ध में विशेष महत्व प्रदान करता है । अर्थात् यदि मंगल बलवान हो तो आयु दीर्घ खण्ड में पड़ जाती है और यदि मंगल निर्बल हो तो मनुष्य अल्पजीवी होता है । मंगल लग्नेश का प्रमुख व्यसन स्थान का स्वामी होना मनुष्य को व्यसनशील बना देता है; विशेषतया तब जबकि मंगल का प्रभाव चतुर्थ भाव पर तथा चन्द्र भाव पर हो । राहुजात्यन्तर तथा जातिहीनता (Casteless and Classless)

का द्योतक है जैसा कि सर्वार्थ चिन्तामणिकार ने कहा है—'राहु ध्वजाभ्यामथ जातिहीनः' अर्थात् राहु तथा केतु जातिहीन हैं ।

वृषभ लग्न—इस लग्न वाले बहुधा शरीर से सुन्दर होते हैं, क्योंकि शुक्र एक सुन्दर ग्रह है । वे विलास प्रिय होते हैं और गैर हिन्दू जातियों से सम्पर्क रखते हैं, क्योंकि शुक्र की दूसरी राशि अन्यताद्योतक छठे भाव में पड़ती है । ऐसे मनुष्यों को चोट लगने का अवसर भी रहता है, क्योंकि षष्ठ भाव चोट का है, विशेषतया जबकि गुरु तथा मंगल का प्रभाव भी शुक्र पर हो । ऐसे मनुष्य विलासप्रिय होते हुए भी जब कार्य करने पर उतारू होते हैं तो बैल की तरह खूब परिश्रम से काम करते हैं ।

मिथुन लग्न—इस लग्न वाले का यदि बुध बहुत निर्बल न हो तो बुद्धि के तीव्र होते हैं । यदि बुध, सूर्य, शनि तथा राहु आदि पृथकता जनक ग्रहों के प्रभाव में हों तो ऐसा मनुष्य अपनी जन्म-भूमि तथा जन्म-स्थान से दूर रहता है । यदि चन्द्र पर भी यह प्रभाव हो तो माता का सुख बहुत कम पाता है । राज कर्मचारी का इस प्रकार से प्रभावित बुध बहुत बार स्थान परिवर्तन (Transfers) कर देता है । यदि बुध और चन्द्र का सम्बन्ध चतुर्थ भाव से हो तो ऐसा व्यक्ति राजकार्यों (Politics) में भाग लेने वाला होता है । इस लग्न वालों का बुध और चन्द्र पापयुक्त अथवा पापदृष्ट हो और शुक्र भी ऐसा ही हो तो व्यक्ति के पागल हो जाने का डर रहता है, क्योंकि पागलपन में आने वाले सभी अंग लग्न, चतुर्थ भाव, पंचमेश, बुध तथा चन्द्र निर्बल हो जाते हैं ।

इस लग्न वालों के यदि लग्न तथा बुध पर मंगल आदि पापी ग्रहों की दृष्टि हो तो इसका तात्पर्य यह होगा कि मामा का कारक बुध तथा माता के भाइयों (षष्ठ स्थान) के स्थान से अष्टम स्थान का स्वामी, दोनों ही, प्रबल रूप से पीड़ित होंगे । फल यह होगा कि ऐसे व्यक्ति को मामा (मां के भाई) का सुख अर्थात् उनकी संख्या तथा उनके द्वारा सद्व्यवहार का सुख बहुत कम होवेगा ।

मिथुन लग्न वालों के लिए मंगल चोट स्थान अर्थात् छठे स्थान का स्वामी होता है, चूंकि मंगल स्वयं भी एक हिंसाप्रिय ग्रह है, अतः क्षति आदि

का कारक है। पुनश्च मंगल भावात् भावाम् के सिद्धान्त के अनुसार छठे से छठे भाव का भी स्वामी है, अतः मंगल में अतिशय क्रूरता पाई जाएगी। यह मंगल यदि लग्न में स्थित हो जाये तथा चतुर्थ भाव तथा चन्द्र पर दृष्टि डाले तो मनुष्य को हिंसाप्रिय, क्रूर, डाकू आदि बना देता है। मंगल का मिथुन लग्न में स्थित होना सिर में चोट लगने का योग है, विशेषतया तब जबकि बुध पर भी मंगल का प्रभाव हो।

कर्क लग्न—चूंकि इस लग्न का स्वामी चन्द्र है और वह सबकी माता है, अतः इस लग्न वाले मृदु स्वभाव के, सबके हितैषी, शत्रुहीन, सत्यप्रिय होते हैं। इनमें छल का अंश कम होता है। ऐसे मनुष्य शीघ्रताप्रिय होते हैं, क्योंकि चन्द्र शीघ्रगामी है। ऐसे व्यक्ति अपने निश्चयों में परिवर्तन करने के लिए उद्यत रहते हैं, क्योंकि चन्द्र अपनी कलाओं से परिवर्तनशील है। ऐसे व्यक्तियों का चन्द्र जिस भाव में स्थित हो उस भाव से सम्बन्धित विषयों से उनका विशेष प्रेम हो जाता है। जैसे, यदि चन्द्र द्वितीय भाव में हो तो धन-कुटुम्ब से; तृतीय भाव में हो तो मित्रों तथा छोटे भाइयों से; चतुर्थ भाव में हो तो अपने देश, उसकी जनता, माता तथा सर्वसाधारण से, पंचम में हो तो विद्या तथा बच्चों से, छठे भाव में हो तो निम्न वर्ग से तथा गैर हिन्दू लोगो से, सप्तम भाव में हो तो पत्नी तथा व्यापार के भागीदारों से, अष्टम भाव में हो तो जान जोखों के कार्यों तथा व्यसनों से, नवम भाव में हो तो धर्म से, ऊंचे विचारों से दूर-दूर की यात्राओं से, दशम भाव में हो तो व्यय करने तथा पढ़ने से (आंखों के प्रयोग से) प्रेम हो जाता है।

सिंह लग्न--इस लग्न वाले व्यक्तियों का स्वामी सूर्य होता है। अतः उनमें सूर्य के अधिकांश गुण-दोष आ जाते हैं। यदि सूर्य बलवान् हो तो ऐसे व्यक्ति साहसी, वीर, शासन की शक्ति को प्राप्त करने वाले, हृदय के बलवान्, मजबूत हड्डी वाले, उदार, सात्विक होते हैं। इसके विपरीत यदि सूर्य निर्बल, पापयुक्त या पापदृष्ट हो तो वे अपमानित, आंख के रोग वाले, हृदय के तथा पेट के रोगों से युक्त और राज्य के विरोधी होते हैं।

कन्या लग्न--इस लग्न में उत्पन्न होने वाले व्यक्ति यदि उनका बुध बलवान हो तो बहुत बुद्धिमान, मानी, लावण्य युक्त, सुन्दर आकृति वाले, गुणी, गाने-बजाने के इच्छुक होते हैं। यदि बुध निर्बल हो तो पेट तथा अन्तड़ियों के रोग से युक्त, चर्म रोग से युक्त, बचपन में कष्ट उठाने वाले तथा अपमानित होने वाले होते हैं।

तुला लग्न--यह बहुत अच्छी लग्न है: क्योंकि शनि ग्रह जो निसर्गतः पापी है, इस लग्न वालों को अतीव शुभकर हो जाता है। इस लग्न वाले व्यक्ति सुन्दर, विलासप्रिय, व्यसनप्रिय होते हैं। यदि शुक्र बलवान हो और बुध, बृहस्पति से प्रभावित हो तो इस लग्न के व्यक्ति बहुत सत्यप्रिय तथा धार्मिक वृत्ति के होते हैं तथा बहुत आयु पाते हैं। परन्तु यदि शुक्र पाप प्रभाव में हो तो अल्पायु वाले होते हैं। इस लग्न वालों के शुक्र पर पड़ने वाला प्रभाव मृत्यु के कारणों को बताता है: क्योंकि शुक्र लग्नेश तथा अष्टमेश दोनों बन जाता है। जैसे शुक्र पर मंगल तथा गुरु के प्रभाव से चोट आने, गोली लगने आदि से मृत्यु होती है।

वृश्चिक लग्न--इस लग्न वाले व्यक्ति बड़े उग्र स्वभाव के, अपनी मनमानी करने वाले, क्रोधयुक्त, कर्मठ, हठी, चोरी से व्यापार करने वाले, पुलिस तथा मिलिटरी वालों के मित्र होते हैं। ऐसे व्यक्ति का यदि मंगल बलवान् हो तो शत्रुओं पर विजय प्राप्त करते हैं। इस लग्न वालों का मंगल तथा शनि मिलकर जिस भाव तथा उसके स्वामी अथवा कारक को देखें उससे उनका कड़ा विरोध होता है।

धनु लग्न--इस लग्न वालों का दिल अच्छा होता है। ये परोपकारी, जनता से सम्पर्क रखने वाले, ज्ञानवान्, धार्मिक प्रवृत्ति वाले, धैर्यशील, सज्जन पुरुष होते हैं। यदि गुरु पापयुक्त अथवा पापदृष्ट हो तो पेट, जिगर, तिल्ली, मेदा आदि के रोगों से पीड़ित होते हैं तथा इनको नितम्बों में कष्ट होता है और ये जनता के क्रोध के भागी बनते हैं।

मकर लग्न— इस लग्न वाले प्रायः क्षुद्र विचारों वाले होते हैं। इनकी वाणी बहुत कर्कश (Harsh) होती है। ये विलम्ब से उन्नति पाते हैं। शनि बलवान् हो तो लम्बी आयु पाने वाले, निम्न वर्ग के लोगों से प्रीति करने वाले होते हैं। इनको प्रायः भूमि से लाभ रहता है।

कुम्भ लग्न—इस लग्न वाले खरचीले, क्षुद्र स्वभाव वाले, स्वार्थप्रिय, नीच वर्गों से प्रीति करने वाले होते हैं। ऐसा तब होता है जब शनि शुभ प्रभाव से हीन हो। यदि शनि पर गुरु आदि का प्रभाव हो तो बड़ी सम्पत्ति और भूमि वाले, दीर्घायु तथा धनी-मानी होते हैं। इस लग्न वालों का गुरु महत्वशाली होता है, क्योंकि यह दो मूल्यवान घरों, द्वितीय (धन) तथा एकादश (लाभ) का स्वामी है और स्वयं भी धनकारक है। इस लग्न वालों की कुण्डली में गुरु यदि किसी भाव और उसके स्वामी को देखे तो उसको चार चांद अवश्य लगा देता है। जैसे चतुर्थ भाव तथा उसके स्वामी शुक्र को देखे तो व्यक्ति के पास बहुत भूमि, बढ़िया मोटर कार तथा अन्य सुख की सामग्री होगी। इस दृष्टिकोण से यह लग्न प्रायः सब लग्नों से उत्तम है। इस लग्न वालों का लग्नेश शनि तथा तृतीयेश मंगल होता है। दोनों क्रूर ग्रह हैं और दोनों ही जातक के क्रियात्मक निजत्व (Deliberate Self) को दर्शाते हैं। यदि शनि तथा मंगल का किसी एक अथवा दो विशेष प्रतिनिधित्व करने वाले ग्रहों पर, दृष्टि अथवा युति द्वारा प्रभाव पड़ जावे तो प्रभावित व्यक्ति से कुम्भ लग्न वाले व्यक्ति की बहुत शत्रुता हो जाती है और कई बार तो कुम्भ लग्न वाला प्रभावित व्यक्ति की जान तक लेने के लिए उतारू हो जाता है। जब लड़के तथा लड़की की कुण्डलियों के मिलाने का प्रश्न उपस्थित हो और लड़के की कुण्डली में शनि तथा मंगल सप्तम भाव तथा शुक्र अथवा सप्तमेश तथा शुक्र पर दृष्टि डाल रहे हों तो ऐसे वर को बहुत सोच समझकर स्वीकार करना चाहिए। निष्कर्ष यह कि कुम्भ लग्न वाले मनुष्य के शनि तथा मंगल जान बूझकर उल्टा काम करने की प्रवृत्ति को दर्शाते हैं। यदि इनका प्रभाव पंचम तथा पंचमेश पर हो तो मनुष्य सन्तान निरोध करता है। यदि इन

दोनों ग्रहों का प्रभाव अष्टम, अष्टमेश पर हो तो जान-बूझकर मरता है, अर्थात् आत्मघात करता है आदि-आदि।

मीन लग्न—इस लग्न का व्यक्ति बहुत धनी-मानी, यशस्वी शुभ कार्यों को करने वाला, धार्मिक प्रवृत्ति वाला, राज्य से मान प्राप्त करने वाला होता है। यदि गुरु पापयुक्त अथवा पापदृष्ट हो तो राज्य की ओर से अपमानित तथा राज्यविरोधी होता है। उसके पांव में चोट अथवा रोग होता है। उसके पेट में भी कष्ट रहता है।

लग्न पर विचार करते समय चन्द्र लग्न तथा सूर्य लग्न को नहीं भूलना चाहिए। जैसे लग्न सब भावों में सर्वोत्तम धन, मान, आयु, पदवी, स्वास्थ्य, सुख, सब कुछ देता है, इसी प्रकार चन्द्र लग्न तथा सूर्य लग्न भी देते हैं। यही कारण है कि लग्नाधियोग की भांति सूर्याधियोग तथा चन्द्राधियोग; सभी बहुत धनदायक योग माने जाते हैं।

अधियोग तब बनता है जब लग्न से अथवा चन्द्र लग्न से अथवा सूर्य लग्न से शुभ ग्रह छठे, सातवें तथा आठवें स्थान में बैठे हों। यह योग इसलिए शुभ तथा धनदायक माना गया है कि जब ग्रह उक्त स्थिति में होंगे तो छठे स्थान में बैठा हुआ ग्रह द्वादश भाव को पूर्ण दृष्टि से देखेगा। सप्तम बैठा हुआ ग्रह प्रथम भाव को अथवा तद्-तद् लग्न को पूर्ण दृष्टि से देखेगा और अष्टम स्थान में स्थित ग्रह द्वितीय स्थान पर अपनी दृष्टि द्वारा शुभ प्रभाव डालेगा। फल यह निकलेगा कि न केवल लग्न, चन्द्र तथा सूर्य पर ही (जैसी भी स्थिति हो) शुभ प्रभाव पड़ेगा; बल्कि लग्न, चन्द्र लग्न अथवा सूर्य लग्न के अगल-बगल भी शुभ प्रभाव पड़ेगा। मानो लग्नें शुभ कर्तृ तथा शुभ दृष्टि, दोनों में आ गई हों। अतः स्पष्ट है कि लग्नें अतिशय शुभ होने के कारण अतीव शुभ फल करेंगी जिनमें से एक है मनुष्य को धनी बनाना; परन्तु इतना ध्यान रहे कि षष्ठ, अष्टम तथा सप्तम स्थान में पड़े हुए शुभ ग्रह जितने बलवान होंगे उतना ही अधिक वह अधियोग शुभदायक हो जाएगा।

4. द्वितीय भाव

रूप–लावण्य, विद्या, कला,

गूंगापन, गोद जाना, शासन

1. जैसे लग्न से चतुर्थ लग्न का अर्थात् निज (Self) का घर है, इसी प्रकार एकादश, अर्थात आमदनी, कमाई, प्राप्त धन आदि के रखने की जगह, एकादश से चतुर्थ, बैंक कोष (Treasury) है।

2. **धन–भाव तथा कुमार अवस्था**–प्राथमिकता के गुण के कारण लग्न से जन्मकालीन तथा शैशवकालीन बातों का विचार किया जाता है। द्वितीय स्थान का भी इसी नियम के अनुसार शिशु अवस्था के तुरन्त बाद की अवस्था अर्थात् 'कुमार' अवस्था से घनिष्ठ सम्बन्ध है। अतः कुमार अवस्था स्वयं इन सबका विचार द्वितीय भाव से करना चाहिए। जैसे---यदि द्वितीय स्थान तथा उसके स्वामी पर पृथकताजनक सूर्य, शनि राहु आदि ग्रहों का प्रभाव हो, विशेषतया जबकि "वाक्स्थानपे देवपुरोहितेन युक्ते यदा नाशगतेऽत्र मूकः"– अर्थात् द्वितीयेश स्वयं कुमार (बुध) हो तो मनुष्य कुमार अवस्था में अपने माता-पिता से पृथक (कुटुम्ब से वियुक्त) रहता है और बहुधा उसकी घर से भाग जाने की प्रवृत्ति रहती है।

3. **धन भाव और रूप लावण्य**–लग्न यदि प्रथम भाव होने के कारण प्रथम अंग अर्थात् सिर का प्रतिनिधि है तो धन भाव द्वितीय नम्बर पर आने

के कारण द्वितीय अंग अर्थात् मुख, उसकी शोभा अथवा अशोभा को जतलाता है । यदि द्वितीय भाव का स्वामी बुध अथवा शुक्र हो और बली होकर शुभदृष्ट तथा शुभयुक्त हो तो मनुष्य सुन्दर मुख वाला, शोभनीय आंखों वाला तथा दर्शनीय होता है ।

शुक्र के लिए 'देवकेरल' (चन्द्रकला नाड़ी) में कहा है:–

'शुक्रो शुभं बलं रूप....... रसप्रियः'–अतः शुक्र स्वतन्त्र रूप से 'रूप' का कारक है । उधर रूप मुख्यतया मुख से ही देखा जाता है । अतः जब स्वयं शुक्र द्वितीयाधिपति होगा और बलवान् तथा शुभदृष्ट होगा तो स्पष्ट है कि मनुष्य को रूपवान अर्थात् सुन्दर बनायेगा । बुध भी 'लावण्य' युक्त है । इसके लिए भी सारावली में आया है:– ''हृष्टो मध्यमरूपवान् सुनिपुणः'' आदि अर्थात् बुध ''रूपवान्'' ग्रह है । अतः द्वितीयाधिपति होने की दशा में तथा बलयुक्त होने पर यह ग्रह भी मनुष्य को सुन्दर बनाता है ।

4. धन भाव और वाणी विकार– वाणी मुख का ही प्रयोग है । यदि बुध तथा बृहस्पति (वाणीद्योतक ग्रह), द्वितीयाधिपति समेत, कहीं भी निर्बल, पापयुक्त तथा पापदृष्ट हो तो मनुष्य को वाणी में दोष अथवा रोग होता है । यदि केवल शनि तथा राहु का प्रभाव हो तो जातक गूंगा तक हो जाता है ।

गुरु भी बुध की भांति वाणी का कारक है । यह वाणी से आजीविका पाने वाले वकीलों से भी घनिष्ठ सम्बन्ध रखता है । वाणी द्योतक गुरु के सम्बन्ध में 'सर्वार्थ चिन्तामणिकार' का कहना है कि यदि द्वितीय स्थान का स्वामी तथा गुरु दोनों अष्टम स्थान में हों तो मनुष्य मूक अर्थात् गूंगा होता है ।

5. धनभाव तथा प्रबल भाषण शक्ति–यदि द्वितीयेश, गुरु तथा बुध तीनों बलवान हों तो मनुष्य में उपदेश देने, भाषण देने तथा वाद-विवाद करने की अच्छी शक्ति आ जाती है । गुरु और बुध वाणी के कारक हैं ।

यदि धन भाव का स्वामी शनि षष्ठेश मिथुन में हों तो जातक थोड़ा बोले और यदि बुध तथा पंचमेश भी पाप प्रभाव में हों तो बोल नहीं सकता।

6. द्वितीय भाव और विशेष धन– यदि द्वितीय भाव में कोई नैसर्गिक शुभ ग्रह स्वक्षेत्री होकर केतु के साथ स्थित हो तो वह मनुष्य विशेष धनी (लखपति) होता है; क्योंकि जहां स्वक्षेत्री शुभ ग्रह धन के बाहुल्य का द्योतक है वहां केतु का योग उसकी अधिकतम ऊंचाई (केतु का अर्थ 'झंडा'––ऊंचाई है) का प्रतीक है।

7. द्वितीयभावऔरसंगीतकलाकाज्ञान–द्वितीयाधिपति, पंचमाधिपति तथा शुक्र का किसी प्रकार का शुभ सम्बन्ध मनुष्य को संगीतज्ञ बनाता है। कारण यह है कि द्वितीय तथा पंचम दोनों भावों का वाणी से सम्बन्ध है और शुक्र उस वाणी को संगीत बनाता है: क्योंकि शुक्र एक सुसंस्कृत करने वाला (Sublimating) ग्रह है।

8. द्वितीय भाव तथा अन्धापन–द्वितीय भाव में यदि सूर्य अथवा चन्द्र निर्बल होकर शत्रु राशि में स्थित हों तथा मंगल द्वारा दृष्ट हों तो यह दृष्टिनाश का योग है। द्वितीय स्थान, सूर्य तथा चन्द्र सभी दृष्टि के द्योतक हैं: अतः उनका मंगल द्वारा पीड़ित होना दृष्टि को हानि पहुंचाने वाला होगा, यह युक्तिसंगत ही है। कु० सं० 13 एक अंधे सज्जन की है जिनको ज्योतिष का भी अच्छा ज्ञान है।
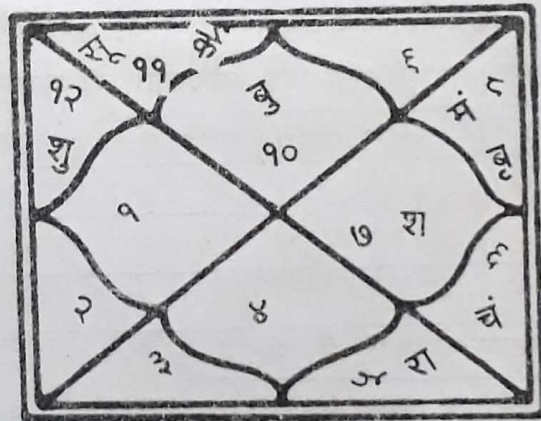
कु० सं० 13

9. द्वितीय भाव और संन्यास–द्वितीय भाव धन तथा कुटुम्ब दोनों का प्रतिनिधि है। अतः जब अन्य संन्यासप्रद योगों की उपस्थिति में द्वितीय भाव तथा उसके स्वामी पर सूर्य, शनि, राहु तथा द्वादशेश (पृथकताजनक

ग्रहों) का प्रभाव हो तो मनुष्य धन तथा कुटुम्ब से पृथक् हो जाता है। इन दो वस्तुओं का त्याग ही प्रायः संन्यास का मुख्य चिन्ह माना जाता है।

10. द्वितीय भाव और मारक दशा—तृतीय भाव अष्टम (आयु स्थान) से अष्टम होने के कारण आयु का द्योतक है। उस तृतीय स्थान से द्वादश स्थान अर्थात् द्वितीय स्थान आयु के नाश का द्योतक है। इसीलिए द्वितीयेश को मारकेश आदि बोलते हैं। द्वितीय भाव के स्वामी की दशा में सप्तमेश, द्वादशेश आदि आयुनाशक ग्रहों की अन्तर्दशा मनुष्य की मृत्यु को जतलाती है, विशेषतया जबकि मृत्यु का खण्ड (दीर्घ, मध्यम, अल्प) आ चुका हो और दशा तथा अन्तर्दशा ग्रह निर्बल हों अन्यथा यह अन्तर्दशा शरीर के कष्ट को देती है।

11. धनभाव मूल्यप्रद है—धनाधिपति धन अथवा मूल्य (Value) का द्योतक है। जब गुरु (जो धन का कारक ग्रह है) स्वयं धनाधिपति हो तो 'बहुमूल्य' का परिचय देता है। ऐसा गुरु, विशेषतया तब जबकि वह एकादश (आय) स्थान का भी स्वामी हो तो, अति मूल्यप्रद (Denoting much value) हो जाता है। ऐसे गुरु की दृष्टि अथवा युति से जिस भाव आदि पर प्रभाव पड़ेगा वह भावादि बहु मूल्यवान् हो जाएगा। जैसे कुम्भ लग्न हो और गुरु और शुक्र दशम स्थान में स्थित हों तो व्यक्ति की जायदाद मूल्यवान् होगी। (देखिए कु० सं० 2)। इसी प्रकार यदि वृश्चिक लग्न हो और गुरु की दृष्टि सूर्य पर हो तो मनुष्य बड़े-बड़े मूल्यवान् काम-धन्धों का करने वाला होता है। गुरु की दृष्टि यदि शुक्र पर हो तो वृश्चिक लग्न वाले को बहुत सम्पत्तिशाली ससुराल मिलती है, आदि।

12. धनभाव और गोद लिया जाना—यदि षष्ठेश, एकादशेश तथा राहु का द्वितीय तथा द्वितीय भाव के स्वामी से पूर्ण सम्बन्ध हो तो यह योग जातक के गोद लिए जाने का द्योतक है। क्योंकि कुटुम्ब स्थान पर परताजनक ग्रहों का प्रभाव अन्य कुल, परकुल अथवा कुटुम्ब में जाने को जतलायेगा।

13. द्वितीय भाव और साम्राज्य—अखण्ड साम्राज्य योग की परिभाषा करते हुए ज्योतिषशास्त्र कहता है कि जब लग्नेश, दशमेश अथवा धनेश में से कोई एक भी ग्रह चन्द्र से केन्द्र में पड़ जाए और साथ ही साथ गुरु भी धनाधिपति तथा लाभाधिपति अथवा धनाधिपति तथा पंचमाधिपति होता हुआ

उसी तरह चन्द्र से केन्द्र में हो तो बहुत साम्राज्य और धन देने वाला साम्राज्य योग बनता है। विचार करने पर पता चलेगा कि साम्राज्य योग की शुभता अथवा धनादि देने की शक्ति के दो कारण हैं–

(i) एक धन द्योतक भावों के स्वामियों का चन्द्र से केन्द्र में स्थित होने से बलवान् होना।

(ii) दूसरे धन कारक गुरु का भी उसी केन्द्रीय स्थिति के कारण बलवान् होना, विशेष रूप से धनद्योतक भावों (दूसरे, पांचवें तथा ग्यारहवें) का स्वामी होकर बलवान् होना।

14. धन भाव तथा विद्या– सर्वार्थचिन्तामणिकार के मत में द्वितीय स्थान विद्या का भी है। उनका कहना है–

कौटुम्बाद् भर्त्तव्यान्मुखं च वाग्दक्षिणाक्षि पूर्वार्थान्।
विद्या भुक्ति विशेषान् दासान् मित्राणि च प्रवदेत्।।

अर्थात् दूसरे स्थान से निजपालनीय कुटुम्बी मनुष्य, मुख, वाणी, दाहिने नेत्र आदि, धन, विद्या, भोग विशेष, दास, मित्र इन सब वस्तुओं का विचार करना चाहिए। 'उत्तर कालामृत' में भी द्वितीय स्थान का सम्बन्ध विद्या से बतलाया है। वहां लिखा है:–

विद्या, स्वर्ण, सुरोप्य, विनय नासा-मनस्धैर्यकम्।

अर्थात् विद्या, स्वर्ण, चांदी, धान्य, विनय, नासिका तथा मन का धैर्य आदि बातें द्वितीय भाव से विचार की जाती हैं।

15. धन भाव और शासन–शासन का विचार दशम स्थान से किया जाता है, परन्तु द्वितीय भाव भी शासन का भाव है, यह बात सर्वार्थ चिन्तामणिकार कहता है। वहां लिखा है–

स्वोच्चस्थिते वित्तपतौ च केन्द्रे सिंहासनप्राप्तिमुदाहरन्ति।

अर्थात् यदि द्वितीय भाव का स्वामी निज उच्च स्थान अर्थात् उच्च राशि में होकर केन्द्र स्थान में स्थित हो तो मनुष्य को सिंहासन (Ruling Powers) की प्राप्ति होती है।

द्वितीय भाव में विविध राशियां

मेष राशि—इस भाव में मेष राशि हो तो धनाधिपति नवमेश भी हो जाता है। यदि मंगल बलवान् हो तो ऐसे व्यक्ति को आशातीत धन की प्राप्ति होती है और राज्याधिकारी धन प्राप्ति में इस व्यक्ति के विशेष सहायक हो जाते हैं। इसके विपरीत यदि मंगल निर्बल, पापयुक्त अथवा पापदृष्ट हो तो इस व्यक्ति को धन के विषय में दैव की ओर से मार पड़ती है और उसका धन अचानक नष्ट हो जाता है। यदि उसकी स्त्री का छोटा भाई हो तो उसके धन को नष्ट करने वाला होता है। यदि मंगल नीच हो तो माता के बड़े भाई की आयु कम होती है, क्योंकि द्वितीय स्थान माता के बड़े भाई का है।

वृषभ राशि—धन भाव में वृषभ राशि हो और शुक्र बलवान् हो तो स्त्री पक्ष से तथा व्यापार से धन की अच्छी प्राप्ति होती है। शुक्र यदि निर्बल होकर छठे अथवा आठवें भाव में पड़ा हो तो अपनी दशा अन्तर्दशा में भारी रोग देता है। शुक्र यदि बलवान् हो तो मुख सुन्दर होता है। शुक्र को प्रभावित करने वाले ग्रहों से स्त्री के मरण हेतुओं का ज्ञान भी प्राप्त किया जा सकता है।

मिथुन राशि—यदि द्वितीय स्थान में मिथुन राशि हो और बुध बलवान् हो तो व्यक्ति महान् वक्ता (Orator) होता है, क्योंकि वाणीकारक बुध स्वयं दो वाणी भावों—द्वितीय तथा पंचम का स्वामी बन जाता है। यदि बुध तथा शुक्र एकत्र हों और उन पर मंगल आदि पापी ग्रहों की दृष्टि आदि का प्रभाव

हो तो मनुष्य की पहली स्त्री दीर्घजीवी नहीं होती। कारण कि स्त्रीभाव का अष्टमेश तथा स्त्रीकारक दोनों पाप प्रभाव से पीड़ित हो जाते हैं।

यदि द्वितीय भाव तथा इसका स्वामी राहु अथवा मंगल के प्रभाव में हो तो ऐसा व्यक्ति, कुमार अवस्था में अर्थात् अपने अध्ययेन-काल में अपने कुटुम्ब से पृथक् हो जाता है। अर्थात् कहीं किसी होस्टल आदि में माता-पिता से पृथक् होकर रहता है अथवा अन्यत्र किसी सम्बन्धी के पास रहकर पढ़ता है, परन्तु रहता माता-पिता से पृथक् होकर ही है।

कर्क राशि--यदि चन्द्र बलवान् हो तो उच्च पदवी की प्राप्ति तथा धन की प्राप्ति होती है। माता की बड़ी बहनों की संख्या अधिक होती है। आंखें सुन्दर होती हैं। यदि चन्द्र निर्बल हो तो मनुष्य निर्धन कुटुम्ब से वैर रखने वाला होता है।

सिंह राशि--यदि द्वतीय भाव में सिंह राशि पड़ जाए और सूर्य बलवान् हो तो शासन की प्राप्ति होती है। मनुष्य की वाणी ओजस्वी होती है। माता के बड़े भाई होते हैं। यदि सूर्य निर्बल हो तो आंखों में कष्ट, कुटुम्ब से विरोध तथा राज्य की ओर से हानि होती है।

कन्या राशि--यदि द्वितीय भाव में कन्या राशि हो तो न केवल धनाधिपति, परन्तु लाभाधिपति भी बन जाता है। अतः बुध में बहुत्व तथा मूल्य का समावेश विशेष रूप से हो जाता है। अतः बुध जिस भाव तथा उसके स्वामी को देखेगा उसको मूल्यवान् पदवी, मूल्यवान् वाहन तथा मूल्यवान् भूमि आदि सब उत्तम वस्तुएं प्राप्त होंगीं। बलवान् बुध खूब धन देगा। ऐसा व्यक्ति ब्याज (Interest) से भी धन पाता है, क्योंकि पैसे से पैसा कमाने का योग बनता है। ऐसे व्यक्ति की माता की कई बहनें होती हैं। इसके विपरीत यदि बुध निर्बल, पापयुक्त या पापदृष्ट हो तो इस व्यक्ति को कुमार अवस्था में विद्या में अड़चनें तथा असफलताएं, धन का नाश, कुमार अवस्था में माता-पिता से दूर रहकर विद्या अध्ययन, वाणी में दोष आदि उत्पन्न हो जाते हैं तथा कुरूपता प्राप्त होती है।

तुला राशि—यदि द्वितीय भाव में तुला राशि हो तो शुक्र को नवम भाव का स्वामी होने का सौभाग्य भी प्राप्त हो जाता है। अतः ऐसा व्यक्ति अचानक धन से लाभ उठा जाता है।

वृश्चिक राशि—यदि द्वितीय भाव में वृश्चिक राशि पड़ जाए और मंगल बलवान् हो तो मनुष्य धनी, दीर्घजीवी स्त्री वाला, प्रतापी वाणी वाला, स्त्री पक्ष से धन प्राप्त करने वाला, यौवन में सुखी होता है। इसके विपरीत यदि मंगल निर्बल, पापयुक्त तथा पापदृष्ट हो तो उसकी स्त्री तथा उसका व्यापार उसके धन के नाश के कारण बनते हैं। उसकी स्त्री अल्पजीवी होती है। मंगल पर जिन ग्रहों का प्रभाव हो उनके प्रभाव द्वारा स्त्री की मृत्यु के कारणों का पता चलना चाहिए। ऐसा व्यक्ति यौवन में दुःख पाता है।

धनु राशि—द्वितीय भाव में धनु राशि हो तो गुरु द्वितीयेश तथा पंचमेश बन जाता है। अतः यदि गुरु बलवान् हो तो मनुष्य पुत्रों से धन पाता है, उसके पुत्र धनी-मानी होते हैं। उसमें बोलने की शक्ति (Oratory) बहुत होती है। उसका बोलना मीठा तथा विद्वत्तापूर्ण होता है, उसको उत्तम विद्या की प्राप्ति होती है, वह विद्या तथा बुद्धि के प्रयास से धन कमाता है। यदि गुरु निर्बल, पापयुक्त, पापदृष्ट हो तो उसके धन की हानि होती है। धन की हानि में उसके पुत्र का भी हाथ होता है। उसकी वाणी में दोष होता है।

मकर राशि—यदि द्वितीय स्थान में मकर राशि हो तो बाहु प्रयोग से धन कमाता है। शनि बलवान् हो तो बड़े पुरुषों से मित्रता होती है। इसकी छोटी बहनों से इसे धन प्राप्ति होती है। मित्र भी सहायता करते हैं, इसकी स्त्री की आयु दीर्घ होती है, शनि यदि निर्बल हो तो थोड़ा धन होता है, धन का नाश भाई द्वारा होता है और स्त्री की आयु कम होती है।

कुम्भ राशि—यदि द्वितीय भाव में कुम्भ राशि हो तो मनुष्य कठोर [illegible]षी, अपने पुरुषार्थ से धन कमाने वाला होता है। यदि शनि बलवान् हो

तो बड़ा धनी-मानी, होता है। उसकी माता की कई बड़ी बहनें होती हैं। उसकी स्त्री दीर्घजीवी होती है।

मीन राशि—यदि द्वितीय भाव में मीन राशि हो और गुरु बलवान् हो तो मनुष्य धनी होता है, गुरु जिस भाव, कारक आदि को देखता है उसे धनी अथवा मूल्यवान बना देता है। व्यक्ति की माता के बड़े भाई होते हैं। व्यक्ति ब्याज से धन प्राप्त करता है, उसको अपने बड़े भाई से भी धन की प्राप्ति होती है। इसके विपरीत, यदि गुरु निर्बल, पापयुक्त, पापदृष्ट हो तो धन का नाश, बड़े भाई से वैमनस्य, माता के बड़े भाइयों का नाश होता है। देवकेरलकार का कहना है कि कुम्भ लग्न हो तो 'लाभे शुक्रे धने जीवे अवयोग शतैरपि धनिकः कीर्तिमांश्चैव राजद्वारे प्रसिद्धिमान'......यदि द्वितीय स्थान में मीन राशि का शुक्र हो तो दूसरे सैकड़ों बुरे योगों के होते हुए भी मनुष्य धनवान् होगा तथा राजदरबार (Govt.) से मान प्राप्त करेगा।

हेतु स्पष्ट है कि धन कारक गुरु स्वयं ही धन स्थान में स्वक्षेत्र में हो जायेगा और शुक्र एक नैसर्गिक शुभ ग्रह तथा कुम्भ लग्न के लिए राजयोगकारक ग्रह अपनी दशम केन्द्र स्थिति द्वारा गुरु पर अपना शुभ प्रभाव डालेगा। फलतः धन की वृद्धि होगी।

5. तृतीय भाव

अनुसंधान, मित्रता, अचानक मृत्यु,
लेखन-कला, महान् धन, आत्मघात,
विपरीत राजयोग, वायुयान यात्रा

1. निजत्व—मनुष्य अपने विचारों तथा भावनाओं को क्रियात्मक रूप देने के लिए बहुधा अपनी भुजाओं का प्रयोग करता है, अतः भुजाओं का या दूसरे शब्दों में तृतीय भाव का निज से—अपने आप (Self) से घनिष्ठ सम्बन्ध है। अतः यह स्पष्ट है कि तृतीय भाव तथा लग्न जहां मिलकर कार्य करेंगे वहां निजत्व का अथवा स्वत्व का परिचय अधिक मात्रा में मिलेगा। दूसरे शब्दों में उस कार्य में निज की पहल (Initiative) तथा जानबूझकर (Deliberately) अपने उत्तरदायित्व पर कार्य करने का भाव खूब पाया जाएगा (देखो कु० सं० 14)।

2. आत्मघात—जब तृतीयाधिपति तथा लग्नाधिपति शुभ अथवा अशुभ ग्रह अष्टम भाव तथा अष्टमेश दोनों से सम्बन्ध स्थापित किए हुए हों और अष्टम तथा अष्टमेश पर अन्य ग्रहों का दृष्टियुति द्वारा कोई प्रभाव न हो तो मनुष्य आत्मघात द्वारा प्राणों को त्यागता है, क्योंकि अष्टम अथवा अष्टमेश से सम्बन्ध रखने वाले ग्रह ही मृत्यु के ढंग को दिखाते हैं। अतः यहां मनुष्य का अपना आप ही जो तृतीयेश तथा लग्नेश दोनों द्वारा निर्दिष्ट है, मृत्यु का कारण बनेगा और इसी को आत्मघात (Suicide) कहते है।

कु० सं० 14

यह कुण्डली जर्मनी के डिक्टेटर हिटलर की है। हिटलर ने आत्मघात से प्राणों का त्याग किया था। शुक्र लग्नेश तथा अष्टमेश है और उस पर मंगल, सूर्य, गुरु तथा शनि का प्रभाव है। मंगल हिंसात्मक है, गुरु षष्ठाधिपति (हिंसा) है। सूर्य एकादशाधिपति (हिंसा) है और निज (Self) भी है। गुरु तृतीयाधिपति होने से निज है। मंगल सूर्य के समीप अतिचारी होने से गोली रूप है।
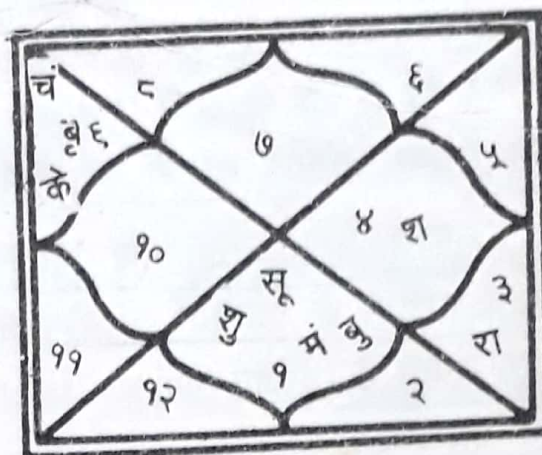
3. मित्रता–तृतीय भाव का स्वामी मित्र अथवा मित्रता का द्योतक है। तृतीयेश का सम्बन्ध जैसे भावादि से होगा, मनुष्य के मित्र भी उसी कोटि के होंगे। जैसे सिंह लग्न हो और द्वितीयेश बुध तृतीय स्थान में हो और तृतीयेश शुक्र द्वितीय स्थान में हो तो द्वितीयेश और तृतीयेश के इस व्यत्यय के फलस्वरूप मनुष्य की मित्रता बड़े रईसों, रजवाड़ों (Princes) आदि से होगी, क्योंकि तृतीय भाव तथा उसके स्वामी का सम्बन्ध द्वितीय भाव से हो गया है और द्वितीय भाव दशम भाव अर्थात् राजा का पुत्र (पंचम) है। तुला लग्न हो और गुरु नवम भाव में स्थित हो तो मनुष्य धर्मप्रेमी, साधु-महात्माओं की संगति (मित्रता) करने वाला होता है। तृतीयेश तथा चतुर्थेश में व्यत्यय (Exchange) बतलाता है कि मनुष्य सार्वजनिक कार्यों में बहुत दिलचस्पी रखता है। तृतीय भाव तथा अष्टम भाव में व्यत्यय आत्मघात का योग है, इत्यादि।

4. लेखन कला–यदि तृतीयाधिपति का लग्न, सूर्य, चन्द्र तथा धनाधिपति से शुभ सम्बन्ध हो तो मनुष्य साहित्य आदि लेखन सामग्री से धन कमाता है।

यदि कर्क लग्न हो और बुध का सूर्य, चन्द्र लग्न से अथवा इनके स्वामियों से युति अथवा दृष्टि द्वारा सम्बन्ध रखता हो तो लग्नों पर बुध के प्रभाव

के कारण, बुध के लेखन भाव (तृतीय) का स्वामी होने के कारण तथा बुध के द्वादश भाव का स्वामी होने के कारण (द्वादश भाव जनता का चतुर्थ का भाग्य भाव है) जनता के भाग्य (Pablic's Fortune or fate) का परिचायक है, अतः मनुष्य ज्योतिष शास्त्रों का लेखक होता है।

5. **हाथ**—यदि तृतीय भाव तथा भावेश पर मंगल, केतु तथा इनसे अधिष्ठित राशियों के स्वामियों का योग अथवा दृष्टि हो तो हाथ कट जाने का योग बनता है (देखिए कु० सं० 15)। इस व्यक्ति का दायां हाथ रेल से कट गया था।

यहां तृतीय राशि के स्वामी बुध पर मंगल और केतु दो घातक ग्रहों की पूर्ण दृष्टि है और भूलिएगा नहीं कि मंगल केतु अधिष्ठित राशि का स्वामी है। अतः क्रूरतम है। उधर तृतीयेश शनि पर भी केतु की पूर्ण दृष्टि है। तृतीयेश दायां बाजू होता है। अतः दायें बाहु का नाश हुआ।
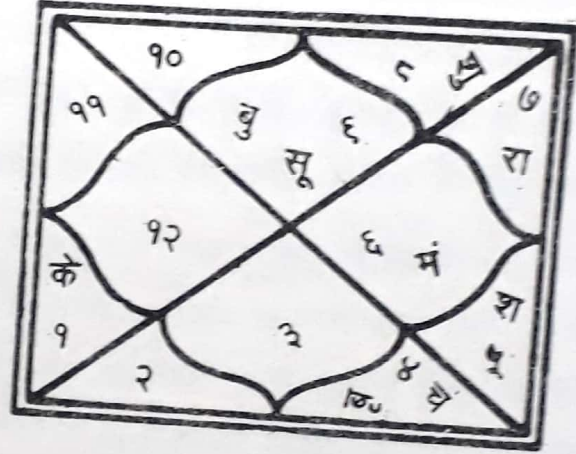
कु० सं० 15

6. **आयु**— तृतीय भाव अष्टम से अष्टम होने के कारण आयु का प्रतिनिधित्व भी करता है। अतः यदि तृतीय भाव तथा उसका स्वामी अतीव पाप प्रभाव में पाये जायें तो अचानक मृत्यु हो जाती है, विशेषतया तब जबकि तृतीयाधिपति सद्यः फलद्योतक बुध ग्रह हो।

इसी सिद्धान्त को हम कुण्डली में अन्य सम्बन्धियों पर भी लगा सकते हैं, जैसे सिंह लग्न हो और मंगल की दृष्टि एकादश स्थान तथा उसके स्वामी बुध पर पड़ती हो तो पिता की आयु घट जाने का योग बनता है, क्योंकि बुध पिता के भाव से अर्थात् नवम भाव से तृतीयाधिपति बनता है और पिता की आयु का प्रतिनिधित्व करता है।

7. महान् धन—यदि तृतीयाधिपति अष्टम स्थान में जा पड़े और केवल षष्ठेश अथवा द्वादशेश पापी ग्रहों से पीड़ित हो और उस पर किसी शुभ ग्रह की दृष्टि आदि न हो तो यह विपरीत राजयोग बनता है जो मनुष्य को लखपति——महाधनाढ्य बना देता है। कारण, तृतीय भावाधिपति की अनिष्टता के सर्वथा नष्ट हो जाने के फलस्वरूप धनादि इष्टों की प्राप्ति होती है। (Negative Destroyed is Positive Gained)।

8. छोटी मोटी यात्रायें—यदि तृतीय भाव तथा उसके स्वामी पर पाप प्रभाव हो तो छोटी यात्रायें, टूर (Tour) आदि करने वाला योग होता है।

9. वायु यात्रा योग—इस स्थान के स्वामी तथा सप्तम तथा एकादश स्थान के स्वामियों पर परस्पर युति दृष्टि द्वारा सम्बन्ध हो और यह सम्बन्ध वायु द्योतक ग्रहों गुरु, शनि आदि द्वारा स्थापित हो तो मनुष्य को वायुयान आदि की सवारी का अवसर प्राप्त होता है।

10. गहरी खोज—(Discoveries) तृतीयेश तथा अष्टमेश की युति यदि पंचम स्थान में हो तो मनुष्य गम्भीर समस्याओं पर विचार करने की शक्ति रखने वाला होता है तथा अनुसंधान कर्त्ता (Researcher) अथवा आविष्कारक होता है, क्योंकि अष्टम तथा उसका अष्टम स्थान (तृतीय) गम्भीरता तथा अनुसंधान के भाव हैं। आइन्स्टाइन, न्यूटन आदि की कुण्डली में यह योग बनता है।

11. तृतीय भाव तथा शूरता—तृतीय भावाधिपति बलवान हो अथवा केतु तृतीय स्थान में हो अथवा कोई शुभ ग्रह स्वक्षेत्री होकर केतु के साथ तीसरे भाव में हो तो मनुष्य शूरवीर होता है और तृतीय भाव बाहु स्थान होने से वीरता का स्थान है।

तृतीय भाव में विविध राशियां

1. मेष—यदि तृतीय भाव में मेष राशि हो तो मंगल न केवल तृतीय भाव का स्वामी बन जाता है, अपितु स्वयं अनुजों का कारक भी होता है,

अतः मंगल यदि बलवान् हो तो बहुत छोटे भाई देता है और यदि निर्बल, पापयुक्त तथा पापदृष्ट हो तो छोटे भाइयों का एकदम अभाव रहता है। तृतीय भाव का स्वामी दशमेश भी हो जाता है, अतः मंगल के बलवान् होने की दशा में वह पुरुष राजसी प्रकृति, राज्यीय क्रियाओं (Politics) में भाग लेने वाला, अपनी बाहुओं से राज्यीय तथा अन्य शुभ कार्यों को करने वाला होता है। चूंकि तृतीय भाव में मेष राशि पड़ती है, अतः कालपुरुष के अंग इसके छोटे भाई के लिए विशेष महत्व रखते हैं, जैसे तृतीय भाव से चतुर्थ भाव का स्वामी चतुर्थ राशि का भी स्वामी होगा, अतः छोटे भाई के लिए फेफड़ों, छाती आदि का विशेष प्रतिनिधित्व करेगा तथा चन्द्र के पापयुक्त या पापदृष्ट होने पर छोटे भाई को छाती के रोग बहुधा होंगे। इसी प्रकार छोटे भाई के पांचवें भाव का स्वामी पांचवीं राशि का भी स्वामी हो जायेगा और छोटे भाई के पेट का पक्का प्रतिनिधि होकर छोटे भाई के अंगों की दशा को भली प्रकार दर्शायेगा। मंगल बली होकर छोटे भाई की आयु में विशेष लाभ पहुंचायेगा और यदि निर्बल हुआ तो उसे अल्पजीवी बना देगा।

2. **वृषभ–** जब तृतीय भाव में वृषभ राशि हो तो शुक्र तृतीय तथा अष्टम दो भावों का स्वामी बन जाता है। अतः यदि शुक्र बलवान् हो तो दीर्घ आयु देता है: क्योंकि दोनों भाव आयु के हैं। इस व्यक्ति की छोटी बहनें प्रचुर संख्या में होती हैं। यह व्यक्ति विलासिताप्रिय होता है और विलास के लिए जान जोखों के कार्य तक भी कर डालता है। शुक्र यदि निर्बल, पापयुक्त, पापदृष्ट हो तो जातक अल्पायु होता है। छोटी बहनों की इसको कमी रहती है।

3. **मिथुन–**यदि तृतीय भाव में मिथुन राशि हो तो मनुष्य श्रमप्रिय होता है। यदि बुध बलवान् हो तो उसकी छोटी बहिनें होती हैं। यदि बुध निर्बल, पापयुक्त, पापदृष्ट हो, विशेषतया पंचम भाव में शनि द्वारा युक्त अथवा दृष्ट अथवा शुभ युति न हो, बुध जब पंचम भाव में पड़ेगा तो वह तृतीय से तृतीय होने के कारण तृतीय भाव की हानि करने वाला होगा। पंचम भाव में बुध पड़कर छठे भाव से, जहां इसकी अन्य राशि है, द्वादश पड़ेगा:

अतः छठे भाव—–ऋण दरिद्रता की भी हानि करने वाला होगा और जब बुध पर केवल मात्र पाप दृष्टि होगी तो तृतीय तथा षष्ठ भावों को और अधिक हानि पहुंचेगी। अब तृतीय तथा षष्ठ, दोनों अशुभ भाव हैं अतः निर्धनता, अभाव को बहुत हानि पहुंचेगी: अभाव की हानि का अर्थ है धनाढ्य और संपत्तिशाली होना। अतः बुध विपरीत राजयोग बनाता हुआ अत्यन्त शुभ हो जाएगा।

तृतीय भाव तथा बुध पर यदि दो पाप ग्रहों का युति अथवा दृष्टि द्वारा प्रभाव पड़ रहा हो तो जातक की अचानक मृत्यु हो जाने का योग बनता है: कारण, तृतीय स्थान अष्टम से अष्टम होने के कारण आयु का स्थान है और ज़ब बुध आयु स्थान का स्वामी होकर पीड़ित एवं निर्बल हो जाता है तो इसका अर्थ यह होता है कि मनुष्य को आयु सम्बन्धी सद्यः कष्ट मिले, क्योंकि बुध चन्द्रवत् अल्पावस्था का ग्रह होने के कारण शीघ्रतम तथा अचानक अर्थात् समय से पूर्व फल देता है।

4. **कर्क**—कर्क राशि का स्वामी चन्द्र है जो कि मन से सम्बन्ध रखता है और तृतीय स्थान मनोविनोद (Hobby) का भी है। अतः चन्द्र जिस भाव में स्थित होगा वह भाव इस व्यक्ति को विशेष प्रिय होगा, जैसे चतुर्थ भाव में सिंह राशि का चन्द्र हो और बलवान् हो तो मनुष्य जनता के कार्यों (Politics) में विशेष रुचि लेने वाला: यदि पंचम भाव कन्या राशि में हो तो मनोविनोद के स्थानों जैसे सिनेमा, क्लब आदि में विशेष रुचि वाला होता है। यदि चन्द्र निर्बल, पापयुक्त, पापदृष्ट हो तो छोटे भाई की छाती दुर्बल होती है तथा उसको टी० बी०, न्यूमोनिया आदि छाती के रोगों के होने की संभावना अधिक रहती है। यदि तृतीय भाव पर भी अशुभ दृष्टि विशेषतया मंगल की हो तो छोटा भाई कुबड़ा हो जाता है।

5. **सिंह**—सिंह राशि का स्वामी सूर्य होता है, सूर्य पुरुष ग्रह है। अतः यदि सूर्य गुरु की दृष्टि द्वारा बलवान् हो तो इस व्यक्ति को छोटे भाई की प्राप्ति होती है। इसका छोटा भाई साहसी, वीर, राज्यमानी होता है। यदि सूर्य एकादश अथवा दशम स्थान में हो तो मनुष्य बड़ा महत्त्वाकांक्षी (Ambitious) होता है तथा राजपुरुषों से सम्पर्क वाला होता है।

6. **कन्या**–यहां भी बुध तृतीयाधिपति तथा द्वादशाधिपति बनता है। यदि बुध पंचम भाव में वृश्चिक राशि का होकर बैठ जाये तो यह बुध तृतीय भाव से तृतीय, द्वादश भाव (इसकी दूसरी राशि मिथुन) से षष्ठ अर्थात् दोनों भावों को हानि पहुंचाने की स्थिति में हो जाता है। शत्रु की राशि अर्थात् वृश्चिक राशि में बैठकर वह उन दो भावों को और भी अधिक हानि पहुंचाएगा। अब यदि बुध पर केवल मात्र शनि आदि ही की पापदृष्टि हो और शुभ युति अथवा शुभ दृष्टि बिल्कुल न हो तो द्वादश भाव तथा तृतीय भाव को अत्यन्त हानि पहुंचेगी। यह हानि बहुत अभीष्ट है, क्योंकि द्वादश तथा तृतीय भाव प्रदर्शित अभाव तथा दरिद्रता की हानि ही करोड़पति बनाने का योग उत्पन्न करती है। अतः यह महान् सम्पत्ति तथा धनदायक विपरीत राजयोग हुआ: इतना अवश्य है कि यदि तृतीय भाव पर भी केवल पापदृष्टि हो तो बुध अपनी अन्तर्दशा में अकस्मात् मृत्यु योग भी ला खड़ा करेगा।

7. **तुला**–जब तृतीय भाव में तुला राशि पड़ती है तो तृतीयाधिपति शुक्र दशमाधिपति भी बन जाता है। अतः ऐसा व्यक्ति राज कार्यों में बाहु प्रयास करने वाला अथवा भाग लेने वाला होता है। यदि शनि भी तृतीय भाव से अच्छी स्थिति में बलवान् हो तो उस व्यक्ति का छोटा भाई, यदि हो तो, जीवन में बहुत उन्नति पाता है। बलवान शुक्र सिंह लग्न वाले को धन के लिए अच्छा नहीं। इसका निर्बल होना ही उसके लिए धनदायक है।

8. **वृश्चिक**–यदि मंगल बलवान् हो तो बहुत आयु देता है। परन्तु बलवान् मंगल बहुत थोड़ा धन देता है: क्योंकि यह दो अशुभ घरों का स्वामी होता है। दशम भाव में मिथुन में स्थित मंगल यौवन अवस्था में व्यसन देता है तथा हिंसा के कार्य करवाता है।

9. **धनु**–यहां भी गुरु दो अशुभ भावों, तृतीय तथा षष्ठ का स्वामी है। इसका निर्बल होना धन देता है। गुरु मित्र भाव का स्वामी है। यदि नवम में पड़ जाए तो व्यक्ति महात्माओं सन्तों से सत्संग करने वाला, धार्मिक होता है: उसके मित्र भी बड़े धार्मिक होते हैं।

10. **मकर**–यदि शनि चतुर्थ स्थान में बली हो तो व्यक्ति निम्न वर्ग का हितैषी, जनता के हित को चाहने वाला, जनप्रिय होता है। उसका छोटा

भाई कुछ सख्त बोलने वाला होता है । उसको भूमि-जायदाद की अच्छी प्राप्ति होती है । शनि यदि बलवान् हो तो उसकी छोटी बहनें संख्या में प्रचुर होती हैं, क्योंकि शनि स्वतन्त्र रूप से एक स्त्री ग्रह है; यद्यपि इसका प्रभाव वीर्यहीनता (Impotency) का है । यदि शनि निर्बल, पापयुक्त, पापदृष्ट हो तो छोटी बहिनों की कमी होती है । मित्रों से कष्ट पाता है ।

11. **कुम्भ**– यदि शनि बलवान् हो तो छोटी बहिनें संख्या में बहुत होती हैं ।

इसको दीर्घ आयु की प्राप्ति होती है । इसको मित्रों तथा बहिन-भाइयों से धन की प्राप्ति होती है । यदि शनि निर्बल हो तो छोटे बहिन-भाइयों तथा मित्रों द्वारा धन का नाश होता है । आयु क्षीण होती है ।

12. **मीन**–यहां गुरु तृतीयाधिपति तथा द्वादशाधिपति बनता है । दोनों भाव अशुभ हैं । अतः गुरु निर्बल, पापयुक्त, पापदृष्ट हो तो बहुत धन देता है । यदि गुरु बलवान् हो तो छोटे भाई देता है । यदि गुरु नवम में स्थित हो तो सन्तों के साथ सत्संग करने वाला होता है । गुरु पर पापदृष्टि हो तो धन का नाश छोटे भाइयों द्वारा होता है ।

6. चतुर्थ भाव

नेतृत्व सफल या असफल, भूमि से लाभ,
बदली, शत्रुता, पुत्र से सुख या दुःख,
देश निकाला, विद्रोह, अचानक कष्ट ।

1. **पागलपन**—यदि चतुर्थ भाव तथा उसका स्वामी तथा चन्द्र, बुद्धिद्योतक अन्य अंगों: जैसे——लग्नेश, पंचमेश तथा बुध के साथ पापी ग्रहों द्वारा युत अथवा दृष्ट हों तो मनुष्य पागल (Insane) हो जाता है: कारण कि भावनाओं (Emotions) तथा बुद्धि (Intellect)का बिगड़ना ही पागलपान है। (देखिये कु० सं० 16)।

यह कुण्डली पागलपन से पीड़ित व्यक्ति की है। यहां लग्नाधिपति, चतुर्थाधिपति, डबल पाप मध्यत्व में है। चतुर्थ भाव में पापी ग्रह है, पंचमाधिपति पर शनि की दृष्टि है। चन्द्र पर शनि केतु का प्रभाव है। गुरु की दृष्टि अधिक उपयोगी नहीं: क्योंकि गुरु पर सूर्य, मंगल, केतु, शनि चार ग्रहों का प्रभाव है।
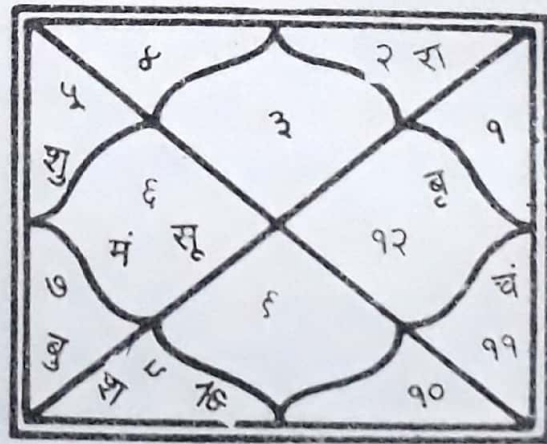
कु० सं० 16

2. **भय**—चतुर्थ भावाधिपति चन्द्र हो, चतुर्थ भाव तथा चन्द्र पर युति अथवा दृष्टि द्वारा केवल राहु का प्रभाव हो तो मनुष्य में भय की सृष्टि होती है। इस भय के कारण मनुष्य को बेहोशी (Fits) भी हो सकती है।

3. **मिरगी रोग**—यदि चतुर्थेश चन्द्र, अष्टम भाव में राहु द्वारा पीड़ित हो तो मिरगी का रोग होता है: कारण कि चतुर्थेश तथा चन्द्र दोनों ही मन के प्रतिनिधि हैं और अष्टम स्थान नाश का स्थान है तथा राहु चन्द्र के लिए विशेष त्रास उत्पन्न करने वाला प्रसिद्ध ही है।

4. **विशेष रुचि**— चतुर्थेश चन्द्र जिस भाव में स्थित हो मनुष्य उस भाव में विशेष रुचिं रखता है: जैसे चतुर्थेश षष्ठ में हो तो मनुष्य परिश्रमी तथा व्यायामप्रिय होता है: क्योंकि षष्ठ स्थान परिश्रम एवं व्यायाम का है और चतुर्थेश चन्द्र मन का पक्का प्रतिनिधि है ही।

स्त्री की कुण्डली में चतुर्थेश और पंचमेश का व्यत्यय अर्थात् स्थान परिवर्तन स्त्री को नृत्य आदि कला में निपुण बनाता है। यह योग और भी अधिक प्रबल हो जाता है जबकि पंचमेश (आमोद-प्रमोद स्थान का स्वामी) स्वयं शुक्र हो और बुध से युत हो।

5. **माता**—यदि चतुर्थ भाव का स्वामी तथा चन्द्र सब बलवान् हों तो माता की दीर्घ आयु होती है। अर्थात् जातक की पिछली आयु तक जीवित रहती है। इतना ध्यान रहे कि साथ-साथ छटे तथा ग्यारहवें भावों के स्वामी भी बलवान होने चाहियें: क्योंकि ये भाव माता भाव के आयु भाव हैं। यदि मंगल लग्न में, शनि द्वितीय में और चन्द्र अष्टम भाव में हो तो माता की शीघ्र मृत्यु हो जाती है। कारण स्पष्ट है कि शनि तथा मंगल का प्रभाव न केवल चतुर्थ (माता) भाव पर होगा, अपितु माता के कारक चन्द्र पर भी होगा।

6. **रोग योग**— यदि चतुर्थ भाव, उसका स्वामी, चन्द्र तथा कर्क राशि इन सब पर पाप प्रभावं पड़ रहा हो तो काल पुरुष का चतुर्थ अंग पीड़ित

समझना चाहिए, अर्थात् मनुष्य को छाती के रोग: जैसे न्यूमोनिया, खांसी, तपेदिक आदि होते हैं।

7. सुख—यदि चतुर्थ भाव, उसका स्वामी तथा गुरु तीनों पाप प्रभाव में हों तो मनुष्य जीवन में बहुत दुख भोगता है: क्योंकि सुख के द्योतक सभी अंगों को हानि पहुंचती है। इसके विपरीत यदि यही तीनों अंग शुभ प्रभाव में हों तो मनुष्य का जीवन सुख-शान्ति तथा आराम से व्यतीत होता है।

8. वाहन—यदि चतुर्थ भाव, इसका स्वामी एवं शुक्र सभी बली हों और लग्न अथवा लग्नेश से किसी प्रकार का सम्बन्ध स्थापित किए हुए हों तो मनुष्य वाहन (Conveyance) के सुख के संयुक्त होता है। कारण कि उपर्युक्त चतुर्थ भावादि तथा शुक्र वाहन के प्रतिनिधि हैं।

9. जन सेवा (Politics) अथवा नेतृत्व-यदि चतुर्थ भाव (Politics) तथा इसके स्वामी एवं चन्द्र के साथ लग्नेश का युति अथवा दृष्टि से किसी प्रकार का सम्बन्ध हो और इस सम्बन्ध में चतुर्थ भाव आदि बलवान् तथा शुभ दृष्ट हों तो मनुष्य सार्वजनिक कार्यों में भाग लेने वाला (Politician), जनप्रिय, जनहितकारी नेता होता है (देखिए कुण्डली संख्या 17)।

कु० सं० 17
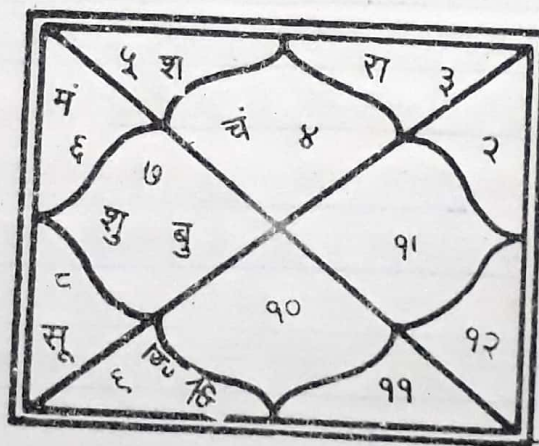
यह कुण्डली स्व० श्री जवाहरलाल नेहरू की है। वहां लग्नेश और चन्द्र लग्न का स्वामी चन्द्रमा है जो कि स्वक्षेत्री तथा पक्ष बल में बली होकर अपने केन्द्र प्रभाव द्वारा जनता द्योतक चतुर्थ भाव तथा उसके स्वामी (शुक्र) दोनों से सम्पर्क स्थापित कर रहा है।

यदि चतुर्थ भाव, उसका स्वामी तथा चन्द्र अशुभ प्रभाव में हों अथवा इनसे लग्नेश का कोई सम्बन्ध न हो तो मनुष्य को सार्वजनिक जीवन व्यतीत करने का अवसर प्राप्त नहीं होता अथवा उसका यह जीवन निष्फल जाता है।

चतुर्थ भाव जनता (Masses) का भाव है। यदि इस भाव तथा इसके स्वामी तथा इसके कारक के साथ राहु का घनिष्ठ सम्बन्ध हो तो यह योग जनता द्वारा राजद्रोह (Revolt) किये जाने को दर्शाता है। कारण कि राहु आकस्मिक क्रियाओं, दंगे-फसाद; क्रान्ति, राज-विद्रोह आदि का कारक ग्रह है। अतः उसका सम्बन्ध जनता भाव आदि से जनता में विद्रोह उत्पन्न कर देगा, यह युक्तियुक्त ही है। देवकेरलकार ने कहा भी है–"सुखेशे राहुसंयुक्तदशायां राजनिग्रहम्"–अर्थात् जब चतुर्थ भाव का स्वामी राहु से युक्त हो और राहु की दशा हो तो जनता में क्रान्ति (Revolution) हो जाती है।

जातक ज्योतिष में इस योग की उपयोगिता यह है कि यह दशा अन्तर्दशा देश में होने वाले दंगे-फसादों से मनुष्य को सूचित कर देती है।

10. **खेती जायदाद**–यदि चतुर्थ भाव तथा उसका स्वामी बलवान् हो और शनि का चतुर्थ से सम्बन्ध हो तथा लग्नेश से भी हो तो मनुष्य के पास काफी भूमि-जायदाद होती है और वह कृषि (Farming) आदि का कार्य करता है।

11. **बदली (Transfer)**–यदि चतुर्थ भाव तथा चतुर्थ भाव के स्वामी पर शनि, सूर्य, राहु तथा द्वादशेश का प्रभाव हो तो इस पृथकताजनक प्रभाव के कारण मनुष्य को अपना घर-बार, स्थान तक छोड़ना पड़ता है। यदि यह पृथकताजनक प्रभाव बहुत बलवान् न हो तो मनुष्य को रहने का स्थान बदलना पड़ता है। यदि मनुष्य सरकारी कर्मचारी हो तो उसे अधिक तबदीलियों (Transfers) का सामना करना पड़ेगा।

12. **केन्द्राधिपत्य दोष**–यदि चतुर्थेश सप्तमेश भी हो जैसा कि मीन तथा कन्या लग्नों के मनुष्यों के लिए होता है तो क्रमशः बुध तथा गुरु केन्द्राधिपत्य

दोष से दूषित होते हैं । उनका निर्बल होकर द्वितीय, छठे, आठवें तथा बारहवें स्थान में बैठना स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिप्रद है । यह हानि चतुर्थेश की अन्तर्दशा में तथा कष्टदायक ग्रह की दशा में होगी ।

13. ग्रह और रोग—यदि कोई ग्रह निर्बल होकर चतुर्थ स्थान में स्थित हो तो अपनी अन्तर्दशा तथा द्वितीयेश, सप्तमेश, अष्टमेश आदि कष्टदायक ग्रहों की महादशा में रोग देता है जिससे छुटकारा भी मिल जाता है ।

14. शत्रुता—चूंकि चतुर्थ भाव जनता का भाव है अतः यदि चतुर्थेश निर्बल एवं पाप प्रभाव में हो तो अपनी अन्तर्दशा में जनता के किसी व्यक्ति से शत्रुता देता है, क्योंकि चतुर्थ जनता का स्थान है ।

15. स्वार्थपरायणता—यदि चतुर्थ भाव, चतुर्थेश तथा चन्द्र पर राहु-शनि का प्रभाव हो और अन्य शुभ प्रभाव न हों तो मनुष्य स्वार्थपरायण होता है ।

चतुर्थ भाव में विविध राशियां

1. मेष—मंगल चतुर्थाधिपति तथा एकादशाधिपति बन जाता है, यदि बलवान् हो तो भूमि में विशेष लाभ देता है, मन में क्रोध उत्पन्न करता है, माता के भावों के स्वामी, उसी संख्या की राशि के भी स्वामी बन जाते हैं । अतः यदि कोई ग्रह अतीव निर्बल हो तो जिस राशि का वह स्वामी हो उस राशि द्वारा प्रदर्शित अंग में माता को विशेष कष्ट प्रदर्शित करता है । मंगल यदि बलवान हो तो माता को दीर्घ आयु की प्राप्ति होती है । यदि मंगल निर्बल हो तो माता अल्पायु होती है, माता की मरणविधि को उन ग्रहों से देखें जो ग्रह मंगल पर प्रभाव डाल रहे हों । क्योंकि मंगल माता का न केवल लग्नेश, बल्कि अष्टमेश भी बनता है ।

2. वृषभ—शुक्र चतुर्थेश तथा नवमेश होने से पाराशरीय नियमों के अनुसार योगकारक ग्रह बनता है । अतः अपनी अन्तर्दशा में बहुत शुभकर तथा धन-मान

दायक होता है। हां, इसको बलवान अवश्य होना चाहिए, नहीं तो लाभ बहुत थोड़ा होता है। यदि शुक्र बली हो तो व्यक्ति को सुन्दर वाहनों की प्राप्ति, बड़ी जागीर की प्राप्ति होती है। वह जनकार्यों (Politics) में भाग लेने वाला होता है। उसका भाग्य जनता में सर्वप्रिय होने से खूब चमकता है।

यदि शुक्र निर्बल, पापयुक्त, पापदृष्ट हो तो उसके पिता की अल्पायु होती है, क्योंकि शुक्र पिता के स्थान (नवम) से तृतीयाधिपति तथा अष्टमाधिपति बनता है तथा उसकी आयु का प्रदर्शक हो जाता है। उस व्यक्ति को जीवन में अचानक बहुत कष्ट आते हैं।

3. **मिथुन**—बुध चतुर्थेश तथा सप्तमेश बनता है। बुध यदि बहुत निर्बल हो तो पिता की मृत्यु व्यक्ति के बाल्यकाल में ही हो जाती है, विशेषतया जबकि बुध तथा चतुर्थ भाव दोनों मंगल द्वारा दृष्ट हों। बुध बलवान् हो तो मनुष्य भूमि-जायदाद का स्वामी होता है, बुध यदि शुक्र तथा चन्द्र के साथ हो और पापयुक्त व पापदृष्ट हो तो माता के पागल हो जाने का योग बनता है। निर्बल बुध वाला व्यक्ति स्त्री से दुःख पाता है।

4. **कर्क**—चन्द्र मन का कारक होकर मन का स्वामी भी बन जाता है। अतः जहां चन्द्र द्वितीय में हो तो लोभी, तृतीय में हो तो मित्रों को चाहने वाला, पंचम में हो तो पुत्रों का हितैषी, छठे में हो तो लाभप्रिय तथा जात्यन्तर का हितैषी आदि-आदि होता है। यदि चन्द्र निर्बल हो तो छाती के रोगों को देता है। माता को भी छाती के रोग होते हैं, क्योंकि चतुर्थ भाव में चार नम्बर की राशि (छाती) पड़ती है। चन्द्र यदि राहु से प्रभावित हो तो व्यक्ति को गश (Swoons) आने का रोग होता है, चन्द्र यदि अष्टम स्थान में राहु से प्रभावित हो तो मिरगी का रोग देता है, क्योंकि मन में डर (Phobia) की विशेष उत्पत्ति होती है।

5. **सिंह**—चतुर्थेश सूर्य होता है। यदि सूर्य बलवान् हो तो मनुष्य का निवास-स्थान खुला, प्रकाशयुक्त होता है, उत्तम प्रकार का सुख प्राप्त होता है, माता मनस्विनी साहसी होती है। सूर्य यदि निर्बल होकर शनि, राहु आदि के प्रभाव में हो तो मनुष्य निवास-स्थान से सदा दूर रहने वाला और यदि

राज-कर्मचारी हो तो बहुत तबदीलियां (Transfers) पाने वाला होता है। उसकी माता के अंगों में दर्द रहता है।

6. **कन्या**—बुध लग्नेश तथा चतुर्थेश होता है। अतः बुध यदि बलवान हो तो व्यक्ति अतीव बुद्धिमान्, धनी, विविध भाषायें जानने वाला, जनप्रिय, बहुत काल तक माता का सुख पाने वाला, वाहनादि से युक्त होता है। यदि बुध निर्बल हो तो दुखी, निर्धन, मूर्ख, अल्प विद्या वाला, जनता विरोधी होता है।

7. **तुला**—शुक्र चतुर्थाधिपति तथा एकादश भावाधिपति बनता है। शुक्र यदि सप्तम अथवा द्वादश स्थान में हो तो बहुत कामातुर, विषयी होता है, क्योंकि द्वादश तथा सप्तम भाव भोग के भाव हैं और चतुर्थेश शुक्र मन में शुक्र के भोग-विलास के संस्कारों का द्योतक है। शुक्र और राहु यदि द्वादश में स्थित हैं तो व्यक्ति की माता दीर्घ तथा असाध्य रोग से मृत्यु पाती है, क्योंकि राहु न केवल अपनी युति से चतुर्थेश शुक्र को प्रभावित करता है, बल्कि राहु की दृष्टि चतुर्थ भाव पर पड़ती है। अतः शुक्र, जो कि चतुर्थ को लग्नाधिपति तथा अष्टम अधिपति है, राहु द्वारा मरण विधि को बतलाता है। राहु दीर्घ तथा असाध्य रोग देता ही है। शुक्र के अतीव निर्बल होने से माता का सुख बहुत अल्प हो जाता है। शनि, राहु आदि से प्रभावित शुक्र वाहन का सुख नहीं होने देता। शनि, राहु आदि से प्रभावित शुक्र देश से बाहर निकाल देता है।

8. **वृश्चिक**—मंगल चतुर्थाधिपति तथा नवमाधिपति बन जाता है, एक केन्द्र स्थान है, दूसरा त्रिकोण। अतः मंगल राजयोग कारक ग्रह बन जाता है और यदि बलवान् हो तो अपनी अन्तर्दशा में उत्तम फल, सुख, धन, मान, राज्य-कृपा, पदवी, उन्नति आदि देता है। ऐसे व्यक्ति के भाग्य में भूमि से लाभ उठाना होता है। वह पिता से खूब सुख पाता है। यदि मंगल निर्बल, पापयुक्त, पापदृष्ट हो तो पिता को अल्पायु देता है, क्योंकि मंगल पिता के लग्न (नवम) तथा उसके अष्टम (चतुर्थ) भावों का स्वामी बन जाता है।

पायुक्त पापदृष्ट मंगल पिता को उसके अण्डकोषों में कष्ट देता है, क्योंकि मंगल पिता भाव से अष्टमेश तथा अष्टम राशि का स्वामी बनता है।

9. **धनु**–गुरु चतुर्थेश तथा सप्तमेश बनता है। अतः मन को ज्ञानी तथा गौरवमय बनाता है। गुरु यदि बलवान हो तो माता दीर्घायु, उसको वाहन की प्राप्ति, भूमि आदि का सुख तथा अन्य प्रकार से बहुत सुखी जीवन रहता है, क्योंकि गुरु जहां सुख स्थान का स्वामी है वहां सुख का कारक भी है। निर्बल गुरु केन्द्राधिपत्य दोष उत्पन्न करता है और अपनी भुक्ति में रोग देता है और मनुष्य के जीवन में दुःख को ला खड़ा करता है।

10. **मकर**–शनि केन्द्र (चतुर्थ) तथा त्रिकोण (पंचम) का स्वामी बनता है। अतः अतीव शुभ योग कारक हो जाता है। यदि शनि बलवान हो तो बहुत-सा धन, भूमि, पदवी, उन्नति, मान, यश देता है। मनुष्य जनता का हितैषी होता है और प्रमोद प्रिय होता है। यदि शनि निर्बल हो तो पुत्र की ओर से उसे दुःख प्राप्त होता है। उसकी माता सख्त बोलने वाली (कर्कशा) होती है। यदि शनि पर राहु का प्रभाव हो तो स्वार्थी होता है।

11. **कुम्भ**–यदि शनि बलवान् हो तो भूमि आदि का स्वामी होता है। जन कार्यों में भाग लेने वाला, मित्रों से सुखी, माता का बहुत सुख पाने वाला होता है, यदि शनि निर्बल हो तो मित्रों से कष्ट पाने वाला, जनता का विरोधी, दुखी होता है।

12. **मीन**–गुरु लग्नेश तथा चतुर्थेश होता है। अतः यह व्यक्ति बहुत ज्ञानी, गुणी, गम्भीर, दानी, धनी, परोपकारी, जनप्रिय, माता का बहुत सुख पाने वाला, हर प्रकार के सुख से सुखी होता है, यदि गुरु निर्बल हो तो जनता का विरोध करने वाला, दुखी होता है।

7. पंचम भाव

मंत्री पद योग: पुत्र-प्राप्ति: प्रतियोगिता
परीक्षाओं में सफलता: प्रेम विवाह: लाटरी

1. **बुद्धि से सम्बन्ध**–पंचम भाव का बुद्धि से सम्बन्ध होने के कारण विद्या सम्बन्धी प्रश्नों का विवेचन पंचम भाव, उसके स्वामी तथा विद्या कारक बुध द्वारा भी किया जाना चाहिए। इन तीनों में से जितने अंग अधिक बली तथा शुभदृष्ट होंगे उतनी ही अधिक विद्या मनुष्य को प्राप्त होगी।

2. **जातक का इष्ट देव**–इष्ट देव भी हमारे विचार तथा ध्यान का विषय है; अतः मनुष्य किस प्रकार के इष्ट देवता--विष्णु, शिव, दुर्गा, हनुमान आदि का चिन्तन करता है, इस बात का विचार भी पंचम भाव से किया जाता है। सूर्य विष्णु रूप है : चन्द्र सरस्वती रूप: मंगल हनुमान रूप : बुध पुनः विष्णु तथा वेदान्त रूप :बृहस्पतिब्रह्मरूप : शुक्र दुर्गा रूप तथा शनि शिव-भैरव रूपहैं।

3. **मन्त्री पद**--यदि पंचम स्थान बहुत बली हो तो मनुष्य की मन्त्रणा शक्ति अर्थात् दूसरों का मार्ग-प्रदर्शन करनें की शक्ति बलवान् होती है और उसकी नियुक्ति मन्त्री पद पर भी हो सकती है।

यदि पंचमेश तथा दशमेश में शुभ व्यत्यय हो, अर्थात् इन दो भावों के स्वामी नैसर्गिक शुभ ग्रह हों और एक-दूसरे की राशि में स्थित हों, जैसे--वृषभ राशि का दशम भाव में गुरु और धनु राशि का पंचम भाव में शुक्र हो

तो पंचम तथा दशम का पारस्परिक घनिष्ठ संबंध होने के कारण, अपनी मन्त्रणा शक्ति (पंचम) (Advisory Capacity) का लाभ राज्य (दशम) को पहुंचाने की योग्यता वह मनुष्य रखता है। (देखिये कु० सं० 17)।

4. **पुत्र–प्राप्ति**—लग्न, नवम से पंचम होता है: अतएव पिता का पुत्र अर्थात् निज का स्थान है। इसी प्रकार निज भाव अर्थात् प्रथम भाव से पंचम भाव अपने पुत्र से सम्बन्ध रखता है। पुत्र का विचार पंचम भाव, उसके स्वामी, पुत्र कारक, गुरु, नवम भाव तथा नवमेश इन सब द्वारा करना चाहिए। यदि ये सब निर्बल अथवा पापयुक्त व पापदृष्ट हों तो पुत्र की प्राप्ति नहीं होती। जैसे किसी भी लग्न की कुण्डली में यदि मंगल द्वितीय भाव में और शनि तृतीय भाव में हो और गुरु पंचम अथवा नवम में से किसी भाव में हो तो पुत्र या तो होता ही नहीं और यदि पंचमेश आदि के बली होने के कारण हो भी जाए तो जीवित नहीं रह सकता: शिशु अवस्था में ही मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। कारण यह है कि ऐसी स्थिति में शनि तथा मंगल दोनों पापी ग्रहों की पूर्ण दृष्टि पुत्र स्थान अर्थात् पंचम भाव पर पड़ती है और पुत्र का कारक ग्रह भी इन्हीं दोनों की पापदृष्टि के प्रभाव में आ पड़ता है। इस प्रकार पुत्रदायक अधिकांश अंग प्रबल दुहरे पाप प्रभाव में आ जाते है: जिससे पुत्र प्राप्ति असंभव हो जाती है।

पंचम भाव में सूर्य गर्भों की हानि करता है। इस स्थान में बलवान चन्द्र अधिक कन्याओं की उत्पत्ति करता है। इस भाव में मंगल——विशेषतया शत्रु राशि का मंगल, संतानों का नाश करता है। इस स्थान में मेष राशि का मंगल भी पुत्रोत्पत्ति में बाधक होता है। इसका कारण यह है कि मंगल द्वादशाधिपति होकर आता है और पंचम के अष्टमाधिपति होने से और भी अधिक
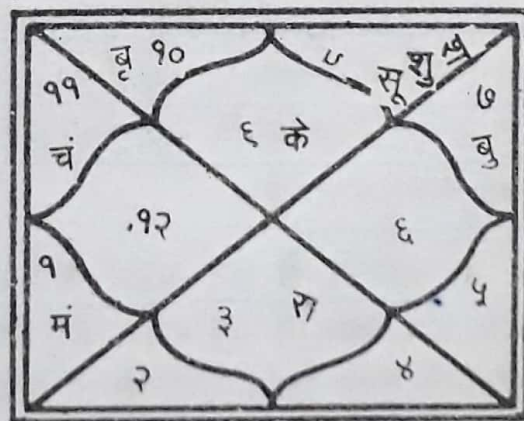
कु० सं० 18

अनिष्टकारी हो जाता है। बुध तथा शनि के एकांतिक (Exclusive) प्रभाव की उत्पत्ति में प्रबल बाधा होती है; क्योंकि दोनों ग्रह ठण्डे तथा नपुंसक हैं। गुरु इस स्थान में तभी शुभ फल करता है, अर्थात् पुत्रदायक होता है; जबकि पापयुक्त, पापदृष्ट तथा निर्बल न हो। शुक्र इस भाव में पुत्र-पुत्रियां दोनों देता है। शनि इस भाव में गर्भहानि करता है। राहु तथा केतु का फल शनि तथा मंगल के अनुसार समझना चाहिए।

यदि पंचमाधिपति शनि बुध के अंश में हो और बुध द्वारा ही दृष्ट भी हो तो सन्तान रुकने का योग बनता है।

5. प्रेम विवाह– पंचम स्थान प्रियतमा (Beloved) अथवा प्रियतम का है। जब इस भाव का सम्बन्ध घनिष्ठ रूप से सप्तम भाव अथवा उसके स्वामी से हो जाता है तो पुरुष का विवाह मर्यादित विवाह न होकर एक प्रेम-विवाह (Love Marriage) हो जाता है। जैसे तुला लग्न और पंचमेश शनि सप्तमेश मंगल के साथ एकादश भाव में स्थित हो तो मनुष्य प्रेम-व्यवहार द्वारा प्रेम-विवाह (Love Marriage) करता है, न कि परम्परानुसारी।

6. विनोद– पंचम स्थान विनोद का भी है। विनोद के स्थानों; जैसे–सिनेमा, क्लब, खेल के स्थान आदि का विचार इसी भाव से करते हैं। यदि चतुर्थेश और पंचमेश में व्यत्यय हो और बुध-शुक्र का युति अथवा दृष्टि द्वारा सम्बन्ध भी हो तो व्यक्ति सिनेमा आदि विनोदप्रद स्थानों का इच्छुक होता है।

7. प्रतियोगिता की परीक्षाएं–पंचम भाव चूंकि बुद्धि से सम्बन्ध रखता है। अतः प्रतियोगिता की परीक्षाएं (Competitive Exams.) जैसे–एस. ए. एस. (Subordinate Accounts Service Exam.) आदि का विचार इस स्थान से करना चाहिए। भाव, भावाधिपति तथा भावकारक (यहां बुध) का सामान्य नियम यहां भी लागू होता है।

8. लाटरी से धन–पंचम भाव सट्टे, लाटरी आदि का स्थान भी है। यदि इस स्थान में राहु अथवा केतु स्थित हों और पंचमेश बलवान होकर शुभ ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो तो लाटरी प्राप्त होने का योग बन जाता है। यदि बुध पंचमेश हो तो और भी पक्का योग बन जाता है; क्योंकि राहु-केतु

की भांति बुध भी सद्यः फलदायक है। पुनः यदि शुभ नवमेश भी इस योग में सम्मिलित हो जाए तो बहुत लाभदायक होता है, क्योंकि नवम भाव भाग्य (Divine Dispensation) का है और लाटरी भी भाग्य का, न कि पुरुषार्थ का, फल है। स्मरण रहे कि नवम से नवम होने के कारण पंचम में भी भाग्य का पर्याप्त अंश है।

9. **राजयोग**—नवम से नवम होने के कारण पंचम भाव भी शुभता में श्रेष्ठ है। यह भी एक त्रिकोण स्थान है: अतः चतुर्थेश (केन्द्र का स्वामी) से पंचमेश का सम्बन्ध पाराशरीय नियमों के अनुसार राजयोग, धन आदि को उत्पन्न करने वाला होता है। चतुर्थेश की दूसरी राशि भी अच्छे भाव का स्वामी होनी चाहिए।

10. **तृतीय भाव तथा धनोपार्जन**—यदि स्त्री की कुण्डली में तृतीयाधिपति तथा लग्नाधिपति का धन तथा धनाधिपति से युति अथवा दृष्टि द्वारा सम्बन्ध हो तो वह अपने हाथों से (Independently) धन कमाने वाली होती है।

11. **बालारिष्ट**—चन्द्र जब पंचम स्थान में क्षीण बली होकर पाप ग्रहों के प्रभाव में हो तो बालारिष्ट देता है—अर्थात् नवजात को शैशव में मृत्यु का भय रहता है। बुध भी चन्द्र का पुत्र माना गया है। अतः इस विषय में यह भी चन्द्रवत् ही कार्य करता है। अर्थात् बुध यदि पंचम भाव में पापयुक्त तथा पापदृष्ट हो तो रोग इतना गम्भीर होता है कि बच्चे के स्वास्थ्य के सम्बन्ध में डाक्टर लोगों को भी इलाज नहीं सूझता।

12. **गर्भ**—सूर्य पंचम भाव में गर्भ-हानि करता है। चन्द्र इस भाव में यदि बली हो तो अधिक संख्या में लड़कियां देता है। मंगल यहां उत्पन्न हुए पुत्र का नाश करता है: यदि स्वक्षेत्र अथवा सर्वोच्च में न हो तो: परन्तु मेष राशि का मंगल पंचम भाव में गर्भ-हानि करता है: क्योंकि मंगल पंचम स्थान से अष्टम तथा लग्न से द्वादश स्थान का स्वामी बन जाता है। बुध, जैसा कि हम ऊपर लिख चुके हैं, चन्द्र की भांति बालारिष्ट देता है। गुरु इस स्थान में यदि स्वक्षेत्र सर्वोच्च अथवा मित्र राशि में हो तो पुत्र देता है। अन्यथा स्थित होने पर तथा पापदृष्ट होने पर पुत्र की प्राप्ति में बाधक होता है।

13. **पागलपन**— चूंकि पागलपन में बुद्धि का बिगड़ना अनिवार्य है और पंचम स्थान बुद्धि का है: अतः पागलपन की समस्या का उत्तर ढूंढने

में लग्न, चतुर्थ भाव, चन्द्र, बुध के अतिरिक्त पंचम भाव का विचार करना भी आवशयक है (देखिये कु० सं० 16) ।

14. पापी ग्रह—जो ग्रह निसर्ग से पापी है: जैसे——मंगल, शनि, सूर्य: वह जब पंचम भाव में पड़ जाता है तो निर्बल हो जाता है । इस अवस्था में ये उन भावों को, जिनके कि ये स्वामी हों, हानि पहुंचाते हैं । अतः शुभ घरों के स्वामी, परन्तु नैसर्गिक पापी ग्रह, जब पंचम भाव में स्थित हों तो उन पर शुभ दृष्टि आवश्यक है: अन्यथा वे अनिष्ट फल देते हैं ।

यदि पंचम भाव में चन्द्र पापी ग्रहों से पीड़ित हो तो पिता को तुरन्त ही अरिष्ट (रोग) होता है । इस सम्बन्ध में देवकेरलकार[1] का कहना है:—

सुते पापयुते चन्द्रे शनिअंगारकवीक्षिते ।
पितारिष्ट जन्म दाये दशांशन्हभुक्तिषु ।।

अर्थात् यदि पंचम भाव में चन्द्र स्थित हो और उस पर शनि तथा मंगल की दृष्टि हो तो जातक की जन्म दशा अर्थात् पहली दशा में ही तथा दशानाथ के नवांश के स्वामी की भुक्ति में पिता को महान् शारीरिक कष्ट होता है । यहां पिता को अरिष्ट की प्राप्ति का यह कारण नहीं है कि पंचम स्थान दशम स्थान (जो कई पंडितों की सम्मति में पिता का भाव है) से अष्टम बनता है और वहां पाप ग्रहों का प्रभाव है, बल्कि वास्तविक कारण यह है कि पंचम भाव पिता के भाव (नवम भाव) से नवम भाव बनता है । यदि पंचम भाव पीड़ित होता है तो दो प्रकार से पिता के शरीर को कष्ट पहुंचाता है: एक तो इसलिए कि 'भावात् भावम्' के सिद्धांतानुसार पंचम भाव से नवम होने के कारण नवम भाव ही समझा जाएगा । दूसरे, अरिष्ट का उल्लेख करते हुए वराह मिहिर आचार्य ने अपने बृहज्जातक ग्रंथ में लिखा है—

सुत—मदन—नवान्त्य—लग्न—रन्ध्रेषु ।
अशुभ युतो मरणाय शीतरश्मि ।।

1. इस प्रसिद्ध ग्रंथ का सरल रुपान्तर 'चन्द्रकला नाडी' नाम से छपा है । पाठक इस पते से मंगा सकते हैं— रंजन पब्लिकेशन्स, 16, अंसारी रोड, नई दिल्ली— 110002

अर्थात् जब चन्द्र किसी लग्न से पंचम, सप्तम, नवम, प्रथम अथवा अष्टम भाव में पापी ग्रहों से युक्त होता है तो मनुष्य की मृत्यु जन्म के शीघ्र बाद ही हो जाती है। इस सिद्धान्त को यदि पिता की लग्न पर लगाया जाये तो स्पष्ट है कि पिता के स्थान (नवम) से नवम स्थान अर्थात् पंचम स्थान में पापयुक्त चन्द्र पिता को अरिष्ट देगा।

पंचम भाव में विविध राशियां

1. मेष—मंगल, पंचमेश तथा द्वादशेश बनता है। यदि मंगल बलवान् हो तो धन आदि का देने वाला होता है: क्योंकि द्वादशेश इतर राशि का फल करता है। यदि मंगल मिथुन राशि का सप्तम में हो तो मनुष्य को अतिशय विषयी बनाता है। मेष राशि में स्वक्षेत्री मंगल भी द्वादशेश होने के कारण कर्मों की हानि करने वाला होता है। बलवान् मंगल (पंचम से इतर स्थान में) पुत्र की प्राप्ति करवाता है। निर्बल मंगल से विद्या की हानि होती है, पुत्र द्वारा धन का नाश होता है तथा पुत्र को अण्डकोषों में रोग होता है। यदि कुण्डली में कोई ग्रह विशेष रूप से पीड़ित एवं निर्बल है तो वह पंचम से जिस भाव का स्वामी है, उस भाव संख्या के अनुरूप पुत्र के शरीर के अंग में व्याधि आदि देगा, क्योंकि मेष राशि से पंचम स्थान में पड़ जाने के कारण पुत्र के लिए प्रत्येक ग्रह का स्वामी उसी संख्या की राशि का स्वामी होने से उस संख्या द्वारा प्रदर्शित अंग का विशेष प्रतिनिधित्व करता है।

2. वृषभ—शुक्र योगकारक होने के कारण अतीव शुभ, धन, पदवी आदि का देने वाला होता है। बलवान् शुक्र पुत्र द्वारा शुभ कार्यों को करवाने वाला, मन्त्रणा-शक्ति तथा शासन शक्ति को देने वाला होता है। यदि शुक्र निर्बल, पापयुक्त, पापदृष्ट हो तो शुक्र अपनी भुक्ति में थोड़ा लाभ कराता है। पुत्र

द्वारा कर्मों का नाश होता है, अपने विचारों के कारण राज्य से विरोध हो जाता है ।

3. **मिथुन**- बुध साधारण बलवान् हो तो कोई विशेष लाभ नहीं देता, क्योंकि यह अष्टमेश भी हो जाता है । बुध विशेष बली हो तो अचानक लाटरी आदि से लाभ पहुंचाता है: व्यक्ति बुद्धिमान्, सुशिक्षित होता है । यदि शनि आदि का प्रभाव पंचम भाव पर हो और पंचमेश तथा गुरु पर भी पाप प्रभाव हो तो सन्तान नहीं होती तथा पेट में वायु रोग होता है । पंचम भाव दशम से अष्टम है । अतः पति अथवा पत्नी (सप्तम स्थान) की माता की आयु का द्योतक है । अतः पंचम भाव तथा बुध यदि मंगल आदि से पीड़ित हों तो पति अथवा पत्नी की माता शीघ्र मृत्यु को प्राप्त होती है ।

4. **कर्क**–पंचमेश चन्द्र यदि बलवान् हो तो पुत्र अच्छी उन्नति करता है । यदि निर्बल हो तो पुत्र को छाती के रोग न्यूमोनिया, खांसी आदि होते हैं । चन्द्र बलवान हो तो मनुष्य की स्मरण शक्ति बलवान् होती है, विद्या भी अच्छी होती है ।

5. **सिंह**–सूर्य पाच नम्बर की राशि तथा पांच नम्बर के भाव, दोनों का स्वामी हो जाता है । अतः यदि पापयुक्त अथवा पापदृष्ट हो तो पेट में रोग देता है । यदि राहु आदि से पीड़ित हो तथा राहु आदि का प्रभाव पंचम भाव पर भी हो तो दिल का रोग (Heart Trouble) देता है, क्योंकि सिंह राशि तथा सूर्य दिल है तथा राहु अचानक आक्रमण करने के लिए प्रसिद्ध है ।

6. **कन्या**–बुध द्वितीयाधिपति तथा पंचमाधिपति होता है । यदि बलवान् हो तो मनुष्य को विद्वान्, महान् वक्ता (Orator) धनी और बुद्धिमान बनाता हैं, पुत्र उसका विशेष मान पाता है । शरीर से सुन्दर होता है । यदि बुध निर्बल, पापयुक्त, पापदृष्ट हो तो धन का नाश होता है, विद्या अल्प होती है, शीघ्र ही गर्भपात होते हैं, वाणी में दोष होता है, पुत्र द्वारा धन का नाश होता है ।

7. तुला–शुक्र पंचमेश तथा द्वादशेश बन जाता है ! यदि बलवान् हो तो बहुत धन देता है, क्योंकि द्वादशेश अपना इतर राशि का फल करता है, जो कि शुभ पंचम त्रिकोण में पड़ती है। यदि शुक्र सप्तम स्थान में हो तो मनुष्य अतिशय विषयी होता है, क्योंकि भोग स्थानों के स्वामी का योग, भोग स्थान से एक भोगी ग्रह द्वारा हो जाता है। बलवान् शुक्र बहुत कन्या (सन्तान) देता है। शुक्र निर्बल हो तो पुत्र नाश होता है। शुक्र पर प्रभाव से पुत्र के मरण की विधि का ज्ञान होता है, क्योंकि शुक्र पंचम भाव का लग्नेश तथा अष्टमेश है। यदि पंचम भाव को लग्न मानने पर, शनि बलवान् होकर स्थित हो तो पुत्र उच्च पदवी प्राप्त करता है।

8. वृश्चिक–मंगल दशम केन्द्र तथा पंचम त्रिकोण का स्वामी होने से योगकारक शुभ ग्रह है और धन, पदवी देने वाला होता है। अपनी भुक्ति में बहुत शुभ फल करता है। मंगल बलवान् हो तो अपनी बुद्धि के प्रताप से राज्य सत्ता को प्राप्त करने वाला होता है मन्त्रणा शक्ति के कारण वह संसार में मान प्राप्त करता है। यदि मंगल निर्बल हो तो उसके मान को उसके पुत्र अथवा दूसरी सन्तान द्वारा हानि पहुंचती है। उसकी विद्या में बाधा पड़ती है, उसके पेट में रोग आदि होते हैं।

9. धनु–यदि गुरु बली हो तो पुत्र देता है, नहीं तो बहुधा थोड़ा भी पाप प्रभाव से गुरु पुत्र देने में असमर्थ हो जाता है। बलवान् गुरु उच्च विद्या देता है, मंत्रणा शक्ति देता है। निर्बल गुरु बड़ी बहिन के विवाहित जीवन को बिगाड़ता है क्योंकि गुरु बड़ी बहिन के भाव (एकादश) से सप्तमेश होकर तथा पतिकारक होकर जब पाप प्रभाव में होता है तो एकादश के विवाहित जीवन पर प्रभाव पड़ता है।

10. मकर–यदि शनि बलवान् हो तो व्यक्ति की कई लड़कियां होती हैं। इसके पुत्र की वाणी कर्कश होती है। यदि शनि निर्बल हो तो पुत्र कार्य में बाधा डालने वाला होता है।

11. **कुम्भ**–शनि योगकारक, शुभ फलदाता, धन, मान, पदवी दाता हो जाता है। बलवान् शनि शत्रु पुत्र से सुख देता है, पुत्र द्वारा भूमि की प्राप्ति भी होती है। यदि शनि निर्बल, पापयुक्त, पापदृष्ट हो तो पुत्र से दुःख, गृह-त्याग, अल्प विद्या, अल्प धन होता है।

12. **मीन**–गुरु दो शुभ भावों का स्वामी होने से अतीव शुभ फल का देने वाला हो जाता है। बलवान् गुरु, कुटुम्ब का सुख, पुत्र का सुख विद्या का सुख, वाणी का सुख (Oratory) आदि हर प्रकार का सुख देने वाला हो जाता है,बल्कि गुरु जिस भाव तथा भावेश अथवा कारक पर दृष्टि डालता है उस भाव को धनी, मूल्यवान प्रशस्त बना देता है, जैसे शनि पर दृष्टि हो तो मनुष्य मूल्यवान् भूमि का स्वामी हो जाता है।

8. षष्ठ भाव

गोद जाना: विपरीत राजयोग से प्रचुर

धन, चोट, रोग, चोरी हो जाना, हिंसा

1. **परत्व तथा अन्यत्व**–छठा भाव शत्रु स्थान कहलाता है । शत्रु निज हित की हानि करता है, अतः वह अपना नहीं, पराया कहलाता है । इस हेतु दूसरों, अन्यों, म्लेच्छों, इतर जाति, विदेशी आदि व्यक्तियों तथा वस्तुओं का विचार छठे भाव से किया जाता है । छठे भाव का विचार इस सन्दर्भ में करते समय ग्यारहवें भाव का विचार भी साथ ही साथ कर लेना चाहिए, क्योंकि ग्यारहवां स्थान छठे से छठा होने के कारण, 'भावत् भावम्' के नियमानुसार अपने में छठे भाव के गुण-दोष भी रखता है । इन दो भावों के अतिरिक्त ग्रहों में राहु जात्यन्तर का द्योतक है, अतः अन्यत्व (Foreignness) का विचार करते समय राहु का विचार भी आवश्यक है । जैसे किसी कुण्डली में द्वितीय भाव तथा उसके स्वामी पर षष्ठाधिपति, एकादशाधिपति तथा राहु, इन तीनों ग्रहों का युति अथवा दृष्टि द्वारा प्रभाव पड़ रहा हो तो उस मनुष्य का कुटुम्ब (द्वितीय स्थान) अन्य हो जाता है, दूसरे शब्दों में वह व्यक्ति गोद ले लिया जाता है । इसी प्रकार सर्वत्र अन्यत्व (Foreignness) का विचार कर लेना चाहिए ।

2. **चोट का योग**–शत्रु अथवा बाधा का पहला काम चोट पहुंचाना है । अतः छठे स्थान से चोट, घाव, आदि का विचार किया जाता है जो रोगरूप है । षष्ठेश और एकादशेश, दोनों का काम चोट अथवा क्षति पहुंचाना है ।

ग्रहों में मंगल चोट पहुंचाने वाला हिंसात्मक ग्रह है । जब स्वयं मंगल ही षष्ठ तथा एकादश, दोनों का स्वामी बन जाए, जैसे कि मिथुन लग्न वालों के लिए होता है तो यह मंगल अपनी स्थिति आदि से प्रभावित अंगों पर चोट आदि लगाता है, जैसे मिथुन लग्न में स्थित मंगल सिर में चोट देता है । इसी प्रकार मिथुन लग्न वालों की कुण्डली में मंगल यदि अष्टम भाव, शनि तथा लग्नेश, तीनों को अपनी युति अथवा दृष्टि द्वारा पीड़ित करता हो तो मनुष्य की मृत्यु चोट लगने से होगी, क्योंकि मृत्यु के कारण को दर्शाने वाले अंगों, जैसे अष्टम भाव, अष्टमेश तथा लग्नेश सभी पर मंगल का क्षतिदायक प्रभाव पड़ता है ।

3. **रोग कारक**–जैसा कि ऊपर दर्शाया जा चुका है छठा भाव रोग का है । उधर शनि और राहु दो ग्रह रोग कारक (Significators of Disease) माने गए हैं । अतः स्पष्ट है कि यदि किसी कुण्डली में राहु षष्ठ स्थान में, शनि की राशि में स्थित हो तो शनि तीन प्रकार से रोग देने वाला बन जाएगा– (i) रोग कारक होने से, (ii) रोग स्थान का स्वामी होने से, (iii) राहु अधिष्ठित राशि का स्वामी होने से । ऐसा शनि जिस भाव में स्थित होगा अथवा जिस भाव पर दृष्टि डालेगा उसमें रोग की उत्पत्ति कर देगा । उदाहरणार्थ कन्या लग्न हो और राहु छठे स्थान में हो तो शनि उपर्युक्त तीनों प्रकार से रोगदायक होगा । यह शनि यदि नवम स्थान में पड़ जाए तो रीढ़ की हड्डी, नितम्ब आदि नवम स्थान प्रदर्शित शरीर के अंगों में दोष तथा रोग उत्पन्न करेगा । अपनी तृतीय स्थान तथा एकादश स्थान पर दृष्टि के कारण कान के रोग भी ला खड़े करेगा । छठे स्थान पर दृष्टि के कारण अन्तड़ियों को भी निर्बल बनाएगा ।

4. **ऋणकारक**--कर्ज अथवा ऋण भी हम दूसरों से, अन्यों से लेते हैं, अपनों से नहीं: क्योंकि अपने देकर लेते नहीं । अतः ऋण का सम्बन्ध भी छठे स्थान से है । जब लग्न, द्वितीय तथा द्वादश पाप प्रभाव में हों और षष्ठेश का सम्बन्ध दूसरे भाव तथा उसके स्वामी से हो तो मनुष्य की आय कम, व्यय ज्यादा होकर, ऋण की उत्पत्ति होती है ।

5. **विपरीत राजयोग**–राजयोग दो प्रकार का होता है––सामान्य राजयोग तथा विपरीत राजयोग। सामान्य राजयोग तब बनता है जब शुभ घरों के स्वामियों का परस्पर सम्बन्ध होता है और सम्बन्ध करने वाले ग्रह बलवान होते हैं। परन्तु विपरीत राजयोग, इसके विरुद्ध, तब बनता है जब अशुभ घरों के स्वामियों का परस्पर सम्बन्ध होता है और सम्बन्ध करने वाले ग्रह निर्बल होते हैं। विपरीत राजयोग का फल अतीव शुभ माना जाता है; कारण कि कुण्डली में दो प्रकार के घरों का अस्तित्व है–एक भावात्मक; दूसरा अभावात्मक (Negative)। जब अभावात्मक घर निर्बल हो तो अभाव का नाश होता है अर्थात् ऋण, दरिद्रता, अल्पता का नाश होता है; जिसका अर्थ यह है कि मनुष्य सम्पन्न, श्रीमान् तथा सब सुख-सामग्री से युक्त होता है। परन्तु भावात्मक शुभता बनी रहती है। अतः विपरीत राजयोग वाला सामान्य योग वाले की अपेक्षा अधिक धनी तथा सुखी होगा। उदाहरणार्थ कर्क लग्न, बुध पंचम स्थान में तथा शनि अष्टम में हो तो बुध विपरीत राजयोग बनाता है; क्योंकि बुध तृतीय भाव से तृतीय भाव तथा द्वादश भाव, दोनों अशुभ भावों को निर्बल बनाता है। पुनः उस पर अष्टमाधिपति शनि की दृष्टि उसको और अधिक निर्बल करती है। फल यह होता है कि द्वादश तथा तृतीय भावों की अनिष्टता नष्ट होकर महान धन की प्राप्ति होती है। इसी प्रकार यदि मेष लग्न हो और बुध अष्टम भाव में हो तथा शनि द्वारा दृष्ट हो तो भी विपरीत राजयोग बनता है; क्योंकि दो अशुभ स्थानों का स्वामी बुध नाश स्थान में पापी शनि द्वारा दृष्ट होने पर उन अशुभ स्थानों की अशुभता का नाश करता हुआ महान् सुख तथा धन की सृष्टि करता है। परन्तु दोनों उदाहरणों में बुध पर शुभ प्रभाव नहीं होना चाहिए।

6. **मामा के सम्बन्ध में**–छठा स्थान चतुर्थ से तृतीय होने के कारण माता के छोटे भाई का स्थान बनता है। अतः मामा का विचार छठे भाव तथा मामा के कारक बुध ग्रह द्वारा करना चाहिए।

7. **चोरी का योग**–मिथुन लग्न वालों के लिए तो मंगल और भी अधिक चोर का प्रतिनिधि हो जाता है। एक तो मंगल स्वयं चोर कारक है; दूसरे, यह लग्न से चौर्य स्थान (छठे भाव) का स्वामी बन जाता है।

तीसरे, यह एक अन्य चौर्य स्थान अर्थात् एकादश स्थान का भी स्वामी बन जाता है (एकादश भाव छठे से छठा होने के कारण, 'भावात् भावम्' के सिद्धान्तानुसार छठे जैसा कार्य करता है) । अतः मिथुन लग्न की कुण्डली में मंगल यदि तुला राशि में स्थित हो अर्थात् पंचम भाव में स्थित हो तो मनुष्य का धन चोरों द्वारा नष्ट होता है । तुला में स्थित मंगल पंचम, भाव नवमात् नवम भाव अर्थात् भाग्य की हानि करेगा । देवकेरलकार ने कहा भी है–

स्वोच्चांशे तौलिगे भौमे चोरद्रेष्काणसंयुते ।

लग्ने च मिथुने जातः चौरापहृतवित्तमान् । ।

अर्थात् मंगल तुला राशि में अपने उच्च अंश में तथा चोर द्रेष्काण में स्थित होकर मिथुन लग्न में उत्पन्न हुए लोगों का चोरों द्वारा धन अपहरण करवाता है ।

8. **हिंसात्मक वृत्ति**–मिथुन राशि में लग्न में मंगल हो और बुध पर शुभ प्रभाव न हो तो मनुष्य हिंसात्मक (Lover of violence) होता है: कारण कि लग्न तथा चतुर्थ, स्वभाव द्योतक घरों पर मंगल का प्रभाव पड़ता है और वह मंगल न केवल स्वयं निसर्गतः हिंसाप्रिय है बल्कि षष्ठेश तथा छठे से छठे घर का स्वामी होने से और भी अधिक हिंसात्मक वृत्ति का प्रतीक बन जाता है । यह वृत्ति और भी हिंसात्मक हो जाएगी यदि केतु छठे स्थान में स्थित हो, क्योंकि केतु भी मंगल ही का प्रभाव रखता है ।

9. **विरोध किससे**–यदि छठे स्थान में कोई शुभ ग्रह स्वक्षेत्री होकर पड़ा हो और उसके साथ केतु भी हो तो उसके शत्रु महान होते हैं । जिस ग्रह का ऐसे स्वक्षेत्री ग्रह पर प्रभाव पड़ता हो उसके सम्बन्ध में शत्रुता खड़ी होती है । उदाहरणार्थ, जवाहरलाल नेहरू की कुण्डली में गुरु धनु राशि में केतु के साथ छठे घर में है । अतः उसकी शत्रु ब्रिटिश सरकार जैसी महान् शक्ति रही । ब्रिटिश सरकार को जतलाने वाला मंगल है जो तृतीय स्थान में स्थित होकर स्वक्षेत्री गुरु पर अपना प्रभाव दृष्टि द्वारा डाल रहा है । मुल्की ज्योतिष (Mundane Astrology) में मंगल ग्रेट ब्रिटेन का प्रतिनिधि है । यदि

छठे स्थान पर केवल शुभ ही शुभ प्रभाव हो, पापी प्रभाव न हो, विशेषतया शुभ लग्नेश का प्रभाव हो तो मनुष्य अपने शत्रुओं से भी प्रीति करने वाला होता है।

10. **काल पुरुष और छठा घर**–छठे भाव तथा उसके स्वामी की स्थिति का कन्या राशि और उसके स्वामी बुध के साथ अध्ययन करें। यदि अंगों पर पाप प्रभाव हो तो मनुष्य का छठा अंग अर्थात् अन्तड़ियां (Intestines) निर्बल होती हैं और फलस्वरूप उसे कब्ज, पेचिश, हर्निया, गुरदे, का दर्द इत्यादि रोग होते हैं।

कु० सं० 19

इस व्यक्ति को हर्निया का रोग है। 6 संख्या के घर तथा उसके स्वामी पर शनि का पृथकताजनक प्रभाव है। छठी राशि सूर्य तथा शनि के मध्य में होने से पृथकताजनक प्रभाव में है। छठी राशि का स्वामी बुध पृथकताजनक सूर्य के साथ है। अतः 6 नम्बर अंग अर्थात् अन्तड़ियां अपने स्थान से पृथक होकर हर्निया की सृष्टि कर रही हैं।
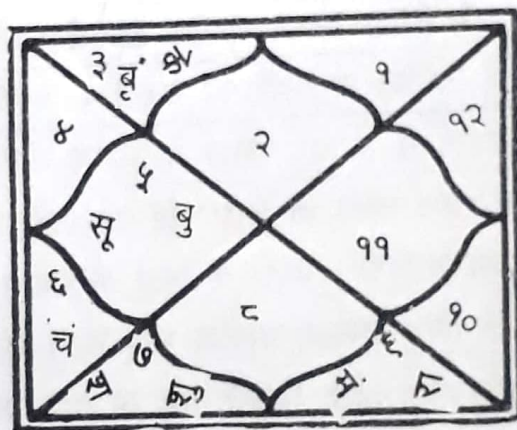
11. **महान् कष्ट का योग**–छठे भाव का स्वामी आठवें हो और निर्बल हो तो अपनी अन्तर्दशा में तथा ऐसे ग्रह की अन्तर्दशा में जो कि द्वितीय, सप्तम, द्वादश अष्टम आदि मारक भावों का स्वामी हो, मृत्यु तुल्य कष्ट देता है। यदि इसकी अन्तर्दशा मृत्यु खंड में आ जाए तो मृत्यु हो जाती है।

इसके अतिरिक्त छठी स्थिति कहीं भी अवांछनीय है; क्योंकि यह स्थिति शत्रुता, रोग, अड़चन आदि की द्योतक होती है, अर्थात् जब दशा का स्वामी ग्रह तथा अन्तर्दशा का स्वामी ग्रह कुण्डली में एक दूसरे से छठे-आठवें स्थित

हों तो वह दशा अन्तर्दशा मनुष्य को अपनी पदवी से हटा देती है अथवा उसका मरण कर देती ह ! भाव यह है कि अपमान तथा अवनति करने वाली होती है । उपर्युक्त स्थिति को षडष्टक कहते हैं ।

षष्ठ भाव में राशियां

1 मेष– मंगल लग्नेश अष्टमेश हो जाता है । इसका फल हम लग्न भाव में विविध राशियों का उल्लेख करते समय कर आये हैं । यदि शनि षष्ठ स्थान में हो तो मंगल में विशेष चोरी की आदत आ जाती है । मंगल का अध्ययन माता के छेटे भाई की आयु तथा मरण विधि का निर्णय करने में करना चाहिए । माता के भाई के स्थान में मेष राशि के पड़ने के कारण मामा के लिए उसका प्रत्येक भाव उसी संख्या का हो जाता है जिस संख्या की राशि है । अतः किसी ग्रह के पाप प्रभाव से पीड़ित होने की अवस्था में मामा के लिए वह ग्रह विशेष अंग को तथा उसमें कष्ट को दर्शाएगा ।

2. वृषभ– शुक्र छठे तथा एकादश भाव का स्वामी होता है । दोनों चोट के स्थान हैं । अतः शुक्र और मंगल इस लग्न में जिस भाव, भावेश को अपनी युति अथवा दृष्टि द्वारा प्रभावित करेंगे उसको चोट पहुंचाएंगे । जैसे मंगल तथा शुक्र मिलकर सप्तम स्थान में बैठे हों तो स्त्री के शरीर पर गिरने आदि से चोट पहुंचेगी । यदि मंगल तथा शुक्र दोनों अष्टम भाव में स्थित हों और अष्टमेश पर भी प्रभाव डालें तो व्यक्ति की मृत्यु आघात द्वारा होगी, इत्यादि । यदि शुक्र और शनि दोनों अपनी युति अथवा दृष्टि द्वारा किसी भाव, भावेश को प्रभावित करें तो उस भाव द्वारा प्रदर्शित अंग में रोग होगा । जैसे शुक्र तथा शनि पंचम भाव में हों तो पेट में निरन्तर रोग रहें । शुक्र बलवान् होने से माता की छोटी बहिनों की संख्या में वृद्धि होती है । परन्तु शुक्र का बलवान् होना धन के लिए विशेष अच्छा नहीं ।

3. **मिथुन**–बुध षष्ठेश तथा नवमेश बनता है। नवमेश होने से बुध शुभ ही माना जाएगा। यदि बुध बलवान हो तो मामाओं की संख्या में वृद्धि होती है। यदि बुध निर्बल हो तो शत्रुओं द्वारा भाग्य की हानि होती है। नौकरी से भी परेशानी होती है। यदि बुध तथा गुरु दोनों पर मंगल आदि का पाप प्रभाव हो तो बड़े भाई की आयु को स्वल्प करता है, क्योंकि षष्ठ भाव एकादश का आयु स्थान है तथा गुरु बड़े भाई का कारक है।

4. **कर्क**–षष्ठाधिपति चन्द्र यदि बलवान् हो तो माता की छोटी बहिनों की संख्या को बढ़ाता है। यदि निर्बल हो तो उस संख्या को कम करता है। निर्बल चन्द्र मामा की छाती में रोग उत्पन्न करता है, क्योंकि कर्क राशि छाती की प्रतिनिधि है। यदि चन्द्र बलवान् तथा शुभ दृष्ट हो तो शत्रुओं से भी सद्व्यवहार करने वाला होता है। यदि चन्द्र अष्टम भाव में हो तो बुरी चेष्टाओं में तथा गम्भीर कार्यों में लगा रहता है।

5. **सिंह**–सूर्य षष्ठेश यदि बलवान् हो तो मामा को उच्च पदवी दिलाता है, शत्रु बलवान् होते हैं। षष्ठाधिपति निर्बल होकर अष्टम, द्वादश आदि स्थानों में स्थित हो तो रोग देता है।

6. **कन्या**–बुध का सिंह राशि में अथवा वृश्चिक राशि में बैठकर, पापयुक्त, पापदृष्ट होना और शुभ दृष्टि से रहित होना विपरीत राजयोग को बनाता है जो कि लाखों रुपये देने वाला योग है। बुध निर्बल होने से मामा तथा छोटी बहिन के जीवन को हानि पहुंचाता है। बुध यदि द्वितीय भाव तथा धनेश से सम्बन्ध करे तो ऋणी बनाता है। बुध का निर्बल होना तथा छठे भाव का पापी ग्रहों द्वारा प्रभावित होना अन्तड़ियों तथा पेट में टाइफाइड एपेन्डीसाइटिस, हर्निया आदि रोगों को उत्पन्न करता है।

7. **तुला**–यदि शुक्र बलवान् हो तो मामा को लाभ पहुंचाता है अन्यथा हानि। शुक्र को प्रभावित करने वाले ग्रहों से मामा की मृत्यु के कारण का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। यदि शुक्र बलवान् हो तो माता की छोटी बहिनों की संख्या अधिक होगी अन्यथा कम। शुक्र शुभ दृष्ट हो तो शत्रु से भी सद्व्यवहार करने वाला होता है।

8. वृश्चिक—मंगल षष्ठाधिपति तथा एकादशाधिपति बन जाता है। एक तो मंगल हिंसाप्रिय है, फिर हिंसा स्थान (छठे) का स्वामी है, पुनश्च एकादश स्थान भी छठे से छठा होने के कारण हिंसात्मक ही है; अतः मंगल में बहुत हिंसा का समावेश हो जाता है। यदि केतु भी षष्ठ अथवा एकादश स्थान में पड़ा हो तो मंगल उग्रतम रूप में हिंसात्मक बन जाता है। स्पष्ट है कि जितना-जितना अधिक इस मंगल का प्रभाव लग्नादि पर पड़ेगा, मनुष्य उतना-उतना अधिक हिंसाप्रिय होता चला जाएगा। यदि ऐसा मंगल लग्न में (मिथुन राशि में) हो और चन्द्र पर मंगल की दृष्टि हो तो मनुष्य घातक (Murderer), लुटेरा आदि होता है।

9. धनु—गुरु नवमेश होने के कारण अन्ततोगत्वा शुभ ही रहता है, यद्यपि कोई विशेष शुभदायक नहीं होता। बलवान् गुरु मामाओं की संख्या को बढ़ाता है, यदि गुरु निर्बल हो तो भाग्य में हानि किसी ब्राह्मण शत्रु द्वारा होती है।

10. मकर—मामा कर्कश वाणी बोलता है, क्योंकि शनि वाणी के भावों का स्वामी है। शनि का बलवान होना धन के लिए अच्छा नहीं है। शनि अष्टम में अथवा द्वितीय में बहुत कष्टप्रद होता है। यदि शनि बलवान् हो तो मामा की छोटी बहिनों की संख्या अधिक होती है।

11. कुम्भ—यदि राहु भी छठे स्थान में हो तो शनि मनुष्य को दीर्घ रोगी बना देता है, विशेषतया यदि बुध भी निर्बल हो। ऐसी स्थिति में रोग प्रायः प्रिया के शाप का फल होता है जब कि उसका प्रेम ठुकराया जाए। पंचम प्रिया का स्थान है, अतः षष्ठेश शनि प्रिया का शाप है।

12. मीन—गुरु का निर्बल होना अभीष्ट है, क्योंकि गुरु दो अशुभ भावों—तृतीय तथा षष्ठ का स्वामी होता है। बलवान् गुरु छोटे भाई तथा मामा को सुख देता है, परन्तु धनाधिपति लाभाधिपति से सम्बन्ध करने पर धन में कमी तथा ऋण की उत्पत्ति करता है।

9. सप्तम भाव

वैवाहिक सुख: बड़े घर से शादी: बहु विवाह:
विवाह और उसका समय: प्रेम विवाह: तलाक

1. **कामातुरता**—यदि सप्तम स्थान तथा उसके स्वामी के साथ तथा शुक्र के साथ मंगल स्थित हो अथवा मंगल की दृष्टि हो तो मनुष्य कामातुर होता है। सप्तमाधिपति का द्वादशाधिपति से व्यत्यय (Exchange) भी मनुष्य को कामातुर (Sex ridden) बनाता है, क्योंकि दोनों स्थान कामतृप्ति के हैं और सादृश्य के सिद्धान्तानुसार काम की अधिक सृष्टि होती है।

2. **देवकेरलकार** का मत है कि सप्तम भाव का स्वामी यदि द्वादश स्थान में स्थित हो तो मनुष्य गुप्त रूप से कामातुर (Sex ridden) होता है और अपनी स्त्री से निषिद्ध दिन तथा समय में भी अतीव कामुक होता है। उदाहरणार्थ वृश्चिक लग्न वालों का व्यय स्थान में स्वक्षेत्री शुक्र ऐसा योग बनाता है। इसी प्रकार शुक्र यदि सप्तम भाव में भी वृषभ राशि में स्वक्षेत्री हो तो वही कामातुरता देता है: क्योंकि भोग स्थानाधिपति की काम स्थान में स्थिति होती है।

हमारा अनुभव यह है कि यदि ऐसे योग में पंचमाधिपति भी सम्मिलित हो जाए तो और अधिक कामातुर बना देता है।

3. प्रेम विवाह–जिस व्यक्ति की कुण्डली में सप्तमेश का व्यत्यय पंचमेश से होता है उसका विवाह प्रेम विवाह (Love-marriage) होता है क्योंकि पंचम भाव प्रियतमा का है और सप्तम विवाह का।

4. विवाह कब–सामान्यतया विवाह का समय सप्तमाधिपति की प्रकृति पर निर्भर करता है। बुध सप्तमाधिपति हो तो विवाह 16 वर्ष की आयु में हो जाता है। मंगल सप्तमेश हो तो 18 वर्ष की आयु में, शुक्र हो तो 20, चन्द्र हो तो 22. गुरु हो तो 24. सूर्य हो तो 26. और शनि हो तो 28 वर्ष की आयु में हो जाता है। अतः जिन पुरुषों की लग्न धनु अथवा मीन हो उनका विवाह प्रायः शीघ्र हो जाता है। यह नियम साधारण है और पुरुष की कुण्डली पर लागू होता है। स्त्री की कुण्डली में विवाह का समय दो वर्ष पूर्व अर्थात् निम्नलिखित वर्षों में होता है–बुध 14. मंगल 16, शुक्र 18. चन्द्र 20. गुरु 22. सूर्य 24. शनि 26. परन्तु कुण्डली चाहे स्त्री की हो चाहे पुरुष की उपर्युक्त वर्ष समीकृत (Average) वर्षों से भी कम उम्र में हो जायेगा। शुभ ग्रह का योग हो तो विवाह दो वर्ष समीकृत वर्षों से पूर्व हो जाता है। शुभ ग्रह की दृष्टि विवाह की अविध को 4 वर्ष शीघ्र कर देती है। इसी प्रकार पापी ग्रह का योग विवाह में दो वर्ष का और पापी ग्रह की दृष्टि 4 वर्ष का विलम्ब कर देती है। इस प्रकार सप्तम भाव, सप्तमेश तथा शुक्र पर (पुरुष कुण्डली में) और सप्तम भाव, सप्तमेश तथा गुरु पर (स्त्री कुण्डली में) शुभ-अशुभ प्रभाव के निरीक्षण से विवाह का वर्ष निकालना चाहिए। विंशोत्तरी दशा पद्धति में जो दशा, अन्तर्दशा इस वर्ष के समीप उपयुक्त हो उसमें विवाह की अवधि का अन्तिम निश्चय करना चाहिए।

उपर्युक्त विवरण में ग्रहों की वर्ष संख्या उनकी नैसर्गिक आयु को ध्यान में रखकर दी गई है। बुध कुमार है, अतः उसको सबसे थोड़े वर्ष, शनि अतिवृद्ध है, अतः उसे सबसे अधिक वर्ष दिए गये हैं ; जैसा कि होराशतक में लिखा है–

सोमात्मजो भौमो भृगुश्च सोमो,
देवेन्द्रपूज्योर्कः तथा च मन्दः ।
क्रमेण कालस्य दिशन्ति मात्राम्,
सौम्यस्तु स्वल्पो मंदस्तु दीर्घः ।

अर्थात् बुध, मंगल, शुक्र, चन्द्र, गुरु, सूर्य तथा शनि क्रमशः काल की मात्रा को जतलाते हैं । बुध सबसे थोड़ी मात्रा और शनि सबसे अधिक मात्रा । बुध का तो नाम ही कुमार है, अतः कुमार अवस्था से इसका विशेष सम्बन्ध है और यह ग्रह शीघ्र कार्य करने वाला है । इसीलिए संभवतया देवकेरलकार ने मीन लग्न के सम्बन्ध में लिखते हुए कहा है—

ग्रन्थान्तरे मीनलग्ने स्वक्षेत्रे सोमनन्दने ।
अतिबाल्ये विवाहः स्यात् सम्पद्दाये शुभे खगे ।।

अर्थात् एक अन्य ग्रन्थकार का कहना है कि यदि मीन लग्न में जन्म हो और बुध सप्तम भाव में स्वक्षेत्री होकर स्थित हो तो मनुष्य की अतीव बाल्यावस्था में, जबकि जन्म से दूसरी महादशा चल रही हो, विवाह हो जाता है । विवाह के शीघ्र होने का एक और भी योग है । वह है लग्नाधिपति तथा सप्तमाधिपति का युति अथवा दृष्टि द्वारा पारस्परिक घनिष्ठ सम्बन्ध । इस सन्दर्भ में सर्वार्थचिन्तामणिकार का कहना है कि जब सप्तम भावाधिपति तथा लग्नभावाधिपति एक साथ अंशों में समीपवर्ती हों तो बाल्यावस्था में विवाह होता है । हमारे अनुभव में यह बात आंशिक रूप से सत्य है: क्योंकि विवाह का शीघ्र अथवा विलम्ब से होना न केवल सप्तम भाव अथवा उसके स्वामी पर ही निर्भर करता है, अपितु सप्तम भाव के कारक (पुरुषों के लिए शुक्र, स्त्रियों के लिए गुरु) पर भी निर्भर है ।

5. कुज दोष और विवाह में विलम्ब—जब कुज अर्थात् मंगल लग्न में, लग्न से चतुर्थ, सप्तम, अष्टम अथवा द्वादश स्थानों में किसी स्थान में स्थित हो तो कुज दोष उत्पन्न करता है जो विवाह में विलम्ब करने के अतिरिक्त स्त्री अथवा पुरुष के जीवन साथी (Partner of life) की आयु क्षीण करने वाला भी होता है ।

इसका कारण यह है कि जब मंगल उपर्युक्त पांच स्थानों में से किसी भी स्थान में स्थित होगा तो सप्तम भाव पर अथवा उनकी आयु पर प्रभाव डालेगा। लग्न में मंगल सप्तम को देखता है: चतुर्थ में स्थित भी सप्तम को देखता है। सप्तम में स्थित सप्तम को तो प्रभावित करेगा ही। अष्टम में स्थित द्वितीय भाव को देखता है जो कि सप्तम भाव का आयु स्थान है और द्वादश भाव में स्थित सप्तम को पुनः देखता है। परन्तु स्मरण रहे कि कभी ऐसा भी हो सकता है कि मंगल कुज दोष उत्पन्न कर रहा हो और फिर भी जीवन साथी की आयु दीर्घ हो, कारण यह है कि जीवन साथी (Life partner) की आयु की मात्रा केवल मंगल की दृष्टि पर ही निर्भर नहीं करती, बल्कि सप्तम भाव की प्रबलता अथवा निर्बलता, सप्तमेश की प्रबलता अथवा निर्बलता तथा सप्तम कारक (पुरुषों के लिए शुक्र, स्त्रियों के लिए गुरु) पर भी निर्भर करती है। इन सब अंगों को हिसाब में लेकर जीवन साथी की आयु का अन्तिम निश्चय करना चाहिए।

6. **बड़े घर की स्त्री**—जब सप्तमेश एक महान ग्रह हो और अन्य महान अथवा मूल्यप्रद ग्रहों द्वारा युक्त अथवा दृष्ट हो तो मनुष्य का विवाह राजघराने अथवा ऊंचे घराने में होता है। जैसे कुम्भ लग्न हो और सूर्य पर चन्द्र तथा गुरु की दृष्टि हो तो मनुष्य का विवाह किसी राजा अथवा नवाब की लड़की से होता है: कारण यह है कि (1) सूर्य स्वयं ग्रहों का राजा है। अतः सप्तमेश होने से स्त्री का सम्बन्ध ऊंचे घराने से करवाता है। (2)चन्द्र ग्रह सूर्य से दूसरे दर्जे पर है, अर्थात् यह महान् ग्रह है। पुनः गुरु न केवल स्वयं मूल्यकारक है, अपितु धनेश है और आय भाव का स्वामी होने के कारण बहुत मूल्यप्रद है। अतः अपनी दृष्टि आदि से गुरु तथा चन्द्र

कु० सं० 20

सूर्य को और भी मूल्यवान, धनी राजघराने से सम्बद्ध बना देता है।

7. तलाक अथवा स्त्री त्याग और उसका समय—जब सूर्य, शनि, राहु अथवा द्वादशेश में से दो अथवा दो से अधिक ग्रहों का प्रभाव स्त्री सम्बन्धी अथवा पुरुष सम्बन्धी सप्तम भाव, उसके स्वामी तथा उसके कारक पर पड़ता है तो इस कार्य की प्रकृति पृथकताजनक (Separative) होने के कारण मनुष्य अपने जीवन साथी (Partner in life) से पृथक हो जाता है। इसी पृथकता का एक रूप तलाक है। यह पृथकता विवाहित जीवन के आरम्भ ही में हो जाती है यदि (i) सप्तम भाव का स्वामी बुध हो; क्योंकि बुध कुमार है और अपनी अवधि के प्रारम्भ में ही फल दे देता है।

(ii) सप्तम भाव पर उपर्युक्त पृथकताजनक प्रभाव की मात्रा बहुत अधिक हो, अर्थात् तीन अथवा चार प्रभाव पड़ रहे हों और वे प्रभाव तीनों ही अंगों अर्थात् सप्तम भाव, सप्तमेश, सप्तमकारक (पुरुषों के लिए शुक्र, स्त्रियों के लिए गुरु) पर हों।
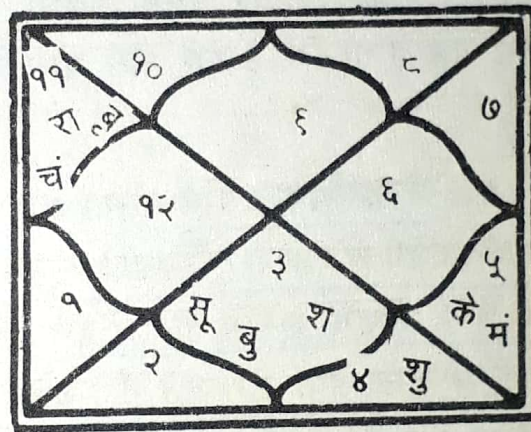
कु० सं० 21

8. स्त्री पक्ष से धन—यदि सप्तमेश तथा शुक्र लग्न, पंचम, नवम अथवा एकादश भाव में इकट्ठे हों तो मनुष्य को विवाह के फलस्वरूप स्त्री पक्ष से अच्छे धन की प्राप्ति होती है।

9. पत्नी का सुन्दर होना—उस पुरुष को सुन्दर पत्नी प्राप्त होती है जिसके सप्तम भाव में सम (Even) राशि हो, सप्तमेश भी सम राशि में हो और सप्तम का कारक शुक्र भी सम राशि में हो तथा सप्तमेश एवं अष्टमेश शुभ एवं बलवान् हों।

जब स्त्री की कुण्डली में उसके लग्न तथा चन्द्र लग्न सम (Even) राशि में होते हैं तथा शुभ दृष्ट हों तो वह स्त्री सुन्दर भी होती है और अच्छे स्वभाव वाली, धनी और गुणवती भी।

10. बहु विवाह–यदि राहु, द्वादशेश तथा पंचमेश का छठे भाव तथा उसके स्वामी से सम्बन्ध हो; चाहे वह सम्बन्ध दृष्टि द्वारा हो अथवा युति द्वारा और सप्तमेश बलवान् होकर लाभादि भावों में हो तो मनुष्य की एक साथ कई स्त्रियां होती हैं। कारण कि स्त्री भाव को लग्न मानने से द्वादशेश और पंचमेश सप्तम भाव से क्रमशः षष्ठेश तथा एकादशेश बन जायेंगे। अतः षष्ठेश तथा एकादशेश तथा राहु तीन म्लेच्छ तथा अन्यत्व द्योतक ग्रहों का प्रभाव स्त्री के द्वादश पर पड़ेगा। स्त्री के शैया सुखों का पंचम में आने का अर्थ यह होगा कि इसके भोग योग में अन्य स्त्रियां भागीदार हो रही हैं।

11. केन्द्राधिपत्यदोष-कन्या और मीन लग्न वालों के गुरु तथा बुध क्रमशः केन्द्राधिपत्य दोष से दूषित होते हैं; क्योंकि ये ग्रह तथा शुक्र निर्बल होकर द्वितीय, षष्ठ, सप्तम, अष्टम, द्वादश इन अनिष्ट भावों में स्थित हों तो अपनी अन्तर्दशा में कष्ट तथा रोग देते हैं। यही बात मिथुन तथा धनु लग्न वालों के गुरु तथा बुध पर भी लागू होती है।

12. मारकेश–सातवें भाव का स्वामी यदि निर्बल होकर, द्वितीय, षष्ठ, अष्टम, द्वादश भावों में हो तो मारकेश होता है, क्योंकि अष्टम स्थान आयु का है और अष्टम का व्यय अर्थात् सप्तम आयु के व्यय अर्थात् मृत्यु को दर्शाता है।

सप्तम भाव में राशियां

1. मेष–मंगल सप्तमेश तथा द्वितीयेश बनता है। यदि वह बलवान् हुआ तो स्त्री अथवा पति की आयु दीर्घ और यदि निर्बल हुआ तो स्त्री अथवा पति की आयु अल्प होती है। सप्तम भाव में मेष राशि होने से पहली राशि

पहले भाव में, दूसरी दूसरे भाव में, इसी प्रकार राशि की संख्या और भाव की संख्या एक हो जाती है । अतः यदि कोई ग्रह अतीव निर्बल अथवा पापयुक्त, पापदृष्ट होता है तो उस भाव संख्या द्वारा प्रदिष्ट अंग में स्त्री अथवा पति को कष्ट होगा । लग्न के लिए मंगल दुगुना मारकेश होता है: क्योंकि यह द्वितीय तथा सप्तम भावों का स्वामी है और दोनों स्थान मारक स्थान कहलाते हैं ।

2. **वृषभ**--यदि शुक्र बलवान हो तो स्त्री की आयु दीर्घ होती है । शुक्र यदि पंचम भाव, सप्तम भाव अथवा द्वादश भाव में पड़ जावे तो अतीव विषयी होता है: क्योंकि ऐसी स्थिति में भोग तथा काम-वासना के भावों का परस्पर सम्बन्ध हो जाता है और यह सम्बन्ध कामातुरता को बहुत बढ़ाता है । ऐसे व्यक्ति का व्यय अधिकतर स्त्री पर होता है । यदि सप्तमस्थ शुक्र पर तृतीय भाव में स्थित राहु तथा मकर के स्वामी शनि की दृष्टि हो तो वह व्यक्ति विवाहित होकर भी दूसरी स्त्रियों से सम्बन्ध रखने वाला होता है: क्योंकि राहु में अन्यत्व है और शनि अन्य स्त्री है और शुक्र स्त्री भाव का स्वामी तथा कारक होने से स्त्री का पूरा प्रतिनिधित्व करता है ।

3. **मिथुन**--यदि स्त्री की कुण्डली में मिथुन राशि सप्तम भाव में पड़ जावे और गुरु तथा बुध पर सूर्य, शनि, राहु आदि का प्रभाव हो तो स्त्री शीघ्र ही पति से पृथक हो जाती है, क्योंकि बुध सप्तमाधिपति विवाहित जीवन का प्रतिनिधि है । कुमार होने से अच्छे-बुरे फल को विवाहित जीवन के प्रारम्भ में ही दिखला देता है । गुरु स्त्रियों के लिए पति ग्रह है ही । अतः सूर्य आदि पृथकताजनक ग्रहों का व्यापक प्रभाव तलाक पृथकता आदि को ला खड़ा करता है । सप्तम भाव में मिथुन वाले पुरुष प्रायः शीघ्र ही विवाह कर लेते हैं: क्योंकि बुध शीघ्र फल देने वाला ग्रह है । हां, यदि बुध पापी प्रभाव में हो और शुक्र तथा गुरु (स्त्री कुण्डली में) भी पाप प्रभाव में हों तो विवाह में विलम्ब हो जाता है । सप्तम भाव पिता की माता का आयु स्थान है, अतः यह भाव तथा बुध यदि निर्बल हों तो पिता की माता का सुख नहीं होता ।

4. **कर्क**—चन्द्र यदि बलवान होकर सम राशि में हो तथा शुक्र भी सम राशि में हो तो स्त्री सुन्दर होती है। चन्द्र यदि सूर्य से दूर शुभयुक्त शुभदृष्ट हो तो स्त्री की आयु को दीर्घ करता है। चन्द्र यदि द्वादश भाव में हो तो विलासी, भोगप्रिय, कामातुर होता है।

5. **सिंह**—सूर्य सप्तमेश होने से स्त्री साहसी, मनस्विनी होती है। यदि सूर्य निर्बल हो तो स्त्री अल्पायु होती है; परन्तु शुक्र का विचार भी साथ ही कर लेना चाहिए। सूर्य यदि चन्द्र, गुरु से दृष्ट हो तो स्त्री बहुत बड़े घर से आती है। सूर्य बलवान हो तो राज्य कृपा प्राप्त कराता है; क्योंकि सप्तम भाव दशम से दशम है।

6. **कन्या**—बुध यदि सूर्यादि पृथकताजनक ग्रहों के प्रभाव में हो और शुक्र पर भी यह प्रभाव हो तो पति-पत्नी एक-दूसरे से पृथक हो जाते हैं। क्योंकि बुध शीघ्र फल देता है, बुध बलवान हो तो स्त्री गुणवती और मान प्राप्त करने वाली होती है, पुरुष भी बुद्धिमान तथा ज्ञानप्रिय होता है, क्योंकि बुध चतुर्थ तथा चतुर्थ से चतुर्थ का स्वामी बनता है और चतुर्थ भाव मन होता है।

7. **तुला**—शुक्र सप्तमेश तथा सप्तम कारक (स्त्री), दोनों होता है। अतः शुक्र तथा सप्तम भाव पर शुभ अथवा अशुभ प्रभाव विशेष फलदायक तथा निश्चयात्मक होता है। शुक्र यदि निर्बल हो तो स्त्री की मृत्यु शीघ्र हो जाती है, क्योंकि निर्बलता स्त्री के लग्न तथा अष्टम दोनों आयु भावों पर अपना प्रभाव करेगी। शुक्र यदि पंचम अथवा द्वादश में स्थित हो तो बहुत कामवासना से युक्त तथा स्त्री-लोलुप होता है। स्त्री की कुण्डली हो और शनि तथा शुक्र बलवान हों [illegible] पति बहुत भाग्यशाली होता है।

8. **वृश्चिक**—मंगल यदि बलवान हो तो पति अथवा पत्नी की दीर्घ आयु होती है। पाप प्रभाव में आया हुआ मंगल स्त्री पर व्यय करवाता है। मंगल शुक्र का साथ लेकर यदि द्वादश, पंचम अथवा सप्तम भाव में स्थित हो तो मनुष्य स्त्री-लोलुप और कामातुर होता है।

स्त्री की कुण्डली हो और शनि तथा मंगल दोनों अपनी दृष्टि द्वारा शुक्र तथा लग्न दोनों को पीड़ित कर रहे हों तो स्त्री का पति पत्नी के प्रति दुर्व्यवहार तथा क्रूरता करने वाला होता है, क्योंकि शनि तथा मंगल पति के लग्नेश तथा तृतीयेश होने के कारण पति के क्रियात्मक निजत्व (Deliberate self) का प्रतिनिधित्व करते हैं और उस निज (Self) का क्रियात्मक प्रभाव स्त्री पर (लग्न लग्नेश के प्रभावित होने से) पड़ता है।

9. धनु–स्त्री की कुण्डली में गुरु, जो पति कारक है, स्वयं पति भाव का स्वामी भी बन जाता है। स्पष्ट है कि गुरु पर पड़ा हुआ प्रभाव पति के लिए जितना धनु राशि के सप्तम में रहते होगा उतना गुरु को छोड़कर दूसरे किसी ग्रह की राशि रहते न होगा। गुरु यदि बलवान हो तो स्त्री को पति का बहुत अधिक सुख प्राप्त होता है और पुरुष की कुण्डली में स्त्री की आयु दीर्घ होती है। गुरु यदि निर्बल हो तो केन्द्राधिपत्य दोष होता है जो गुरु की भुक्ति के समय रोग द्वारा कष्ट देता है। गुरु यदि बलवान हो तो पुरुष की कुण्डली में महान् राज्य-कृपा अथवा राज्य की प्राप्ति होती है, क्योंकि गुरु दशम तथा दशम से दशम (सप्तम) भाव का स्वामी होने के अतिरिक्त 'राज्य-कृपाकारक' भी है।

10. मकर–शनि सप्तमेश, अष्टमेश होता है, अतः स्त्री प्रायः कर्कश बोलने वाली होती है और क्रोधयुक्त होती है, क्यों कि स्त्री का लग्नेश (दिमाग) शनि और चतुर्थेश (मन) मंगल बन जाता है। सप्तमेश शनि होने से स्त्री खूब सेवाप्रिय होती है। बहुत ऊंचे धनाढ्य परिवार से सम्बन्ध नहीं रखती; विशेषतया तब जब शनि पर चन्द्र, गुरु आदि का प्रभाव न हो। शनि बलवान् हो तो स्त्री की आयु दीर्घ हो जाती है, क्योंकि शनि स्त्री का लग्नेश तथा आयुष्कारक होता है। शुक्र द्वादश भाव में स्थित हो तो स्त्री का सुख बहुत अच्छा रहता है चाहे लग्न में मंगल क्यों न हो। शनि की भुक्ति अच्छा फल नहीं करती, विशेषतया शुक्र दशा में, क्योंकि दोनों लग्न के शत्रु हैं।

11. **कुम्भ**--शनि षष्ठेश तथा सप्तमेश बनता है । सिंह लग्न के लिए अशुभ है । शनि की भुक्ति शुक्र की दशा में धन, स्वास्थ्य आदि का नाश करती है; क्योंकि शुक्र तथा शनि दोनों लग्न के शत्रु हैं । स्त्री प्रायः पुरुष के परिवार से कम दरजे के परिवार से आती है; विशेषतया तब जबकि शनि पर गुरु तथा चन्द्र आदि महान् ग्रहों का प्रभाव न हो ।

12. **मीन**--स्त्री की कुण्डली में गुरु विशेष विचारणीय होता है, क्योंकि गुरु पर मंगल का प्रभाव पति का घातक तथा शनि, सूर्य, राहु आदि का प्रभाव पृथकता लाने वाला होता है । गुरु को केन्द्राधिपत्य दोष होता है, अतः निर्बल गुरु अष्टम, द्वादश, द्वितीय, षष्ठ आदि अशुभ भावों में स्थित हो तो अपनी भुक्ति में महान् रोग देता है । गुरु बलवान हो तो मनुष्य बहुत सुखी तथा धनी होता है और चतुर्थ से चतुर्थ का भी स्वामी बन जाता है ।

10. अष्टम भाव

आयु कितनी? मृत्यु कब और कैसे? विपरीत राजयोग से महाधन; विदेश यात्रा का योग; कर्कशा स्त्री; गम्भीर अन्वेषण आदि

1. **आयु का निर्णय**—आयु के सम्बन्ध में हमारा विचार है कि जितना अष्टमेश बलवान् होगा उतनी ही आयु अधिक होगी। हम फलदीपिका के इस श्लोकार्थ से सहमत नहीं हैं कि अष्टमेश यदि लग्नेश की अपेक्षा निर्बल हो और केन्द्र के अतिरिक्त अन्य किसी स्थान में स्थित हो तो मनुष्य को दीर्घ आयु मिलती है।

केन्द्रादन्यत्र रन्ध्रेशे लग्नेशाद् दुर्बलः सति।
नाधिर्न विघ्नो न क्लेशो नृणां आयुश्चिरं भवेत्।।

हमारा निवेदन है कि द्वितीय तथा सप्तम स्थान के मारक होने का निश्चय ही इस आधार पर किया गया है कि तृतीय और अष्टम स्थान जिनसे कि द्वितीय और अष्टम द्वादश स्थान बनते हैं, आयु स्थान हैं। अतः आयु का दुर्बल होना दीर्घायु कैसे दे सकता है ?

2. **आयु कितनी होगी ?** यह देखने के लिए निम्नलिखित अंगों को देखना आवश्यक है—(i) लग्न, लग्नाधिपति का बल, (ii) अष्टम, अष्टमाधिपति का बल, (iii) आयुष्कारक शनि का बल, (iv) अष्टमात् अष्टम अर्थात् तृतीय भाव तथा उसके स्वामी का बल।

यदि दो अंग बलवान् हों तो आयु का खण्ड अल्प अर्थात् 32 वर्ष तक होता है। यदि तीन अंग बलवान हों तो आयु का खण्ड मध्यम अर्थात् 64 तक और यदि चारों अंग बलवान् हों तो आयु का खण्ड दीर्घ अर्थात् 64 से ऊपर की आयु होती है। परन्तु आयु के विचार में इतना ध्यान कर लेना चाहिए कि चन्द्र तथा बुध अतीव निर्बल न हों, क्योंकि यदि ये दो ग्रह निर्बल हों तो बचपन में ही अरिष्ट हो जाता है और मनुष्य की मृत्यु की सम्भावना रहती है चाहे लग्नेश, शनि आदि अंग बलवान् ही क्यों न हों। जिस खण्ड में आयु पड़ती हो उस खण्ड में ग्रहों की मारकेश दशा का विचार करके आयु के वर्षों का अन्तिम निर्णय करना चाहिए। (देखिए कु० सं० 22)।

यह कुण्डली विश्व विख्यात नाटक लेखक जार्ज बर्नार्ड शा की है जिसको 90 वर्ष के लगभग आयु प्राप्त हुई। यहां लग्नाधिपति, चन्द्र लग्नाधिपति, सूर्यलग्नाधिपति तथा आयुष्य कारक शनि सभी इकट्ठे हैं और सब पर गुरु की केन्द्रीय दृष्टि का प्रभाव है।
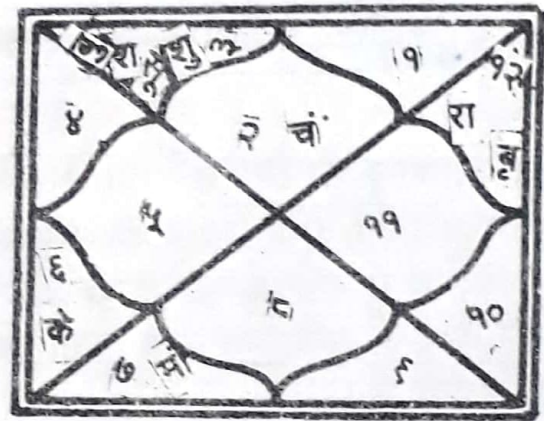
कु० सं० 22

6. **मरण विधि, आत्मघात आदि**—आयु का जो स्थान होता है वही मृत्यु का भी स्थान माना गया है। इसलिए लग्न, लग्नेश पर जिस प्रकार के ग्रहों का प्रभाव पड़ रहा हो उसी प्रकार की मृत्यु मनुष्य की होती है।

यदि लग्नाधिपति, तृतीयाधिपति एकादशाधिपति तथा सूर्य आदि निज (Self) द्योतक ग्रहों का प्रभाव अष्टम भाव तथा उसके स्वामी पर पड़ रहा हो तो मनुष्य आत्मघात (Suicide) कर लेता है, यदि षष्ठेश, एकादशेश तथा मंगल का प्रभाव अष्टम भाव तथा अष्टमाधिपति पर हो तो चोट अथवा प्रहार द्वारा मृत्यु होती है। (देखिए कु० सं० 23)।

यह कुण्डली नेताजी सुभाष चन्द्र बोस की है। शनि का प्रभाव अष्टम भाव, अष्टमेश तथा लग्नेश मंगल पर है। अतः शनि मृत्यु की विधि को बताने वाला है। वह शनि सूर्य, राहु तथा बुध अधिष्ठित दशमस्थ राशि मकर का स्वामी है। दशम भाव ऊंचाई का है।
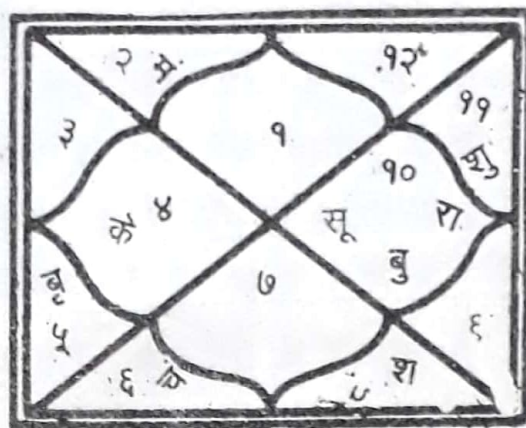
कु० सं० 23

सूर्य और राहु पृथक् करते हैं। अतः ऊंचे से गिरकर मृत्यु का योग है। राहु तथा बुध का सूर्य तथा दशम भाव से योग ग्रहों की इस युति को राज्यान्तर निश्चित करता है। अतः मृत्यु राज्यान्तर में हुई। सूर्य इस युति में मुख्य ग्रह है, अतः मृत्यु जापान में हुई क्योंकि सूर्य जापान का द्योतक है।

4. मारकेश ग्रह–अष्टमेश निर्बल होकर छठे, बारहवें, सातवें अथवा दूसरे स्थान में पड़ा हो तो अपनी दशा, अन्तर्दशा में महान् कष्ट देता है और यदि मृत्यु का खण्ड आ चुका हो तो मृत्यु भी दे देता है।

यहां हम उन मारकेशों अर्थात् मृत्यु देने वाले ग्रहों का क्रमानुसार उल्लेख करते हैं जिनका निर्णय पराशर महर्षि के सिद्धांतानुसार किया जाता है। प्रथम संख्या का ग्रह सबसे अधिक मारक है, ग्यारहवां सबसे कम। मृत्यु के खण्ड में ये सभी मृत्यु फल देते हैं, अन्यथा केवल शारीरिक कष्ट देते हैं। ये निम्नलिखित हैं:–

(1) द्वितीय भाव के स्वामी से युक्त पाप ग्रह (पाप ग्रह से तात्पर्य पाराशरीय पद्धति से निर्धारित पाप ग्रह जैसे एकादशेश आदि), (2) सप्तमेश से युक्त पाप ग्रह, (3) द्वितीय भाव में स्थित पाप ग्रह, (4) सप्तम भाव में स्थित पाप ग्रह, (5) द्वितीयेश, (6) सप्तमेश, (7) द्वादशेश, (8) द्वादशेश के साथ स्थित पाप ग्रह, (9) तृतीयेश, अष्टमेश, (10) षष्ठेश, एकादशेश, (11) पापी ग्रह।

5. विपरीत राजयोग तथा प्रचुर धन—यदि अष्टमेश तृतीय, द्वादश तथा षष्ठ स्थानों में पड़कर षष्ठ, द्वादश आदि भावों के पापी स्वामियों द्वारा युक्त अथवा दृष्ट हो और उस पर अन्य शुभ घरों के स्वामियों का किसी प्रकार का प्रभाव न पड़ रहा हो तो अष्टमेश अपनी दशा अन्तर्दशा में विपरीत राजयोग के फल को करता है। अर्थात् बहुत धन, सुख आदि देता है।

6. अष्टम में सूर्य तथा अन्य ग्रह—यदि सूर्य निर्बल होकर अष्टम भाव में स्थित हो और मंगल आदि द्वारा दृष्ट हो तो पिता की आंख के लिए बहुत हानिकारक हो जाता है। क्योंकि अष्टम स्थान एक तो वैसे ही अनिष्टकारक है, पुनः नवम से द्वादश अर्थात् पिता की आंख का स्थान भी बनता है।

7. अष्टम भाव में ग्रह—अष्टम में सूर्य यदि किसी ग्रह द्वारा भी दृष्ट अथवा प्रभावित न हो तो हड्डी के रोगों को उत्पन्न करता है। चन्द्र यदि इस स्थान में अदृष्ट अयुक्त हो तो रक्त विकार, टी० बी० आदि रोगों की सृष्टि करता है। मंगल यदि इस भाव में अयुक्त अदृष्ट हो तो सूखा (Atrophy of muscles) का रोग देता है। बुध यदि इस भाव में अदृष्ट अयुक्त हो तो दमा आदि रोगों को देता है। गुरु यदि अष्टम में अयुक्त अदृष्ट हो तो जिगर तिल्ली आदि रोगों को उत्पन्न करता है। शुक्र यदि अयुक्त अदृष्ट होकर इस भाव में स्थित हो तो वीर्य सम्बन्धी अनेक प्रकार के रोग होते हैं। शनि इस भाव में शत्रु राशि में अयुक्त अदृष्ट हो तो स्नायु के रोगों का देने वाला हो जाता है।
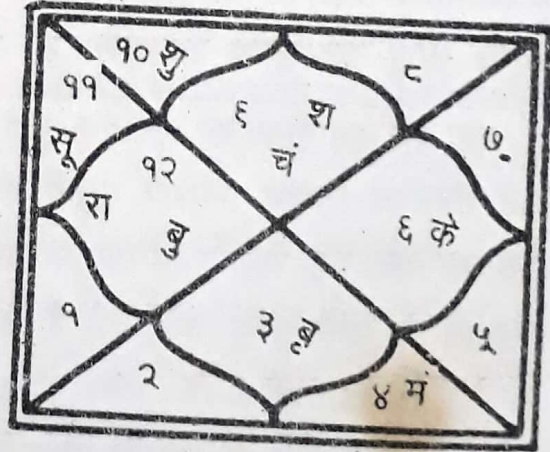
कु० सं० 24

इस व्यक्ति को पट्ठों के सूखे का रोग हुआ। पट्ठों का कारक मंगल नीच होकर अष्टम भाव में है और उस पर राहु की दृष्टि तो है पर किसी शुभ ग्रह की दृष्टि नहीं।

8. **कर्कशा स्त्री**–अष्टम स्थान स्त्री की वाणी का स्थान है। स्त्री की वाणी का विचार इस भाव से करना चाहिए। यदि इस भाव का स्वामी शुभ ग्रह सूर्य आदि हो तथा शुभ दृष्ट हो तो स्त्री मधुर भाषिणी होती है। यदि इस भाव का स्वामी शनि हो, शुभ दृष्ट न हो तो स्त्री कर्कश बोलने वाली होती है।

9. **विदेश यात्रा**– अष्टम स्थान "समुद्र" का है। समुद्र पार यात्रा विदेश यात्रा समझी गई है। जब अष्टम भाव तथा अष्टमाधिपति पर पाप ग्रहों का प्रभाव हो तब विदेश यात्रा का योग बनता है। सूर्य की अष्टम स्थिति के सम्बन्ध में सारावलीकार का कहना है कि "भ्रमयति देशात् देशम्" अर्थात् एक देश से दूसरे देश में भ्रमण करवाता है, जिससे पता चलता है कि विदेशों का भाव "अष्टम" है।

10. **गम्भीर अन्वेषण**–अष्टम स्थान गम्भीर अन्वेषण तथा जान जोखों में डालने वाला स्थान है। इस भाव का स्वामी तथा तृतीय भाव का स्वामी शुभ ग्रह होकर जब लग्न अथवा पंचम भाव में स्थित हो तो मनुष्य गम्भीर चिन्तक (Philosopher) होता है, खोज और अन्वेषण (Research) करने वाला होता है, क्योंकि बुद्धि स्थान का सम्बन्ध गम्भीर अन्वेषण (अष्टम स्थान) से होता है।

आविष्कार कर्त्ताओं का गणित का ज्ञान प्रायः पर्याप्त होता है। गणित एक गम्भीर तथा जटिल विषय है। संभवतया यही कारण है कि शनि जैसे गम्भीर ग्रह का अष्टम भाव से योग मनुष्य को गणितज्ञ बनाता है।

11. **अष्टम, अष्टमेश और नाश**–अष्टम भाव का नाश स्थान है। इसे निधन स्थान भी कह सकते हैं। जिस भाव का स्वामी इस भाव में आ जाता है उसके जीवन को हानि पहुंचती है। जैसे पंचमेश अष्टम में हो तो पुत्र उत्पन्न होकर मृत्यु को प्राप्त करता है। इसी प्रकार एकादशेश गुरु अष्टम में हो और बड़ा भाई उत्पन्न हो तो वह मृत्यु को प्राप्त होता है।

अष्टमेश भी जिस भाव में जाकर स्थित होता है उस भाव के जीवन को हानि पहुंचाता है। जैसे पंचम में हो तो पुत्र को और एकादश में हो तो बड़े भाई के जीवन को हानि पहुंचती है।

अष्टम भाव की कल्पना भी नाश की भावना से खाली नहीं है। जिस भाव का स्वामी अपने स्थान से अष्टम में स्थित होता है उस भाव के जीवन को हानि पहुंचती है। जैसे कुम्भ लग्न हो और मंगल दशम स्थान में वृश्चिक राशि का होकर स्थित हो तो मंगल के प्रमुख केन्द्र स्थान में स्थित होने के कारण छोटे भाई का जन्म तो अवश्य होता है; परन्तु चूंकि दशम स्थान तृतीय स्थान से अष्टम है, अतः वह छोटा भाई दीर्घजीवी नहीं होता।

अष्टम भाव में राशियां

1. **मेष**—मंगल अष्टमाधिपति तथा तृतीयाधिपति बनता है। दोनों आयु के स्थान हैं, अतः यदि मंगल बलवान् हो तो आयु दीर्घ होती है; मंगल पर तथा अष्टम भाव पर पड़ा हुआ प्रभाव मृत्यु के कारणों को बतलाता है। मंगल दशम भाव में हो तो व्यसन कार्य, विशेषतया यौवन काल में करता है।

2. **वृषभ**—शुक्र अष्टमाधिपति लग्नाधिपति होता है; अतः यदि बलवान् हो तो दीर्घायु देता है; यदि निर्बल हो तो अल्प आयु होती है; शुक्र तथा अष्टम भाव पर पड़ा हुआ प्रभाव मृत्यु के कारण को बतलाने वाला होता है। शुक्र की भुक्ति बुरा फल नहीं करती; क्योंकि शुक्र लग्नाधिपति भी होता है।

3. **मिथुन**—बुध यदि बहुत निर्बल हो तो कुमार अवस्था अथवा इससे पूर्व भी मृत्यु कर देता है, क्योंकि बुध शीघ्र फल देता है। निर्बल बुध शीघ्र ही विदेश यात्रा दिलवाता है। मेष का बुध षष्ठ स्थान में पापदृष्ट, पापयुक्त

हो और किसी शुभ ग्रह से युक्त अथवा दृष्ट न हो तो बहुत रोग तथा कष्ट देता है। परन्तु यही योग विपरीत राजयोग भी बनाता है जिससे मनुष्य लाखों रुपयों का स्वामी बनता है।

4. **कर्क**—चन्द्र अष्टमाधिपति बन जाता है। चन्द्र को अष्टमाधिपति होने का दोष नहीं लगता। अर्थात् चन्द्र यदि बलवान् हो तो अपनी भुक्ति में धन मान आदि का देने वाला होता है। यदि चन्द्र अतीव क्षीण तथा पापयुक्त या पापदृष्ट हो तो शिशु अवस्था में महान् अरिष्ट कारक होता है।

5. **सिंह**—सूर्य अष्टमाधिपति बन जाता है। सूर्य को अष्टम का स्वामी होने का दोष नहीं लगता। अर्थात् सूर्य अपनी भुक्ति में धनादि तथा मानादि शुभ का दाता होता है। सूर्य तथा अष्टम भाव पर लाए गए प्रभाव से मृत्यु के कारणों का पता लगाना चाहिए।

6. **कन्या**—बुध अष्टमेश पंचमेश होता है; कम शुभ होता है, क्योंकि अष्टमेश भी होता है। बुध यदि निर्बल हो तो चेतना का नाश होने का रोग होता है। पुत्र द्वारा हानि तथा अपमान होता है। कुमार अवस्था में अरिष्ट होता है, शीघ्र विदेश जाना पड़ता है।

7. **तुला**—शुक्र अष्टमेश तथा तृतीयेश बनता है। यदि बलवान् हो तो बहुत आयु देता है; क्योंकि दोनों आयु के स्थान हैं, जिनका कि यह स्वामी बनता है। शुक्र तथा अष्टम भाव पर पड़ा प्रभाव मृत्यु के कारण का पता बतलाता है। निर्बल शुक्र मित्रों द्वारा अपमानित कराता है।

8. **वृश्चिक**—मंगल अष्टम भाव का तथा अष्टम राशि का स्वामी बनता है। यदि मंगल पर और अष्टम भाव पर भी पाप प्रभाव हो तो पुरुष को अण्डकोषों में रोग होता है। मंगल बलवान हो तो दीर्घ आयु देता है, क्योंकि लग्न तथा अष्टम दोनों आयु स्थान हैं। यदि शनि की दृष्टि मंगल पर हो तथा लग्न पर हो तो मनुष्य से हत्या हो सकती है, क्योंकि अष्टम भाव दूसरों की आयु का भी है और उसका निज (Self) अर्थात् लग्न से घनिष्ठ सम्बन्ध है।

9. **धनु**–गुरु अष्टमेश तथा लाभेश बनता है। यदि गुरु बलवान् हो; परन्तु अष्टम भाव पर पापी ग्रहों का प्रभाव हो तो विदेश द्वारा लाभ होता है। गुरु बलवान् हो तो आयु दीर्घ होती है। गुरु की भुक्ति ज्यादा धन देने वाली नहीं होती।

10. **मकर**–शनि अष्टमेश तथा नवमेश होता है। अष्टमेश होने के कारण अपनी भुक्ति में शनि अति उत्तम फल नहीं देता, यद्यपि फल अच्छा ही होता है; क्योंकि अधिकतर फल नवम भाव का होता है जहां पर शनि की मूल त्रिकोण राशि पड़ती है। शनि यदि बलवान् हो तो दीर्घ आयु देता है; क्योंकि शनि का बलवान् होना जहां आयु स्थानाधिपति का बलवान् होना है वहां आयुष्य कारक का भी बलवान् होना है।

11. **कुम्भ**–शनि सप्तमेश तथा अष्टमेश बनता है। शनि यदि बलवान् हो तो दीर्घायु देता है, क्योंकि आयु स्थान का स्वामी तथा आयुष्य कारक दोनों होता है। स्त्री की वाणी कर्कश होती है। स्त्री द्वारा अपमानित भी हो सकता है; यदि शनि निर्बल हो तो शनि अपनी दशा अन्तर्दशा में धन सम्बन्धी बुरा फल करता है, विशेषतया शुक्र की दशा अन्तर्दशा में; क्योंकि शनि तथा शुक्र दोनों ही कर्क लग्न के शत्रु हैं।

12. **मीन**–गुरु पंचमेश तथा अष्टमेश बनता है। यदि गुरु बलवान् हो तो पुत्र से सुख पाता है। यदि निर्बल हो तो पुत्र से अपमानित होता है। गुरु बलवान् हो तो दीर्घायु होता है, यदि निर्बल हो तो अल्पायु होता है। निर्बल गुरु तथा पापयुक्त पापदृष्ट अष्टम भाव विदेश यात्राएं देता है।

11. नवम भाव

प्रभुकृपा, राज्यभोग, देश में यात्रा, भाग्योदय (आकस्मिक लाभ), पौत्र तथा पुत्र की प्राप्ति, दूसरी पत्नी से पुत्र

1. **धार्मिक जीवन**—जब लग्न अथवा लग्नेश के साथ नवम अथवा नवमेश का घनिष्ठ सम्बन्ध उत्पन्न हो जाता है तो मनुष्य में भाग्य और धर्म दोनों का उत्थान होता है। यदि यह सम्बन्ध चन्द्र लग्न तथा उसके स्वामी और चन्द्र लग्न से नवम भाव और उसके स्वामी के बीच में स्थापित हो जाए तो मनुष्य का जीवन बहुत धर्ममय हो जाता है और यदि मनुष्य का परम सौभाग्य ऐसा हो कि सूर्य लग्न तथा उसके स्वामी का युति अथवा दृष्टि सम्बन्ध, सूर्य लग्न से नवम तथा उसके स्वामी के साथ भी हो जाए तब तो फिर कहना ही क्या है ! मनुष्य ज्ञानियों में श्रेष्ठ जीवन वाला और मुक्ति को प्राप्त करने वाला होता है; चाहे वह गृहस्थी हो अथवा संन्यासी।

लग्न से नवम भाव के स्वामी मंगल को लग्नाधिपति एवं धार्मिक ग्र[illegible] गुरु पूर्ण दृष्टि से देखते हैं। सूर्य लग्न से नवमाधिपति स्वयं सूर्य बनता है जो कि एक आत्मिक एवं सात्विक ग्रह है और शुभ राशि में स्थित होकर पुनः गुरु द्वारा दृष्ट है। चन्द्रलग्न का स्वामी बुध, धर्म स्थान में स्थित है और

चन्द्रलग्न से नवमाधिपति शनि की पूर्ण दृष्टि मन के स्थान चन्द्र तथा चन्द्रलग्न सब पर है, इसके फलस्वरूप धर्म और वैराग्य दोनों की महान् प्राप्ति है, जीवन में मस्ती है और अत्यन्त आनन्द है।

2. **राज्यभोग**–नवम भाव को राज्यकृपा का भाव भी कहते हैं। यदि इस भाव का स्वामी राजकीय ग्रह सूर्य, चन्द्र अथवा गुरु हो और बलवान् भी हो तो राज्य की ओर से उस मनुष्य पर विशेष कृपा होती है। अर्थात् वह मनुष्य राज्य अधिकारी, राज्य सत्ता से सम्पन्न, राजा अथवा राजमन्त्री होता है। जैसे नवमाधिपति सूर्य हो और उस पर चन्द्र तथा गुरु की दृष्टि हो तो मनुष्य बहुत बड़ा राज्याधिकारी, जैसे प्रेसिडेन्ट (President) अथवा मन्त्री आदि होता है।

3. **प्रभुकृपा**–प्रभुकृपा का स्थान भी नवम है। क्योंकि यह धर्म स्थान है और प्रभुकृपा के पात्र धार्मिक व्यक्ति ही हुआ करते हैं। इस भाव का स्वामी बलवान् होकर तथा शुभयुक्त अथवा शुभदृष्ट होकर जिस शुभ भाव में स्थित हो जाता है, मनुष्य को अचानक दैवयोग से, प्रभुकृपा से उस घर द्वारा प्रदर्शित वस्तु की प्राप्ति होती है। जैसे नवामाधिपति बलवान् होकर दशम में हो तो राज्य–प्राप्ति होती है।

4. **राजयोग**–पराशर महर्षि के आदेशानुसार नवम भाव को कुण्डली के सब भावों से श्रेष्ठ तथा शुभ माना गया है। इस भाव के स्वामी का सम्बन्ध चतुष्टय (परस्पर दृष्टि, स्थान व्यत्यय, एकत्र स्थिति, एकतो दृष्टि) यदि दशम भाव के साथ तथा इसके स्वामी के साथ हो तो मनुष्य अतीव भाग्यशाली, धनी, मानी तथा राजयोग को भोगने वाला होता है, क्योंकि दशम केन्द्रों में प्रमुख है और नवम भाव त्रिकोण में प्रमुख है। प्रमुख केन्द्र तथा त्रिकोण के स्वामियों का योग लक्ष्मी तथा पदवी देता ही है, इसमें सन्देह नहीं।

5. **नवम में ग्रहों का फल**–नवम में जब सूर्य बैठे तो सूर्य को पिता की लग्न में बैठा समझना चाहिए। स्पष्ट है कि यदि ऐसी स्थिति में नवम भाव बलवान् होगा तो पिता हर प्रकार से सुखी, धनी, मानी होगा। इसके विपरीत यदि उस नवमस्थ सूर्य पर पापी ग्रहों––शनि, राहु आदि का प्रभाव

हो तो पिता रोगी अल्पायु, निर्धन होगा, और इसी कारण से मनुष्य को पैतृक सम्पति का बहुत थोड़ा सुख प्राप्त होगा। नवम में चन्द्र यदि बलवान् हो तो पिता को धनी आदि बनाता है। नवम में मंगल को निर्बल मानना चाहिए जब तक कि उस पर शुभ प्रभाव न हो। नवम में बुध बली होकर स्थित हो तो उस भाव को उन्नत करेगा, जिसका कि वह स्वामी है। नवम में गुरु अपनी आयु, धन, यश, पुत्र, विद्या, सब बातों के लिए शुभ है। नवम में शुक्र शुभ है, और उस भाव की भी वृद्धि करता है जिसका कि वह स्वामी है। नवम भाव में शनि अपने धर्म से कुछ विरोध देता है। नवम भाव में नीच ग्रह पड़ा हो तो मनुष्य वास्तविक अर्थों से धार्मिक नहीं होता, परन्तु बाहरी आडम्बर से वह धर्मध्वजी (Imposer of Religion) बनता फिरता है।

6. **कालपुरुष**--यदि नवम भाव, उसका स्वामी गुरु तथा धनु राशि-- सब पर पापी ग्रहों का प्रभाव पड़ रहा हो तो मनुष्य के अंग संख्या 9 अर्थात नितम्ब (Hips) अथवा जानुओं में कष्ट तथा रोग होता है।

7. **पुत्र प्राप्ति**-- पुत्र प्राप्ति के विचार से नवम भाव का विशेष सम्बन्ध है, क्योंकि नवम भाव पंचम से पंचम है। यदि नवमाधिपति बलवान् हो और गुरु से दृष्ट हो तो अवश्य पुत्र की प्राप्ति होती है, यद्यपि पंचम भाव, उसका स्वामी तथा पुत्रकारक गुरु सबके सब निर्बल ही क्यों न हों। पुत्र का विचार नवम भाव से भी करना चाहिए। इस बात की पुष्टि में देवकेरल का वचन है : भाग्याधिपदशाकाले भाग्यवृद्धिः सुतोत्सवः।

8. **आकस्मिक लाभ**--यदि राहु अथवा केतु नवम में हों, लग्न में सूर्य अथवा चन्द्र अथवा दोनों स्थित हों, नवम में बुध की राशि मिथुन अथ[illegible] कन्या हो और बुध एकादश अथवा पंचम भाव में अथवा लग्न में शुभयु[illegible] अथवा दृष्ट हो तो अचानक भाग्योदय का योग बनता है। एक तो भाग्य भाव का स्वामी जब फलीभूत होता है, तो थोड़ी-सी आकस्मिक घटना शुभता के क्षेत्र में घटती है। फिर यदि वह भाग्येश बुध हो तो भाग्य का आकस्मिक रूप से फलीभूत होना दृष्टिगोचर होता है, क्योंकि बुध को सद्यः प्रतापी कहा है। पुनः राहु केतु अधिष्ठित राशि का स्वामी होने से बुध अपने अन्दर विशेष

आकस्मिकता रखता है। इन सब बातों के अतिरिक्त चूंकि ये सब घटनाएं केवल लग्न से नवम भाव सम्बन्धी ही नहीं हैं, अपितु सूर्य लग्न तथा चन्द्र से नवम स्थान से भी सम्बन्ध रखती हैं। अतः आकस्मिकता का अंश और अधिक प्रभाव के साथ फलीभूत होगा।

9. **देश में लम्बी यात्रा**– जहां अष्टम भाव विदेश यात्रा का है वहां नवम भाव अपने ही देश में लम्बी यात्रा का है। नवमाधिपति अपनी दशा अन्तर्दशा में निज देश में दीर्घ यात्रा देता है।

10. **पौत्र**– पुत्र का स्थान पंचम है। पुत्र के पुत्र अर्थात् पोते का स्थान नवम है। नवमेश के बलवान् तथा शुभदृष्ट होने पर पोते की प्राप्ति होती है।

11. **दूसरी पत्नी से पुत्र**–दूसरी पत्नी (Second Wife) का विचार नवम भाव से किया जाता है। यदि पहली पत्नी मर चुकी हो और दूसरा विवाह हो चुका हो तो पुत्र प्राप्ति का विचार नवम तथा लग्न द्वारा करना चाहिए। देवकेरलकार ने कहा है:–

भाग्याधिपदशाकाले लग्नाधिपतिभुक्तिषु।
दारान्तरे सुपुत्रप्राप्तिर्राजप्रीतिर्धनागमः।।

अर्थात् यदि नवमेश ग्रह की महादशा हो और लग्न के स्वामी की भुक्ति हो तो दूसरी पत्नी से पुत्र प्राप्ति का योग बनता है। यही योग राज्य की ओर से कृपा तथा धन की प्राप्ति कराने वाला भी है।

नवम भाव में राशियां

1. **मेष**–जब नवम भाव में मेष राशि हो तो मंगल नवमेश तथा चतुर्थेश अर्थात् केन्द्र तथा त्रिकोण का स्वामी बनता है। अतः योगकारक कहलाता है। मंगल जितना अधिक बलवान् होगा, जातक उतना ही अधिक धन, मान

पदवी पाएगा। चतुर्थेश होने से मनुष्य के भाग्य में भूमि होगी। माता का अच्छा सुख होगा, जीवन में उन्नतिशील होगा, राज्य दरबार से सुख तथा मान प्राप्ति करेगा। यदि कुण्डली में कोई ग्रह अतीव निर्बल हो तो वह ग्रह पिता से जिस भाव का स्वामी है पिता को उस भाव संख्या प्रदर्शित अंग में कष्ट देगा, विशेषतया जबकि पिता का वह भाव भी पाप प्रभाव में हो।

2. **वृषभ**—जब नवम भाव में वृषभ राशि हो तो शुक्र नवमेश तथा द्वितीयेश होता है। द्वितीय तथा नवम दोनों शुभ भाव हैं। अतः शुक्र यदि बलवान् हो तो अपनी भुक्ति में खूब धन देगा। बलवान् शुक्र मनुष्य को सुन्दर तथा राज्यमानी बनाता है। यदि शुक्र निर्बल हो तो धन का नाश बहुधा हो, राज्य की ओर से तिरस्कृत हो, साले द्वारा धन का नाश पाए।

3. **मिथुन**—बुध को 'विष्णु' माना गया है। जब बुध नवम भाव का स्वामी हो तो इसमें धार्मिकता, परोपकार, यज्ञीय भावना रूपी वैष्णव गुणों का विशेष समावेश हो जाता है। अतः नवमाधिपति बुध यदि लग्न लग्नेश से सम्बन्ध करे तो व्यक्ति को महान धार्मिक, परोपकारी, स्वार्थरहित बना देता है। यदि नवम भाव में राहु अथवा केतु हो और लग्न में सूर्य तथा चन्द्र हो तो बुध अकस्मात् महान भाग्योदय से चकित करता है। कारण कि बुध एक तो वैसे ही शीघ्र फल करता है और जब राहु अधिष्ठित राशि का स्वामी होगा तो इसमें आकस्मिकता और भी आ जायेगी। और फिर 'भाग्य' का स्वामी होने के नाते भी आकस्मिकता (Suddenness) का कुछ अंश बुध में है और वह सब कुछ समस्त लग्न समूह (लग्न, सूर्य तथा चन्द्र) से नवमाधिपति के रूप में हुआ है, अतः बलवान् रूप में घटेगा। यदि बुध तथा नवम भाव पापयुक्त पापदृष्ट हों तो जहां भाग्य में अचानक हानि हो जाती है वहां माता के बड़े बहिन-भाइयों की आयु को भी हानि पहुंचती है, क्योंकि नवम भाव द्वितीय भाव का आयु स्थान है और द्वितीय भाव माता के बड़े भाई-बहनों का है।

4. **कर्क**—जब नवम में कर्क राशि हो तो चन्द्र नवमाधिपति होने के कारण तथा एक राजकीय (राज्ञी) ग्रह होने के कारण बलवान् हो तो विशेष राज्य कृपा का पात्र बनता है। चन्द्र नीच का भी लग्न में हो, परन्तु क्षीण

न हो तथा पापयुक्त पापदृष्ट न हो तो मनुष्य को धार्मिक बनाता है, क्योंकि नवमेश (और वह भी मन–चन्द्र) का लग्न से सम्पर्क स्थापित करना धर्म का निज (Self) से सम्बन्ध स्थापित करना है। यदि चन्द्र बलवान् हो तो पत्नी (अथवा पति) की छोटी बहनों की संख्या अच्छी होती है।

5. **सिंह**–जब नवम में सिंह राशि हो तो सूर्य नवमाधिपति होता है जिसका अर्थ यह है कि व्यक्ति के भाग्य में राज्य हो सकता है, शर्त इतनी है कि सूर्य बलवान् हो तो पत्नी (अथवा पति) के छोटे भाई होते हैं। धनु राशि में सूर्य मनुष्य को सात्विक तथा धार्मिक बनाता है, क्योंकि सूर्य सात्विक ग्रह धर्म (सात्विक भाव) का स्वामी बनता है और लग्न में स्थित होता है।

6. **जब नवम में कन्या राशि हो** तो बुध नवमेश तथा षष्टेश बनता है। इसमें शुभता ही शेष रहती है, यद्यपि षष्ठ भाव अच्छा नहीं। भाग्य का सम्बन्ध गैर हिन्दू जातियों तथा देशों से हो जाता है, आय की तथा व्यवसाय की उन्नति का सम्बन्ध मामा से हो जाता है। बुध यदि लग्न में हो तो विशेष धार्मिक होता है, पर पापदृष्ट अथवा पापयुक्त नहीं होना चाहिए। बलवान् बुध आकस्मिक रूप से भाग्य में वृद्धि कर देता है, विशेषतया जब नवम भाव में राहु अथवा केतु हो।

7. **जब नवम में तुला राशि हो** तो शुक्र चतुर्थ केन्द्र तथा नवम त्रिकोण का स्वामी होता है। अतः उत्तम राजयोग का फल करता है। यदि निर्बल हो तो कभी-कभी अचानक भाग्यहीनता से दुःख देता है। बलवान् शुक्र तथा चतुर्थ भाव यदि गुरु से युक्त अथवा दृष्ट हो तो भूमि-सम्पत्ति वाला, मोटर गाड़ियों, बंगले, जायदाद वाला सुखी व्यक्ति होता है और जनता का प्रिय होता है। बलवान् शुक्र पत्नी की छोटी बहिनों की वृद्धि करता है।

8 **जब नवम में वृश्चिक राशि हो** तो मंगल नवमेश तथा धनेश बनता है। बहुत शुभ फल करता है, यदि बलवान् हो। भाग्य मे धन होता है। यह व्यक्ति धार्मिक वाणी बोलता है। इसके छोटे साले होते हैं। मंगल तथा गुरु का सम्बन्ध चतुष्टय हो तो विशेष धार्मिक होता है।

9. **जब नवममें धनु राशि हो** तो गुरु नवमाधिपति तथा द्वादशाधिपति बन जाता है। अतः धन आदि के विषय में शुभ फल देता है। इस व्यक्ति का व्यय धार्मिक कृत्यों पर होता है। बलवान् गुरु न केवल उसकी पत्नी के छोटे भाइयों की संख्या में वृद्धि करता है, बल्कि पुत्र भी देता है। लग्न में मेष का गुरु धार्मिक बनाता है।

10. **जब नवम में मकर राशि हो** तो शनि नवम तथा दशम का स्वामी हो जाता है। यदि शनि साधारण बलवान् हो तो साधारण पिता के घर जन्म पाता है। अर्थात् पिता धनी नहीं होता। यदि शनि गुरु आदि शुभ ग्रहों के प्रभाव में न हो तो पिता कर्कश वाणी बोलने वाला होता है। इस व्यक्ति का भाग्य धीरे-धीरे उदय होता है। परन्तु शनि केन्द्र तथा त्रिकोण का स्वामी होता है। अतः शनि अपनी भुक्ति में धन, पदवी आदि शुभ वस्तुओं की प्राप्ति करवाता है।

11. **जब नवम में कुम्भ राशि हो** तो शनि नवम तथा अष्टम भावों का स्वामी होता है। अतः मिश्रित फल देता है। सर्वथा शुभ नहीं होता। यदि बलवान् हो तो शनि दीर्घ आयु तथा भाग्य वृद्धि देता है, विदेश से धन लाभ कराता है। यदि शनि निर्बल हो तो अचानक मृत्यु भय उपस्थित हो जाता है।

12. **जब नवम में मीन राशि हो** तो गुरु षष्ठेश और नवमेश बनता है। अपनी भुक्ति में कुछ शुभ ही होता है, क्योंकि षष्ठ स्थान इतना अनिष्टकारी नहीं जितना नवम शुभ है। यदि गुरु निर्बल हो तो शत्रुओं द्वारा भाग्य की हानि होती है। गुरु यदि द्वितीय स्थान में हो तो धार्मिक विषयों पर सभा, मन्दिर आदि में उपदेश देने वाला होता है।

12. दशम भाव

ऊंचाई अर्थात् उन्नति, तीर्थलाभ, साम्राज्य योग व्यवसाय, अवनति तथा अपयश के भी अवसर

1. दशम में ग्रह–दशम भाव में विविध ग्रहों का फल देवकेरलकार ने निम्नलिखित प्रकार से कहा है–

सिद्धारम्भः कर्मणी चन्द्रलग्नात्,
भानौ भौमे साहसी पापबुद्धिः ।
विद्वान् सौम्ये वाक्पतौ राजतुल्यः,
शुक्रे भोगी भानुजे शोकतप्तः ।।

(क) यदि चन्द्र से (अथवा लग्न से) दशम स्थान में सूर्य हो तो कर्मों में सिद्धि को पाता है, अर्थात् उसके कार्य सफल होते हैं । यदि वहां मंगल हो तो पाप बुद्धि तथा साहसी (लग्न तथा चतुर्थ मन पर प्रभाव के कारण) होता है । यदि वहां बुध हो तो विद्वान् होता है । (बुध की प्रबलता तथा लग्न पर प्रभाद के कारण) । यदि उस दशम स्थान में गुरु स्थित हो तो राजा के तुल्य प्रताप वाला होता है । (गुरु राज्य कृपा कारक होने के कारण तथा दशम भाव को बल प्राप्त होने के कारण) । यदि वहां शुक्र हो तो भोगी होता है । (एक भोगी ग्रह का मन तथा लग्न पर प्रभाव के कारण) । और शनि

के दशमस्थ होने पर शोक और दुःख को पाता है; क्योंकि फल से अन्तिम जिसका कि दशम भाव द्योतक है, उसकी जुदाई हो जाती है–(शनि के एक पृथकताजनक ग्रह होने के कारण)।

(ख) यदि दशम स्थान में सूर्य बलवान् होकर शुभदृष्ट, शुभयुक्त हो तो मनुष्य प्रतापी, राज्यमानी, बड़ा अधिकारी होता है। यदि इस स्थान में निर्बल चन्द्र हो तो सबसे बड़े पुत्र के जीवन को भय होता है। मंगल इस भाव मे स्थित होकर सन्तान की हानि करता है। बुध दशम में कुम्भ राशि का प्रचुर संख्या में लड़कियां देता है। दशम में गुरु धनी सुखी बनाता है। दशम में शुक्र प्रायः निर्बल होता है। दशम में शनि यदि मिथुन राशि का हो तो बहुत लड़कियां देता है। दशम में शनि कर्म फल की हानि करता है; अर्थात् मनुष्य चाहे कितना भी परिश्रम करे और आरम्भ में चाहे उसे कितनी ही सफलता प्राप्त क्यों न हो, अन्त में उसे पराजय होती है और उसका किया हुआ सब मटियामेट हो जाता है। मिथुन का मंगल दशम में पिता के धन की हानि करता है।

(ग) केन्द्रों में प्रमुख केन्द्र दशम स्थान है। नियम है कि ग्रह केन्द्र स्थान में बली हो जाते हैं और बली होने का अर्थ यह है कि जिस भाव के स्वामी होकर ग्रह दशम में स्थित हों उस भाव की आयु, संख्या में वृद्धि होती है, जैसे पंचमेश गुरु दशम में पुत्रों की संख्या में वृद्धि तथा पुत्रों की आयु को बढ़ाता है। पंचमेश शनि दशम में लड़कियों की संख्या को अधिक करता है तथा उनकी आयु को बढ़ाता है।

दशम में गुरु आयु को बढ़ाता है; क्योंकि यह लग्न से केन्द्र में होने के कारण लग्न को बली करता है और लग्न से आयु का विचार किया ही जाता है।

2. **केन्द्राधिपत्यदोष**–मिथुन तथा धनु लग्न वालों को गुरु तथा बुध के एक साथ दो केन्द्रों, सप्तम तथा दशम का स्वामी होने के कारण केन्द्राधिपत्य दोष प्राप्त होता है। अर्थात् ये ग्रह निर्बल होकर अपनी दशा अन्तर्दशा में बीमारी देते हैं।

3. **दशम में राहु**–कुम्भ लग्न के दशम भाव में राहु की स्थिति के सम्बन्ध में देवकेरलकार पृष्ठ 50 पर लिखता है–

कर्मे राहौ प्रजातो यः विपद्दाये सुयात्रवान् ।
पुण्यतीर्थफलं सिद्धं गंगास्नानफलं स्मृतम् ।।

अर्थात् कर्म भाव में जब राहु स्थित हो तो मनुष्य को विपत दशा (जन्म से तीसरी दशा) में पुण्यतीर्थ पर अथवा गंगा आदि में स्नान का अवसर तथा फल मिलता है । राहु एक छाया ग्रह होने के नाते अपना कोई स्वतन्त्र फल तो करता नहीं है, वह उसी भाव का फल करेगा, जिसमें कि वह स्थित है । चूंकि राहु दशम में स्थित है, अतः गंगा स्नान आदि शुभ कर्मों का दशम भाव से सम्बन्ध प्रमाणित होता है । दशम भाव की बातों का विशद विवरण देते हुए उत्तरकालामतृ[1] खण्ड पांच श्लोक 18 में भी आया है:–

"दासत्वम् कृषिवैद्यकीर्तिनिधिनिक्षेपाश्च यज्ञादयः ।"

अर्थात् दशम भाव से ज्योतिषी सेवा, कृषि, वैद्य, कीर्ति, निधि अथवा खजाने का रखा जाना तथा यज्ञ आदि शुभ कर्मों का विचार करें, जिससे भी स्पष्ट होता है कि दशम भाव वास्तव में शुभ कर्मों का है न कि आजीविका से सम्बन्धित कर्मों का ।

4. **साम्राज्य योग**–दशम भावाधिपति आदि की प्रबलता के कारण शास्त्रों में अखण्ड साम्राज्य प्राप्ति योग का वर्णन मिलता है । देवकेरलकार का कहना है कि:–

"लाभेशकर्मेशधनेश्वराणाम्,एकोऽपिचन्द्रग्रहकेन्द्रवर्ती ।
स्व पुत्र लाभाधिपतिर्गुरुश्च अखण्डसाम्राज्यपतित्वमेति ।।"

अर्थात् लाभ, दशम तथा द्वितीय भावों के स्वामियों में से एक भी ग्रह यदि चन्द्रमा से केन्द्र में बैठ जाए और साथ ही साथ गुरु भी द्वितीय तथा पंचम भाव का स्वामी होता हुआ अथवा द्वितीय तथा लाभ भाव का स्वामी होता

1. 'उत्तरकालामृत' फलित का अनुपम ग्रंथ है । इसका अध्ययन उपयोगी है । पाठकों को कई बातें अचरजपूर्ण लगेंगी ।

हुआ उसी प्रकार चन्द्रमा से केन्द्र में स्थित हो जावे तो अखण्ड साम्राज्य की प्राप्ति करवाता है। इस योग की महत्त्वपूर्ण शुभता के निम्नलिखित कारण हैः—

(क) लग्नेश, कर्मेश तथा लाभेश में से प्रत्येक किसी न किसी रूप में शासन, पदवी, महान पद की प्राप्ति को दर्शाता है। अतः ऐसे शासन द्योतक ग्रहों का चन्द्र लग्न से केन्द्र में बैठना शासन की प्राप्ति का सूचक होगा।

(ख) गुरु स्वतन्त्र रूप से राज्यकृपा (Governmental Favour) [illegible] ग्रह है। जब यह ग्रह द्वितीय, पंचम, एकादश आदि शुभ राज्यद्योतक भावों का स्वामी होकर बलवान् होगा (चन्द्र से केन्द्र में स्थित होने के कारण) तो वह भी राज्यकृपा का पात्र अर्थात् राज्याधिकारी हो जावेगा।

5. मान— राज्य की भांति मान भी ऊंचाई का द्योतक है। जब लग्न, लग्नेश, दशम दशमेश बलवान् हों तो मनुष्य मान प्राप्ति करता है तथा ख्याति और यश पाने वाला होता है।

6. **ऊंचाई का अर्थ**—लग्न सूर्य का उदय स्थान है और सप्तम अस्त स्थान। इसी प्रकार जन्म कुण्डली में चतुर्थ भाव मध्य रात्रि है तो दशम मध्य दिन। मध्य दिन में सूर्य सिर पर रहता है। अतः दशम स्थान ऊंचाई का (Zenith) स्थान है। जब हम ऊंचाई शब्द का प्रयोग करते हैं तो यह शब्द एक प्रतीक (Symbol) के रूप में प्रयुक्त होता है। इस शब्द में प्रत्येक प्रकार की ऊंचाई का समावेश हो जाता है। दशम भाव इसीलिए जहां नभ का द्योतक है (देखिए कु० सं० 23), वहां वह ऊंची पदवी का भी परिचायक है। ऊंची पदवी वाले व्यक्ति, जैसे राजे, नवाब, रईस, राज्यपाल, प्रेसीडेण्ट सभी का विचार दशम भाव से किया जाता है।

चूंकि राज्य (State) की ऊंची पदवी होती है और उसका शासन प्रजा पर चलता है, अतः राज्य (State or Government) सम्बन्धी सब बातों का विचार दशम भाव से करना चाहिए। यदि शनि आदि के प्रभाव में दशम, दशमाधिपति तथा सूर्य हो तो राज्य त्याग (Abdication) का योग बनता है।

यदि दशम भाव, दशमेश तथा सूर्य सभी पर शनि, राहु, द्वादशेश आदि पृथकताजनक ग्रहों का प्रभाव हो तो मनुष्य चाहे राजा के घर भी उत्पन्न हो, उसे राज्य से हाथ धोना पड़ेगा। उदाहरणार्थ कुम्भ लग्न हो, सूर्य तथा मंगल द्वितीय भाव में हों, शनि अष्टम में हो तो राज्य त्याग (Abdication) का योग बनता है, क्योंकि शनि जो कि लग्नेश होने के कारण निज (Self) को दर्शाता है उसका प्रभाव दशम भाव, उसके स्वामी मंगल तथा उसके कारक सूर्य पर पड़ता है और शनि है पृथकता देने वाला ग्रह। अतः निज द्वारा राज्य से पृथक होने का युक्तियुक्त योग बना। (देखिए कु० सं० 25)।
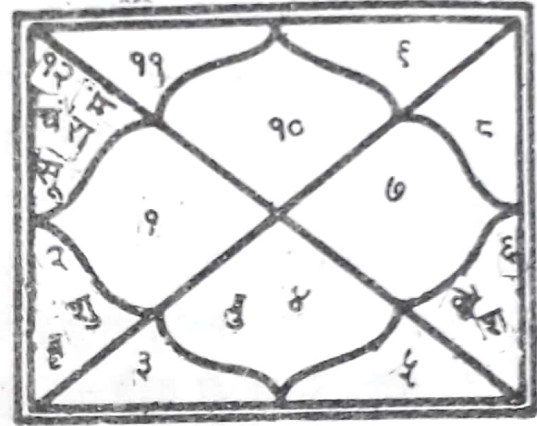
कु० सं० 25

7. **व्यवसाय और दशम भाव**—हम इस अध्याय के आरम्भ में ही इस बात का उल्लेख कर चुके हैं कि दशम भाव शुभ कर्मों का भाव है न कि आजीविका प्राप्ति का ढंग बतलाने वाला भाव। ऐसा होते हुए भी वराह मिहिर आदि आचार्यों ने दशम भाव में स्थित ग्रहों द्वारा आजीविका का निश्चय करने को कहा है। इसका कारण यही प्रतीत होता है कि दशमस्थ ग्रहों की स्थिति लग्न से दशम केन्द्र में होने के कारण उनका प्रभाव लग्न पर पड़ता है और लग्न ही आजीविका बतलाता है। अतः लग्न पर पाए गए प्रभाव द्वारा आजीविका की सिद्धि दशमस्थ ग्रहों द्वारा युक्तियुक्त है।

दशम भाव में राशियां

1. **जब दशम भाव में मेष राशि हो** तो मंगल दशम भाव का स्वामी तथा पंचम भाव का स्वामी बनता है। केन्द्र तथा त्रिकोण का स्वामी होने से मंगल राजयोग कारक ग्रह अर्थात् धन, पदवी आदि शुभता का देने वाला हो जाता है।

यदि मंगल सप्तम भाव में मकर राशि का होकर पड़ जाये और पापदृष्ट न हो तो काहल नाम का शुभ योग बनता है। इस शुभ योग का फल चन्द्र कला नाड़ी के शब्दों में यह है–

योगे तु काहले जातो सचिवो वा चमूपतिः।
द्विपंचाधिकसाहस्रं निष्कमीश्वर भाषितम्।।

अर्थात् काहल योग में उत्पन्न होने वाला मनुष्य मन्त्री अथवा सेनाध्यक्ष होता है और सात हजार रुपये मासिक आय वाला होता है: ऐसा ईश्वर का मत है। मंगल की इस शुभता के कई कारण हैं। एक तो कर्क लग्न वालों के लिए यह मंगल शुभ बनेगा। उनके लिए राजयोग कारक होने से शुभ है; पुनः यह केन्द्र में स्थित है; तीसरे यह उच्च है: और सबसे बढ़कर यह कि मंगल की दृष्टि अपनी राशि मेष पर पड़ेगी, जिसके फलस्वरूप दशम तथा पंचम भाव को और भी अधिक बल प्राप्त होगा। (यो यो भावः स्वामियुतो दृष्टो वा तस्य तस्यास्ति वृद्धिः)। दशम तथा पंचम भाव की ओर मंगल ग्रह की वृद्धि मन्त्री तथा सेनाध्यक्ष बना दे तो आश्चर्य ही क्या है? यह योग बहुत अंशों में सरदार पटेल की कुण्डली में विद्यमान है।

कर्क लग्न में मंगल यद्यपि नीच राशि का होता है तो भी शुभकारी होता है, क्योंकि एक तो राजयोग कारक होता है, दूसरे वह दशम से चतुर्थ पंचम से नवम होने के कारण दोनों भावों के लिए शुभ हो जाता है। वह व्यक्ति पुत्र द्वारा मान पाता है। अपनी मन्त्रणा शक्ति द्वारा भी राज्य तथा यश पाता है।

2. **दशम भाव में वृषभ राशि होने पर** शुक्र केन्द्राधिपति होने से अपनी शुभता खो बैठता है और तृतीयाधिपति होने से पुनः अशुभ फल को देने वाला होता है। शुक्र की युक्ति धन की आय को कम करती है और शनि की दशा में यह युक्ति विशेषकर रोग आदि अशुभ फल को देती है। यदि शुक्र बलवान् हो तो महान व्यक्तियों से मित्रता करने वाला होता है, राजपुरुषों की शुभकामनाएं प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहता है।

3. दशम में मिथुन होने पर बुध, लग्नेश तथा दशमेश होने के कारण बहुत शुभ होता है और अपनी दशा में यदि बलवान् हो तो अचानक राज्यपद की प्राप्ति, धन की प्राप्ति, यश की प्राप्ति आदि देता है, शुभ कर्मों में प्रवृत्त करवाता है। बलवान् शुक्र पिता के धन की शीघ्र वृद्धि करने वाला होता है।

4. दशम में कर्क हो तो दशमाधिपति चन्द्र बनता है। यदि चतुर्थ भाव में मकर राशि का हो तो मन के साथ दशम का विशेष सम्बन्ध उत्पन्न कर देता है तथा 'यो यो भावः स्वामियुतो दृष्टो वा' के सिद्धान्तानुसार राज तथा राजनीति में अधिक रुचि रखने वाला सार्वजनिक कार्यों में भाग लेने वाला मानी यशस्वी तथा राज सत्ता को प्राप्त करता है।

5. दशम में सिंह होने पर सूर्य, दशमेश यदि बलवान् हो तो पिता धनी होता है। व्यक्ति बड़े कामों में हाथ डालता है, विख्यात होता है, कार्यों में सिद्धि प्राप्त करता है।

6. दशम में कन्या राशि होने पर बुध केन्द्राधिपति दोष उत्पन्न करता है और षष्ठ, अष्टम, द्वादश, द्वितीय आदि भावों में निर्बल होकर स्थित होता हुआ अपनी भुक्ति में रोग देता है। बुध यदि बलवान् हो तो राज्य में मान प्राप्ति कराता है। यदि बुध पर सूर्य, शनि राहु आदि की दृष्टि हो तो राज-दरबार से शीघ्र पृथक हो जाता है।

7. दशम में तुला राशि हो तो शुक्र दशम केन्द्र तथा पंचम त्रिकोण का स्वामी होने से अपनी भुक्ति में राजयोग का फल करता है। अर्थात् धन, यश, पदवी, उन्नति आदि शुभ वस्तुओं की प्राप्ति करवाता है। मनुष्य को ज-दरबार से सुख प्राप्त होता है, अपने कर्मों से जनता में प्रिय हो जाता है। यदि शुक्र निर्बल हो तो धन मिलता है, धन का अभाव नहीं होता।

8. दशम में वृश्चिक राशि होने पर मंगल दशमेश होने के कारण अपने नैसर्गिक पापत्व को यद्यपि खो देता है, परन्तु चूंकि तृतीयाधिपति भी होता है, अतः अपनी भुक्ति में अशुभ फल ही करने वाला होता है। यदि

मंगल बलवान् हो तो छोटे भाई तथा मित्रों के कारण मान प्राप्त कराता है। इस राशि में स्थित हुआ शनि बहुत शुभ समझना चाहिए, यद्यपि वह शत्रु राशि में स्थित है। कारण यह है कि शनि लग्नेश है और उसको दो अच्छे बल प्राप्त हो रहे हैं। एक तो प्रमुख केन्द्र (दशम भाव) में स्थित होना और दूसरे शनि का अपनी राशि मकर को देखना। इस दृष्टि के फलस्वरूप लग्न को भी बहुत बल मिलता है। इसीलिए चन्द्रकला नाड़ी के लेखकों का कहना है कि—'गदांशे त्वचरे लग्ने, लग्नेशे कर्मराशिगे, जन्मनः प्रभूति श्रीमान् न कदाचित् दरिद्रकः।' अर्थात् यदि कुम्भ लग्न हो, गदांश हो, लग्नेश शनि दशम भाव में स्थित हो तो मनुष्य जन्म से ही धनवान् होता है और कभी भी गरीबी नहीं देखता।

9. **दशम में धनु राशि होने पर** गुरु केन्द्र त्रिकोण का स्वामी होने से अति शुभ फलदाता होता है। यदि गुरु बलवान् हो तो बहुत यशस्वी, राज्यमानी, परोपकारी, धनी आदि होता है और अपने कृत्यों से यश की प्राप्ति करने वाला होता है।

10. **दशम में मकर हो तो** शनि लाभेश दशमेश बनता है। पराशर मुनि के मत के अनुसार शनि पाप फल को देने वाला होता है:यद्यपिकेन्द्राधिपत्य द्वारा शनि अपना नैसर्गिक पापत्व खो देता है। शनि तथा बुध मिलकर जिस भाव, भावेश को प्रभावित करेंगे उसे रोगी बनायेंगे, क्योंकि बुध षष्ठेश तथा शनि छठे से छठे घर का स्वामी तथा रोग-कारक बनता है।

11. **दशम में कुम्भ राशि होने पर** शनि नवम तथा दशम का स्वामी बनता है। व्यक्ति का पिता प्रायः जबान का कर्कश होता है। परन्तु शनि अपनी भुक्ति में शुभ फल, धन, पदवी, उन्नति, यश आदि देता है: क्योंकि केन्द्र त्रिकोण का स्वामी होने से राजयोग कारक होता है। शनि यदि बलवान् हो तो व्यक्ति भाग्य के कारण राज्य पाता है। अर्थात् इस विषय में उसे आशातीत सफलता प्राप्त होती है।

12. **दशम में मीन होने पर गुरु को केन्द्राधिपत्य दोष होता है।** गुरु यदि षष्ठ, अष्टम, द्वादश, द्वितीय आदि भावों में स्थित होकर निर्बल हो तो महान् रोग देता है। गुरु यदि बलवान् हो तो राज्य देता है; क्योंकि एक तो गुरु राज्यकृपा का कारक है, दूसरे दशम भाव भी राज्य का है। बलवान गुरु यश, राज्य, धन, आयु, परोपकार आदि सद्गुण तथा वस्तुएं प्राप्त करवाता है।

Scanned by CamScanner

13. एकादश भाव

ससुराल से धन प्राप्ति; बड़े भाई की स्थिति;
चोट का योग; हवाई यात्रा; हिंसक प्रवृत्ति;
माता व बहनों से सुख की कमी

1. आय स्थान—एकादश स्थान प्राप्ति का स्थान है। प्राप्ति, आय, आमदनी (Gains) सब पर्यायवाची शब्द हैं। इस एकादश स्थान में यदि कोई ग्रह बैठा हो तो वह वस्तु की प्राप्ति करवा देता है जिस वस्तु का कि वह भावेश होने के कारण प्रतिनिधि है। विशेषतः जब लग्नेश आय स्थान में बैठता है तब प्राप्ति निश्चित होती है; जैसे सूर्य लग्नेश होकर एकादश स्थान में स्थित हो और बलवान् हो तो मनुष्य के जीवन का मुख्य उद्देश्य, जो उसने निर्धारित किया होता है, उसे प्राप्त हो जाता है। ऐसा व्यक्ति मानसिक रूप से भी बड़ा बलवान होता है। मंगल यदि लग्नेश होकर एकादश स्थान में स्थित हो तो मनुष्य में साहस, क्रोध, प्रताप, कार्यशीलता आदि गुण प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। यदि लग्नेश बुध हो और एकादश में बलवान् होकर स्थित हो तो मनुष्य तीव्र बुद्धि, शास्त्रवेत्ता, परोपकारी, यज्ञकर्त्ता होता है। इसी प्र[illegible] गुरु लग्नेश होकर इस भाव में स्थित हो तो मुनष्य धार्मिक नैतिक, शु[illegible] मन्त्रणा वाला, सुखी तथा राज्यमानी होता है। शुक्र लग्नेश होकर एकादश में स्थित हो तो मनुष्य भोग-प्रिय, गाने-बजाने आदि में कुशल होता है। शनि हो तो परिश्रमी, गम्भीर, दर्शन शास्त्र वेत्ता, भूमियुक्त होता है।

2. गोचर में फलों की प्राप्ति–किसी भी भाव के सम्बन्ध में सफलता अथवा प्राप्ति तब कहनी चाहिए जबकि (1) लग्नेश उस राशि में आता है जो भावेश की राशि से अथवा नवांश से त्रिकोण में स्थित है, (2) जब लग्नेश उक्त भाव में आ जाये, (3) जब भावेश उस राशि में से गुजरता है जोकि उस राशि से त्रिकोण में है जिसमें कि लग्नेश स्थित है अथवा जिसके नवांश में लग्नेश स्थित है, (4) जब भावेश लग्न में आवे, (5) जब भावेश और लग्नेश परस्पर युक्त हों अथवा परस्पर देखते हों, (6) जब भाव कारक लग्न तथा चन्द्र लग्न में आ जाये ।

उपरोक्त सिद्धान्तानुसार यदि सप्तमेश तथा शुक्र पुरुष की कुण्डली में एकादश स्थान में स्थित हों तो पत्नी पक्ष (Father in-law side) से धन की प्राप्ति होती है ।

3. बड़ा भाई– एकादश स्थान बड़े भाई का है और गुरु बड़े भाई का कारक है । जब एकादश स्थान में गुरु शत्रु राशि का होकर स्थित हो और उस पर पाप ग्रहों का प्रभाव हो तो मनुष्य का बड़ा भाई नहीं होता अथवा जब गुरु स्वयं एकादश स्थान का स्वामी होकर पापयुक्त अथवा पापदृष्ट हो तो बड़े भाई के जीवन के लिए हानिकारक है । जब कोई पाप ग्रह (मंगल शनि आदि) एकादश भाव का स्वामी होकर पंचम भाव में स्थित हो तो बड़े भाई से वंचित रखता है ।

4. अन्यत्व, रोग, चोट आदि–जैसे कोई ग्रह छठे स्थान में जा पड़े तो हम समझते हैं कि उस ग्रह के साथ छठे घर के दोषों का सम्बन्ध स्थापित हो जाता है और वह ग्रह हिंसात्मक, अन्यत्व परक, रोगात्मक हो जाता है । इसी प्रकार ग्रह एकादश स्थान में स्थित होकर भी षष्ठ स्थान के दोषों को ग्रहण करता है: जैसे अष्टमाधिपति यदि एकादश स्थान में स्थित हो तो मृत्यु चोट से होगी, ऐसा समझ लेना चाहिए । हां, इतना अवश्य है कि मंगल तथा षष्ठेश का सम्बन्ध अष्टम भाव के साथ अवश्य होना चाहिए । इसीलिए जब लाभाधिपति तथा षष्ठाधिपति, दोनों मिलकर अष्टम भाव में

अष्टमाधिपति के साथ बैठे हों तो भी मृत्यु चोट, प्रहार आदि से होती है, क्योंकि लाभाधिपति छठे से छठे घर का स्वामी होने के कारण छठे जैसा ही फल करता है।

5. **बहुत्व (Plenty)**—जिस भाव का स्वामी एकादश स्थान में स्थित हो तो उस सम्बन्धी की आयु तथा संख्या में वृद्धि होती है, जैसे तृतीयाधिपति एकादश में हो तो छोटे भाइयों की आयु तथा संख्या में वृद्धि होती है।

6. **हवाई यात्रा**—जब एकादशेश, सप्तमेश तथा तृतीयेश का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है तो वायुयान द्वारा यात्रा करने के अवसर प्राप्त होते हैं, क्योंकि ये तीनों वायुस्थान हैं।

7. **बायां बाजू**—एकादश भाव बायां बाजू है। लग्नेश से मिलकर लाभेश स्व (Self) का काम करता है। यदि लाभेश तथा लग्नेश शुभ ग्रह होकर, (जैसा कि धनु लग्न में होता है) भाव तथा उसके स्वामी (उदाहरणतया पंचम पंचमेश) को देखें तो पुत्र का विशेष हित अपने हाथों करवाते हैं। इसके विरुद्ध यदि एकादशेश तथा लग्नेश पापी ग्रह हों, जैसा कि मकर लग्न में होता है तो उनकी पंचम, पंचमेश पर दृष्टि से मनुष्य परिवार नियोजन के विचारों वाला होता है और अपने पुरुषार्थ से पुत्र प्राप्ति में बाधा डालता है। इसी प्रकार अन्य भावों पर भी एकादशेश लग्नेश की सम्मिलित दृष्टि का फल समझ लेना।

8. **गृह की मूल्य वृद्धि**—एकादशेश यदि शुभ ग्रह हो तो वह जिस भाव भावेश पर अपना प्रभाव डालेगा उसको मूल्यवान बना देगा और यदि वह शुभ ग्रह धनेश भी हो जावे, जैसे कि कुम्भ लग्न वालों के लिए गुरु और सिंह लग्न वालों के लिए बुध होता है, तब तो ऐसे गुरु अथ[illegible] की किसी भाव भावेश से युति अथवा उस पर दृष्टि उस भाव के मूल्य में अतीव वृद्धि कर देती है। जैसे कुम्भ लग्न हो और गुरु तथा शुक्र दशम स्थान में बैठे हों तो मनुष्य के पास बहुमूल्य कारें, बंगले जायदाद आदि सुख सामग्री होती है।

लग्नेशतत्कारकदृष्टियोगात् एवं वदन्त्यत्र धने बहुत्वम् ।

अर्थात् लाभ भाव के स्वामी तथा उस भाव के कारक गुरु की युति अथवा दृष्टि से वस्तुयें बहुमूल्य हो जाती हैं । चूंकि लग्नेश में भी मूल्य निहित रहता है, अतः यदि गुरु द्वितीय, पंचम अथवा एकादश भाव का स्वामी भी हो और सूर्य तथा चन्द्र अधिष्ठित राशियों का अधिपति भी हो फिर तो गुरु में अधिक उत्कृष्ट मूल्य आ जायेगा और ऐसा गुरु जिसे भी लग्न लग्नेश आदि को देखेगा उसे महान्, उत्तम, ऊंचा, धनी, प्रतिष्ठित तथा उत्कृष्ट मूल्यवान बना देगा ।

9. राज्य का अर्थ–एकादश भाव चूंकि दशम से द्वितीय है । अतः यह राज्य (Gov.) का वित्त विभाग है । इसी प्रकार की कल्पना राज्य के सम्बन्ध में अन्य स्थानों से भी कर लेनी चाहिए । इस बात का प्रयोग राज्य कर्मचारियों के विभाग के निश्चय में होता है । द्वादश स्थान दशम से तृतीय होने के कारण राज्य का बाहु बल (Armed Forces) है । लग्न दशम से चतुर्थ है । अतः यह राज्य गृह विभाग (Home affairs) है । द्वितीय भाव दशम से पंचम है । अतः यह भाव राज्य की विद्या (Education) का है । तृतीय भाव दशम से छठे स्थान में है । अतः यह भाव राज्य के शत्रुओं तथा श्रम विभाग (Labour Ordnance Factories) का है, इत्यादि बातें समझ लेनी चाहिएं ।

10. लग्नाधिपति की दशा–जब लग्नाधिपति की महादशा हो और ऐसे ग्रह की भुक्ति हो जो लाभेश ही की भांति लग्नेश का शत्रु हो तो ऐसी दशा अन्तर्दशा में मनुष्य को बहुत शारीरिक कष्ट होता है । देवकेरल में कर्क लग्न के सम्बन्ध में कहा भी है–'लाभाधिपदशाकाले शनेः भुक्तौ महाविपत् ।' [illegible] लाभाधिपति शुक्र की महादशा में तथा शनि की भुक्ति में महान् विपत्ति [illegible]ा । स्पष्ट है कि शुक्र और शनि दोनों कर्क लग्न के लिए पाराशरीय पद्धति के अनुसार पापी माने गए हैं और दोनों लग्नेश चन्द्र के शत्रु हैं ।

एकादश भाव में राशियां

1. **मेष राशि** हो तो मंगल एकादश तथा षष्ठ स्थान का स्वामी बन जाता है। एक तो करेला, दूसरा नीम चढ़ा। प्रथम तो हिंसा का कारक पुनः हिंसा स्थान षष्ठ तथा षष्ठ से षष्ठ का स्वामी। अतः मंगल में हिंसा कूट-कूट कर भरी होती है। यदि लग्न (मिथुन राशि) में मंगल आये और दृष्टि आदि द्वारा चन्द्र (मन) को भी प्रभावित कर रहा हो तो स्पष्ट है कि वह व्यक्ति को हिंसाप्रिय बनाता है और यदि मंगल (1) भाव, (2) भावेश तथा (3) भावकारक तीनों पर अपना प्रभाव डाल रहा हो तो वह भाव रोगयुक्त विशेषतः चोटयुक्त डाक्टर द्वारा आपरेशन किया हुआ और उस भाव के जीवन की हानि का भी भय होगा। यदि बुध एकादश में मंगल अष्टम में (मकर में) हो तो डाकू लुटेरा होता है।

बड़े भाई के स्थान अर्थात् एकादश भाव में मेष राशि पड़ जाने से बड़े भाई के शरीर का प्रत्येक अंग एक ही भाव तथा राशि से प्रदर्शित होगा: अतः इस कुण्डली में यदि कोई भाव तथा उसका स्वामी, दोनों पीड़ित हों तो बड़े भाई के उस अंग में कष्ट होगा जिसके पीड़ित होने को भाव की संख्या जतलाती है: जैसे पहला भाव सिर, दूसरा मुख, तीसरा सांस की नली, चौथा फेफड़े इत्यादि।

2. **वृष** होने पर शुक्र चतुर्थ केन्द्र का स्वामी होने से अपनी नैसर्गिक शुभता खो देता है और एकादश होने से अशुभ हो जाता है, अपनी भुक्ति तथा शनि की दशा अथवा अपनी दशा और शनि की भुक्ति में रोग [illegible] धन की कमी द्वारा कष्ट देता है। शुक्र यदि बलवान् हो तो वाहन [illegible] होती है। यदि शुक्र राहु के साथ द्वादश में हो तो घर (निवास स्थान) नष्ट हो जाता है, क्योंकि राहु का प्रभाव न केवल शुक्र पर, अपितु चतुर्थ भाव पर (पंचम दृष्टि द्वारा) भी होता है। ऐसा व्यक्ति घर का त्याग करता है अथवा जन्म स्थान से दूर रहता है। बहुत कामातुर होता है।

3. मिथुन होने पर बुध एकादश तथा द्वितीय भावों का स्वामी बन जाता है। दोनों भाव धनदायक हैं, अतः बुध यदि बलवान् हो तो बहुत धन देता है। बुध जिस भावेश के साथ बैठेगा उसे भी धनी बना देगा। यदि सूर्य और बुध इकट्ठे हों और गुरु की उन पर दृष्टि हो तो मनुष्य साहसी, वीर, राज्य-मानी प्रतिष्ठित व्यक्ति होता है: ब्याज आदि से धन पाता है। बुध यदि निर्बल हो तो बड़े भाई अथवा बहिन द्वारा उसके धन का नाश होता है। राहु केतु यदि एकादश अथवा द्वितीय में स्थित हों और बुध भाग्य अथवा पंचम भाव में शुभयुक्त शुभदृष्ट हो तो अपनी भुक्ति में अकस्मात् लाटरी आदि से धन की प्राप्ति करवाता है।

एकादश भाव तथा बुध दोनों पर यदि मंगल आदि क्रूर ग्रहों की दृष्टि हो तो माता की अचानक मृत्यु हो जाने का डर रहता है: क्योंकि एकादश भाव माता के लिए आयु भाव है।

4. कर्क हो तो चन्द्र का एकादशेश होना जतलाता है कि यदि चन्द्र बली हो तो मनुष्य को बहुत धन का लाभ होता है, व्यक्ति की बड़ी बहिनों की संख्या अधिक होती है, क्योंकि एकादश स्थान बड़े भाई-बहनों का है और चन्द्र स्त्री ग्रह है। चन्द्र का एकादशेश होना यह भी बतलाता है कि मनुष्य महत्वाकांक्षी है। हां, चन्द्र बलवान् अवश्य होना चाहिए। निर्बल चन्द्र बड़ी बहिनों का नाश करता है। माता के सुख को भी कम करता है: क्योंकि एकादश भाव माता के (चतुर्थ) भाव से अष्टम होता है।

5. सिंह हो तो सूर्य का लाभाधिपति होना जतलाता है कि यदि सूर्य बलवान् हो तो राज दरबार से विशेष धन की प्राप्ति होगी। बड़ा भाई उन्नत जीवन को पायेगा, माता दीर्घजीवी होगी। यदि सूर्य निर्बल, पापयुक्त, पापदृष्ट [illegible] और गुरु ऐसा ही हो तो बड़े भाइयों की संख्या बहुत कम होती है। [illegible] पेट में रोग रहता है।

6. कन्या हो तो बुध अष्टमेश तथा लग्नेश बनता है। थोड़ा धन देता है। यदि बलवान् हो तो बड़ी बहिनें बहुत होती हैं। यदि निर्बल हो तो धन का शीघ्र नाश होता है। मंगल के साथ मिलकर यह भी चोट पहुंचाने का कार्य करता है।

7. **तुला राशि** होने पर शुक्र एकादशेश तथा षष्ठेश बनता है। दोनों क्षति के स्थान हैं। अतः नैसर्गिक शुभ ग्रह होता हुआ भी अपने योग तथा दृष्टि द्वारा भावों की हानि करता है। जब यह मंगल के साथ मिलकर प्रभाव डाले तो और अधिक अनिष्टकारी तथा हिंसात्मक हो जाता है।

8. **वृश्चिक** हो तो मंगल चतुर्थेश होने से नैसर्गिक पापी नहीं रहता, परन्तु चूंकि एकादश स्थान का स्वामी भी होता है, अतः पुनः अशुभ बन जाता है। मंगल अपनी भुक्ति में अशुभ फल करता है, कम धन देता है। यदि बहुत बलवान् हो तो भूमि का सुख देता है। शनि के साथ मिलकर यदि किसी भाव तथा उसके कारक अथवा किसी भावेश तथा उसके कारक पर युति अथवा दृष्टि द्वारा प्रभाव डाले तो व्यक्ति जान बूझकर उस व्यक्ति आदि के विरुद्ध आचरण करता है; क्योंकि शनि निज (Self) रूप है और मंगल बाहु स्थान का स्वामी होने से निज (Self) का प्रतिनिधि बनता है। जैसे मंगल तथा शनि, दोनों चन्द्र तथा शुक्र पर दृष्टि डालें तो व्यक्ति अपनी पत्नी का विरोधी होगा और उसको मार डालने तक उतारू हो जाएगा, इत्यादि।

9. **धनु** हो तो गुरु एक तो धन कारक होने के कारण = मूल्य (Valu का प्रतिनिधि है। पुनः लाभ (Gains and Aquisition) का स्वामी होने से मूल्यवान् है। पुनश्च धन (Wealth) का स्वामी होने से और भी अधिक मूल्य (Value) को दर्शाता है। स्पष्ट है कि ऐसा गुरु जिस प्रतिनिधित्व को लिए हुए भावेश आदि पर अपनी दृष्टि द्वारा प्रभाव डालेगा उस भावेश को मूल्यवान्, धनवान् ऊंचे स्तर का बना देगा। जैसे गुरु मंगल तथा सूर्य को देखे तो राज्य दे दे; क्योंकि सूर्य राज्य कारक है और मंगल दशमेश (राज्येश) है। इसी प्रकार यदि गुरु चतुर्थ भाव तथा उसके स्वामी शुक्र को देखे तो वाहन युक्त, बहुत भूमि का मालिक अवश्य बना देता है। अतः कुम्भ लग्न वाले इस विषय में अन्य लग्न वालों की अपेक्षा भाग्यशाली होते हैं।

10. मकर राशि होने पर शनि एकादशेश तथा द्वादशेश बनता है। बड़ा भाई वाणी का प्रायः कर्कश होता है, शनि यदि बलवान् हो तो व्यक्ति की बड़ी बहिनें बहुत होती हैं, भूमि से लाभ होता है। यदि शनि निर्बल हो तो बड़े भाई अथवा बहिन द्वारा धन का नाश होता है।

11. कुम्भ राशि हो तो शनि दशम तथा एकादश भाव का स्वामी होता है। अशुभ फल करता है। थोड़ा धन देता है। यदि शनि बलवान् हो तो भाई के लिए कार्य करता है, भूमि पाता है।

12. मीन राशि हो तो गुरु एकादश तथा अष्टम भाव का स्वामी बनता है। यदि एकादश भाव तथा गुरु पर मंगल शनि आदि की दृष्टि हो तो बड़ा भाई नहीं होता। गुरु यदि बलवान् हो तो अन्वेषण द्वारा आविष्कार करता है, बड़े भाइयों के सुख से युक्त होता है, शुभ कार्यों में प्रवृत्त होता है।

14. द्वादश भाव

आंखों तथा पांवों पर प्रभाव: मोक्ष प्राप्ति: खर्च की दशा

1. **दृष्टि हानि**—द्वादश स्थान में सूर्य अथवा चन्द्र का पापयुति अथव पापदृष्टि में स्थित होना आंखों की दृष्टि की हानि का कारण है: क्योंवि द्वादश स्थान बायीं आंख है और सूर्य और चन्द्र ज्योतियां होने से आंख प्रतीक हैं।

इस सिद्धान्त को अन्य सम्बन्धियों में भी लगा सकते हैं। उदाहरणार्थ सूर्य यदि शत्रु राशि के अष्टम स्थान में स्थित हो और शनि, मंगल आदि पापी ग्रहों द्वारा दृष्ट हो तो पिता की आंख जाती रहती है: कारण यह है कि सूर्य पिता के भाव (नवम) से द्वादश में स्थित होकर तथा पाप प्रभाव में होकर पिता की आंख के लिए हानिकारक होगा ही।

2. **शुक्र की द्वादश स्थिति और सहयोग**—(i) शुक्र भोग प्रिय ग्रह है यह ग्रह भोग स्थान, जैसे सप्तम तथा द्वादश में, बहुत प्रसन्न रहता है। अतः यद्यपि साधारण नियम है कि जो ग्रह द्वादश में हो उसकी हानि होती है—यह नियम शुक्र पर सर्वथा लागू नहीं होता। जिन कुण्डलियों में शुक्र द्वादश स्थान में स्थित होता है उनकी स्त्रियों की आयु प्रायः अधिक होती है।

(ii) शुक्र चूंकि भोगात्मक ग्रह है और द्वादश भी; अतः यदि द्वादशेश द्वादश स्थान में हो और शुक्र भी साथ हो तो यह योग महान् भोग सामग्री उत्पन्न करने वाला योग है। अर्थात् इस योग के फलस्वरूप मनुष्य बहुत धनाढ्य तथा सुखी हो जाता है।

शुक्र की द्वादश स्थिति के सम्बन्ध में चन्द्रकला नाडी का कहना है कि—

व्ययस्थानगते काव्ये नीचांशकवर्जिते।
भाग्याधिपेन संदृष्टे निधिप्राप्तिर्न समयः॥

अर्थात् शुक्र द्वादश स्थान में स्थित हो और नवमेश द्वारा दृष्ट हो तो मनुष्य को निधि की प्राप्ति होती है। भाव यह है कि शुक्र की द्वादश भाव में स्थिति शुभ मानी गई है, अशुभ नहीं।

(iii) चूंकि शुक्र का नियम है कि वह जिस भाव आदि में बैठेगा उसको लाभ पहुंचाएगा, अतः यदि लग्न में सूर्य तथा चन्द्र द्वादश हो और शुक्र द्वादश हो तो मनुष्य बड़ा समृद्ध, भोगी, सुखी, मानी आदि होता है।

(iv) उपर्युक्त नियम का अनुसरण करते हुए हम कह सकते हैं कि जब शुक्र से द्वादश में बैठता है तो गुरु को खूब लाभ पहुंचाता है। अब चूंकि गुरु धन तथा सुख का कारक है, अतः यह स्पष्ट है कि वह व्यक्ति बहुत धन की प्राप्ति करता है। जब गुरु की दशा में शुक्र की भुक्ति हो तो इस स्थिति का पूर्ण लाभ होता है।

3. पांव का कटना—काल पुरुष में द्वादश स्थान पांव का है। यदि द्वादश भाव, द्वादशेश, गुरु तथा मीन राशि पर पाप प्रभाव युति अथवा दृष्टि [illegible]ड़ रहा हो तो मनुष्य को पांव में चोट, रोग आदि से कष्ट होता है। यदि यह पाप प्रभाव मंगल का हो और न केवल लग्न से द्वादश द्वादशेश पर हो, बल्कि चन्द्र लग्न तथा सूर्य लग्न से भी द्वादशेश पर हो तो मनुष्य का पांव कट जाता है।

4. जल में डूबकर मृत्यु–द्वादश स्थान जलीय स्थान है। इस भाव के स्वामी तथा चतुर्थ भाव के स्वामी का प्रभाव युति अथवा दृष्टि द्वारा जब अष्टम, अष्टमेश पर हो; अन्य किसी प्रकार का प्रभाव न हो तो मनुष्य की मृत्यु जल में डूबकर होती है; परन्तु इतना ध्यान अवश्य रहे कि जब कोई ग्रह द्वादश स्थान में स्थित हो तो फिर द्वादशेश का फल उस ग्रह के अनुरू[illegible] ही होता है। उदाहरणार्थ द्वादश स्थान में सूर्य तथा मंगल स्थित है [illegible] द्वादशेश स्वक्षेत्री अष्टमेश के साथ अष्टम भाव में स्थित है तो यहां मृ[illegible] जल द्वारा न होकर आग द्वारा होगी।

5. लक्ष धनदायक योग–द्वादशाधिपति की तृतीय, षष्ठ, अष्टम में जब स्थिति हो और उस पर केवल पाप प्रभाव हो, शुभ प्रभाव बिल्कुल न हो तो विपरीत राजयोग नाम के वांछनीय योग की सृष्टि होती है जो बहुत धनदायक योग है और प्रायः लखपतियों की कुण्डलियों में पाया जाता है। (देखिए कु० संख्या 26)।

यह कुण्डली एक करोड़पति की है। यहां बुध दो अभीष्ट भावों[illegible] तृतीय और द्वादश से षष्ठ (दोनों बुरी स्थितियां हैं) में स्थित होकर तृतीय तथा द्वादश भाव को हानि पहुंचा रहा है। बुध भी शत्रु राशि में शनि तथा सूर्य से घिरा हुआ तथा मंगल एवं राहु से दृष्ट है। इस पर किसी शुभ ग्रह की दृष्टि नहीं, अतः यह द्वादश तथा तृतीय भावों का नाश करने वाला

कु० सं० 26

अर्थात् अभाव, दरिद्रता आदि का नाश करने वाला विपरीत राजयोग कारक है।
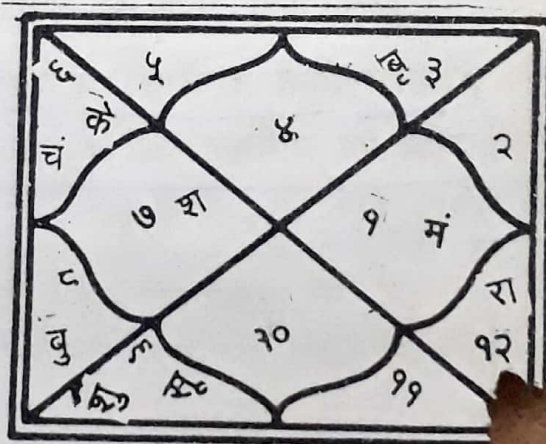
6. पति का अन्यों से प्रेम—यदि स्त्री की कुण्डली हो और उसमें राहु षष्ठेश, एकादशेश का योग द्वादश भाव तथा उसके स्वामी से हो तो स्त्री के भोग-सुख अन्यत्व को प्राप्त होते हैं। अर्थात् उसके पति के साथ भोगने वाली कोई अन्य स्त्री हो जाती है जिसके फलस्वरूप पति अपनी स्त्री के अतिरिक्त दूसरी स्त्रियों से भोग का व्यवहार रखता है।

7. गुणों का अतिव्यय—द्वादश भाव व्यय का है। व्यय में अपव्यय (Wastage) भी सम्मिलित है। अतः यदि सूर्यादि ग्रह द्वादश स्थान में बिना अन्य प्रभाव के पड़े हों तो निज गुणों के अपव्यय को तथा अतिव्यय को दर्शाते होते हैं। जैसे सूर्य हो तो मनुष्य स्वार्थ-त्यागी, दूसरे के हित में लगा हुआ होता है। (सूर्य सात्विक ग्रह है)। चन्द्र हो तो मनस्तत्व का अपव्यय होता है। अर्थात् मनुष्य अधिक भावुक हो जाता है। मंगल अथवा केतु हो तो अपनी शक्ति का शारीरिक बल का दूसरों के लिए अत्यधिक प्रयोग करता है। बुध हो तो जैसा हम पहले लिख चुके हैं बिना पूछे उपदेश करने वाला होता है। यदि गुरु हो तो अपनी सम्पत्ति का दुरुपयोगं करता फिरता है। शुक्र हो तो वीर्य शक्ति का अत्यधिक व्यय करने वाला, आंखों का बहुत प्रयोग करने वाला अर्थात् बहुत किताब का कीड़ा होता है। यदि शनि अथवा राहु हो तो उत्तेजित होने वाला, नसों का अत्यधिक प्रयोग करने वाला होता है।

8. मोक्ष—यदि लग्नों का धर्म स्थानों से सम्बन्ध हो और द्वादश स्थान तथा द्वादशेश पर सात्विक ग्रहों का तथा केतु का प्रभाव हो तो मनुष्य को मोक्ष मिलता है।

द्वादश भाव में राशियां

1. मेष राशि हो तो मंगल द्वादश तथा सप्तम भाव का स्वामी बनता है। दोनों स्थान कामातुरता तथा भोग के हैं। अतः मंगल यदि शुक्र के साथ पंचम भाव में स्थित हो तो व्यक्ति बहुत कामी विषयासक्त होता है। मंगल की शुक्र के साथ सप्तम अथवा द्वादश भाव में स्थिति भी वही फल करती

है। जहां तक धन का सम्बन्ध है मंगल अपनी दशा, अन्तर्दशा में शुभ ही फल करने वाला होगा; (यद्यपि योग कारक नहीं), क्योंकि द्वादशेश सर्वदा अपनी इतर राशि का फल करता है। यहां मंगल सप्तमेश के रूप में फल करेगा। एक नैसर्गिक पापी का केन्द्र का स्वामी होना पाराशरीय नियमानुसार उसे पापहीन बना देता है। अतः शुभ फलकारी है।

2. **वृषभ राशि** हो तब भी शुक्र पंचम भाव का फल करता है; जहां इसकी दूसरी राशि तुला स्थित है। अतः शुक्र अपनी भुक्ति में धन आदि फल देने वाला होगा। शुक्र यदि सप्तम में स्थित हो तो मनुष्य अतीव काम होता है; क्योंकि द्वादश भाव भोग का है, पंचम प्रिया का तथा सप्तम का का। शुक्र निर्बल हो तो पुत्र से हानि पाता है तथा अपने गलत निश्च नुकसान उठाता है।

3. **मिथुन राशि हो** और दो अशुभ घरों, द्वादश तथा तृतीय स्वामी बुध यदि पंचम भाव में स्थित होकर केवल मात्र पाप ग्रहों, शनि द्वारा दृष्ट हो तो विपरीत राजयोग द्वारा लाखों रुपये देने वाला होता बलवान् बुध छोटी बहिनें बहुत देता है। यदि बुध निर्बल हो तो छोटे पर व्यय करवाता है। परन्तु यदि द्वादश भाव तथा बुध, दोनों प की दृष्टि हो तो उत्पन्न सन्तान का शीघ्र नाश होता है।

4. **कर्क राशि होने पर** चन्द्र का द्वादशेश होने का अर्थ यह है कि मनुष्य भोगप्रिय है, विशेषतया तब जबकि चन्द्र का सम्बन्ध लग्न अथवा चतुर्थ भाव अथवा इन भावों के स्वामियों से हो। चन्द्र यदि क्षीण न हो तो प्रत्येक भाव में शुभ फल करता है, क्योंकि जब इसे अष्टम का स्वामी होने का दोष नहीं लगता तो द्वादशेश होने का दोष कैसे लगेगा ? चन्द्र लग्नवत् है; अतः शुभ है।

5. **सिंह राशि होने पर** सूर्य भी यदि बलवान् हो तो द्वा हुआ भी शुभ फल देगा। मनुष्य व्ययशील होगा। यदि सूर्य निर्बल हो तो आंख में कष्ट होगा।

6. **कन्या राशि होने पर** बुध द्वादशेश की इतर राशि नवम स्थान में पड़ रही है। अतः बुध बहुत शुभ फल देने वाला है। यदि निर्बल हो तो पिता द्वारा हानि हो, राज्य की ओर से परेशान हो और भाग्य में हानि हो।

7. **तुला राशि होने पर** शुक्र द्वादशेश तथा सप्तमेश बनता है। दोनों [illegible] स्थान अथवा भोग स्थान हैं। यदि शुक्र द्वादश अथवा सप्तम स्थान में [illegible]र उस पर राहु अधिष्ठित राशि के स्वामी शनि की दृष्टि हो तो मनुष्य [illegible]ित होता हुआ भी दूसरी स्त्रियों से सम्बन्ध स्थापित करता है। शुक्र यदि [illegible]लि हो तो स्त्री पर व्यय करने वाला, राज्य से हानि उठाने वाला होता है।

8. **वृश्चिक राशि होने पर** मंगल द्वादश तथा पंचम भाव का स्वामी [illegible]ता है। द्वादशेश अपनी इतर राशि का फल करता है। अतः मंगल पंचम [illegible]) भाव का शुभ फल करेगा।

9. धनु राशि होने पर गुरु तृतीय भाव का फल करेगा: क्योंकि द्वादशेश [illegible]तर राशि तृतीय स्थान में पड़ती है, गुरु दशा थोड़ा धन देती है। गुरु [illegible]दि बलवान् हो तो छोटे भाइयों से लाभ पाता है, मित्र से भी लाभ उठाता है। शुभ मित्रों वाला होता है।

10. **मकर राशि होने पर** कुम्भ लग्न होता है। कुछ विद्वानों का विचार है कि कुम्भ लग्न इस कारण से नेष्ट है कि शनि लग्न के साथ-साथ द्वादश भाव का भी, जो एक अशुभ भाव है, स्वामी हो जाता है। हम इस [illegible]मत नहीं हैं: क्योंकि द्वितीय तथा द्वादश भाव के स्वामियों के [illegible]र्षि पराशर का सिद्धांत है कि 'स्थानान्तरानुगुण्येन भवेयुः फलदायकाः' अर्थात् द्वितीय तथा द्वादश भाव के स्वामी अपनी इतर राशि का फल करते हैं। ऐसी स्थिति में कुम्भ लग्न वाले के लिए शनि लग्न को शुभ फल देने वाला माना जाएगा।

11. कुम्भ राशि होने पर शनि, चूंकि बड़े भाई की वाणी का प्रतिनिधि बन जाता है, अतः बड़े भाई की वाणी में कर्कशता होगी।

12. मीन राशि होने पर गुरु नवम तथा द्वादश का स्वामी हो जाता है। यदि लग्न से सम्बन्ध करे तो धर्म मन्दिरों तथा धर्म से विशेष सम्बन्ध रखता है। यदि गुरु निर्बल हो तो राज्य से हानि तथा राज-पुरुषों से का नाश पाए। द्वादशेश बृहस्पति पांव का विशेष प्रतिनिधित्व करत यदि द्वादश भाव तथा गुरु पर मंगल आदि का प्रभाव हो तो पांव होता है।

दशा फल नियम

1. ग्रह कब ? कैसे ? कितना ? फल देते हैं इस बात का दशा अन्तर्दशा आदि से किया जाता है।

2. दशा कई प्रकार की हैं, परन्तु सब में शिरोमणि प्रकार की है जिसके निकालने का ढंग अध्याय 'विषय-प्रवेश' में लिख चु

3. इस अध्याय में हम विंशोत्तरी दशा के प्रयोग के कुछ आवश्यक नियमों का उल्लेख करेंगे।

4. सबसे पूर्व कुण्डली में देखिए कि तीनों (लग्न, चन्द्र लग्न, सूर्य लग्न) में कौन-सी दो लग्नों के स्वामी अथवा तीनों ही लग्नों के स्वामी परस्पर मित्र हैं। कुण्डली के शुभ अशुभ ग्रहों का निर्णय बहुमत से नि त लग्नों के आधार पर करना चाहिए। उदाहरणार्थ यदि लग्न कुम्भ और चन्द्र वृश्चिक में है तो ग्रहों के शुभ-अशुभ होने का निर्णय धनु लग्न से किया जाएगा। अर्थात् गुरु, सूर्य, चन्द्र और मं योगकारक होंगे और शुक्र, बुध तथा शनि अनिष्ट फलदायक

5. यदि उपर्युक्त नियमानुसार महादशा का ग्रह शुभ अथवा योग कारक निकलता है तो वह शुभ फल करेगा । इसी प्रकार यदि अन्तर्दशा का ग्रह भी शुभ अथवा योग कारक निकलता है तो फल और भी शुभ निकलेगा ।

6. स्मरण रहे कि अन्तर्दशा के स्वामी का फल दशानाथ की अपेक्षा मुख्य है-- अर्थात् यदि दशानाथ शुभ ग्रह न भी हो, यदि भुक्तिनाथ शुभ [illegible] तो फल शुभ होगा ।

7. यदि भुक्तिनाथ दशानाथ का मित्र हो और दशानाथ से अच्छे भावों [illegible] दूसरे, चतुर्थ, पांचवें, नवम, दशम तथा एकादश) में स्थित हो तो और होत[illegible]भ फल देगा ।

8. यदि दशानाथ निज शुभ स्थान से भी अच्छे स्थान (द्वितीय, चतुर्थ [illegible]) में स्थित है तो और भी शुभ फल करेगा ।

9. परन्तु सबसे अधिक आवश्यक यह है कि शुभ भुक्तिनाथ में इच्छा [illegible]ना चाहिए । यदि शुभ भुक्तिनाथ केन्द्र स्थान में स्थित है, उच्च राशि [illegible]क्षेत्र में स्थित है अथवा मित्र राशि में स्थित है और भाव मध्य में [illegible] पापी ग्रह से युक्त या दृष्ट नहीं, बल्कि शुभ ग्रहों से युक्त अथवा [illegible] वक्र है तथा राशि के बिल्कुल आदि में अथवा बिल्कुल अन्त में स्थित [illegible] और नवांश में निर्बल नहीं तो भुक्तिनाथ जिस शुभ भाव का स्वामी है उसका उत्तम फल करेगा । इसके विरुद्ध ग्रह यदि शुभ भाव का स्वामी है परन्तु छठे, आठवें, बारहवें आदि नेष्ट स्थानों में स्थित है, नीच अथवा शत्रु राशि का है, पापयुक्त अथवा पापदृष्ट है, राशि के आदि अथवा अन्त में है, नवांश में निर्बल है । भाव सन्धि है, अस्त है, अति भारी है, तो शुभ भाव [illegible]ोता हुआ भी बुरा फल करेगा ।

[illegible]ा तीन ग्रह एकत्र हों और उनमें से एक नैसर्गिक पापी तथा अर्थात् द्वितीय [illegible]क शुभ हैं और यदि दशा तथा भुक्ति नैसर्गिक शुभ ग्रहों की हैं । ऐसी स्थि[illegible]ी ग्रह का होगा । उदाहरणार्थ यदि लग्न कर्क हो: मंगल, वाला माना

[illegible]शाफल रहस्य' नामक पुस्तक में सोदाहरण विवरण देखिये ।

शुक्र तथा गुरु एक स्थान में कहीं हों, दशा गुरु की, भुक्ति शुक्र की हो तो फल मंगल का होगा। यह फल अच्छा होगा, क्योंकि मंगल कर्क लग्न वालों के लिए योग कारक होता है।

11. जब दशानाथ तथा भुक्तिनाथ एक ही भाव में स्थित हों तो उस भाव सम्बन्धी घटनाएं देंगे।

12. जब दशानाथ तथा भुक्तिनाथ एक ही भाव को देखते हों त भाव सम्बन्धी घटनाएं देते हैं।

13. जब दशानाथ तथा भुक्ति नाथ परस्पर शत्रु हों और से छठे आठवें स्थित हों और उनमें से भुक्तिनाथ लग्न से भी छ तथा बारहवें स्थित हो तो जीवन में संघर्ष, बाधाएं, विरोध, शत्रुता, स्था आदि अप्रिय घटनाएं घटती हैं।

14. लग्न से दूसरे, चतुर्थ, षष्ठ, आठवें, ग्यारहवें तथा बा के स्वामी अपनी दशा भुक्ति में शारीरिक कष्ट देते हैं। यदि मह इनमें से किसी भाव का स्वामी होकर इन्हीं में से किसी अन स्थित हो तो अपनी महादशा में रोग देने को उद्यत होगा। अब य भी इसी प्रकार इन्हीं भावों में से किसी का स्वामी होकर इन्हीं किसी एक में स्थित हो तो शारीरिक कष्ट कहना चाहिए। ऐसी दश यदि आयु के खण्ड में आ जावे तो मृत्यु हो जाती है। अल्पा वर्ष तक, मध्य आयु खण्ड 64 वर्ष तक, दीर्घ आयु खण्ड 64 से है। इतना स्मरण रहे कि उपर्युक्त ग्रह जितने निर्बल होंगे उत कष्ट होगा।

15. गुरु जब चतुर्थ तथा सप्तम अथवा सप्तम तथ स्वामी हो तो इसमें केन्द्राधिपत्य दोष आता है। ऐसा गुरु य षष्ठ आदि नेष्ट भावों में निर्बल स्थित हो तो अपनी दशा कष्ट देता है।

16. राहु तथा केतु छाया ग्रह हैं । इनका स्वतन्त्र फल नहीं । ये ग्रह यदि द्वितीय, चतुर्थ, पंचम आदि शुभ भावों में स्थित हों और उन भावों के स्वामी भी केन्द्र स्थित तथा शुभ आदि के कारण बलवान् हों तो ये छाया ग्रह अपनी दशा भुक्ति में शुभ फल देते हैं ।

17. राहु अथवा केतु यदि शुभ अथवा योग कारक ग्रहों के प्रभाव में [illegible] वह प्रभाव उन पर चाहे युति द्वारा अथवा दृष्टि द्वारा पड़ रहा हो [illegible] ग्रह अपनी दशा अन्तर्दशा में उन शुभ अथवा योग कारक ग्रहों होत[illegible] करेंगे ।

[illegible] उसक

है: परन्तु

शत्रु राशि

में है, नतांश

[illegible]

अर्थात् द्वितीय

हैं । ऐसी सि

वाला माना शा

Scanned by CamScanner

Scanned by CamScanner